কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়

Krishna Kanta Handiqui State Open University

Master Degree

SELF LEARNING MATERIAL

PG HN S3-03 (DSC)

SEMESTER III

हिंदी नाटक और एकांकी साहित्य

HINDI

PG HN S3-03(DSC)

TWO YEAR MASTER'S DEGREE COURSE

(CBCS in Accordance with NEP 2020)

SEMESTER- III

हिंदी नाटक और एकांकी साहित्य

हिंदी

PadmanathGohainbaruah School of Humanities

KRISHNA KANTA HANDIQUI STATE OPEN UNIVERSITY

विषय विशेषज्ञ

प्रोफेसर दिलीप कुमार मेधी, हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम

प्रोफेसर अमूल्य बर्मन, हिंदी विभाग, कॉटन विश्वविद्यालय(सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष)

प्रोफेसर भूषण पाठक, अध्यक्ष, बी.एस.कॉलेज, हाउली, बरपेटा

पाठ्यक्रम समन्वयक, डॉ.प्रांजल कुमार नाथ, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम, डॉ.उज्जवल डेका बरुवा, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय

एसएलएम् तैयारी टीम

इकाइयाँ	योगदानकर्ताओं के नाम
1–14	डॉ.उज्जवल डेका बरुवा, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय

Editors

Content : प्रांजल कुमार नाथ,सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम
डॉ टिंकू छेत्री, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

Language : डॉ. सतीश कुमार, सहायक अध्यापक, जाकिर हुसैन कॉलेज, दिल्ल विश्वविद्यालय
डॉ. सुरभि चुतिया, सहायक अध्यापिक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

Structure & Format : प्रांजल कुमार नाथ,सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम, डॉ.उज्जवल डेका बरुवा, सहायक अध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय

July, 2025

This Self Learning Material (SLM) of the Krishna Kanta Handiqui State Open University is made available under a Creative Commons Attribution-Non Commercial-Share Alike 4.0 License (international) http://creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0/

Printed and published by Registrar on behalf of the Krishna Kanta Handiqui State Open University.

Headquarters: Patgaon, Rani Gate, Guwahati - 781 017
City Campus: Resham Nagar, Khanapara, Guwahati - 781 006;
www.kkhsou.in

अनुक्रमणिका

		Page No
इकाई 1 :	**नाटक का परिचय** अर्थ, परिभाषा तथा नाटक की रचना प्रक्रिया	9-22
इकाई 2 :	**नाटक के तत्व** हिंदी नाटक के प्रकार, प्रमुख तत्व एवं उनकी विशेषताएँ	23-35
इकाई 3 :	**नाटक और रंगमंच** नाटक में रंगमंच की भूमिका तथा दोनों के मध्य संबंध	36-45
इकाई 4 :	**अंधेर नगरी (भाग-1)** कथावस्तु की समीक्षा तथा वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता	46-56
इकाई 5 :	**अंधेर नगरी (भाग-2)** सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से नाटक में निहित व्यंग्यात्मकता	57-67
इकाई 6 :	**आधे-अधूरे (भाग-1)** कथावस्तु की समीक्षा तथा मध्यमवर्गीय जीवन की त्रासद स्थिति	68-78
इकाई 7 :	**आधे-अधूरे (भाग-2)** नाटक के पात्रों का परिचय	79-89
इकाई 8 :	**एक और द्रोणाचार्य (भाग-1)** कथावस्तु की समीक्षा तथा वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता	90-102
इकाई 9 :	**एक और द्रोणाचार्य (भाग-2)** नाटक का मूल उद्देश्य तथा शिक्षक जीवन की करुण स्थितियों का वर्णन	103-114
इकाई 10:	**आषाढ़ का एक दिन (भाग-1)** कथावस्तु तथा उसकी समीक्षा	115-129
इकाई 11:	**आषाढ़ का एक दिन (भाग-2)** नाटकीय कला की दृष्टि से 'आषाढ़ का एक दिन' की समीक्षा	130-140

इकाई 12 :	**नाटक और एकांकी** दोनों में समानता एवं अंतर	**141-152**
इकाई 13 :	**दीपदान** एकांकीकार रामकुमार वर्मा का परिचय, एकांकी का सारांश एवं समीक्षा	**153-164**
इकाई–14 :	**सूखी डाली** एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क का परिचय, एकांकी का सारांश और समीक्षा	**165-175**

विषय प्रवेश

आपके समक्ष कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय के एम. ए. हिंदी के दो वर्षीय पाठ्यक्रम का तृतीय सेमिस्टर के 'हिंदी नाटक और एकांकी साहित्य' विषय विशिष्ट मुख्य पाठ्यक्रम (DSC) है। इसमें नाटक और एकांकी की साहित्यिक परंपरा, विकास, शिल्प, और समकालीन महत्त्व का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस पत्र में कुल चौदह इकाइयाँ हैं, जिनमें नाटक की सैद्धांतिक समझ से लेकर विशिष्ट नाटकों और एकांकियों का विश्लेषण सम्मिलित है। हिंदी साहित्य के एम.ए. पाठ्यक्रम में नाटक और एकांकी साहित्य का समावेश अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि ये विधाएँ केवल साहित्यिक सौंदर्यबोध ही नहीं, बल्कि समाज और जीवन के गहन यथार्थ को भी अभिव्यक्त करती हैं । हिंदी नाटक की परंपरा का प्रारंभ भारतेंदु हरिश्चंद्र से माना जाता है, जिन्होंने नाटकों के माध्यम से नवजागरण और सामाजिक चेतना को स्वर दिया। 'अंधेर नगरी' और 'भारत दुर्दशा' जैसे नाटकों ने व्यंग्य और प्रतीकों के माध्यम से समय की विसंगतियों को उजागर किया। प्रसाद के नाटकों में ऐतिहासिकता, दर्शन और मानवतावाद का संगम मिलता है, जबकि मोहन राकेश, धर्मवीर भारती जैसे नाटककारों ने मध्यवर्गीय जीवन, अस्तित्ववाद और आधुनिक मनोविज्ञान को स्वर दिया। एकांकी विधा हिंदी साहित्य में 20वीं सदी के उत्तरार्ध में तेजी से विकसित हुई। यह विधा सीमित समय, स्थान और पात्रों के माध्यम से तीव्र प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम है। एकांकीकारों ने समाज की विसंगतियों, मनुष्य की अंतर्दृष्टि और विचारधारात्मक टकराव को अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। अज्ञेय, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, माणिक वर्मा और परसाई जैसे लेखकों ने एकांकी को विविध आयाम प्रदान किए।

इस अध्ययन के माध्यम से विद्यार्थी न केवल साहित्यिक मूल्य और सृजनात्मकता को समझते हैं, बल्कि वे विभिन्न दृष्टिकोणों–स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, अस्तित्ववाद, उत्तरआधुनिकता आदि–के आलोक में नाटक और एकांकी की पुनर्व्याख्या करना सीखते हैं। यह विषय उन्हें एक शोधपरक, विश्लेषणात्मक और बौद्धिक दृष्टिकोण से संपन्न बनाता है, जो उच्चतर अध्ययन एवं शोध के लिए आधार प्रदान करता है। प्रत्येक इकाई में 'अपनी प्रगति जांचें' शीर्षक से कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न को अभ्यास प्रश्न के अतिरिक्त शामिल किया गया है और प्रत्येक प्रश्न के उत्तर का रूपरेखा 'प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)' शीर्षक से सारांश के बाद प्रस्तुत किया गया है। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों में नए–नए प्रश्न और उन प्रश्नों के समाधान के लिए आत्मविश्वास पैदा करना है तथा प्रत्येक इकाई में बॉक्स के अंदर 'महत्वपूर्ण बिंदु' शीर्षक से कुछ तथ्यों को सम्मिलित किया गया है। इससे विद्यार्थी इकाई के महत्वपूर्ण तथ्यों से आसानी से परिचय प्राप्त कर सकेंगे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक इकाई के अंत में 'अधिक जानने के लिए पढ़ें' शीर्षक से कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों की सूची दी गयी हैं, जो प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अत्यावश्यक है। विषय की गहरी जानकारी के

लिए सभी पुस्तकें महत्वपूर्ण हैं।

इकाई 1 – नाटक का परिचय : अर्थ, परिभाषा तथा नाटक की रचना प्रक्रिया

प्रस्तुत इकाई में नाटक की मूल संकल्पना और परिभाषाओं का अध्ययन क्या गया है। विद्यार्थी जानेंगे कि नाटक जीवन की घटनाओं, भावनाओं और संघर्षों को संवादों और पात्रों के माध्यम से कैसे अभिव्यक्त करता है। इसमें नाटक की रचना प्रक्रिया और उसकी विधाओं की विशेषताएँ समझाई गई हैं। यह इकाई नाट्यकला की नींव को स्पष्ट करती है। विद्यार्थी साहित्यिक दृष्टि का विस्तार और नाट्यकला की संरचना को जानेंगे।

इकाई 2 – नाटक के तत्व : हिंदी नाटक – प्रकार, प्रमुख तत्व एवं उनकी विशेषताएँ

यह इकाई नाटक के आवश्यक तत्व—संवाद, कथानक, पात्र, भाव, दृश्य और समय—का विवेचन करती है। विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के हिंदी नाटकों जैसे ऐतिहासिक, सामाजिक, प्रतीकात्मक और यथार्थवादी नाटकों की विशेषताओं से परिचित होंगे। यह इकाई नाटक की संरचना और सौंदर्यबोध की गहराई को उजागर करती है। इसके साथ हीइस इकाई से नाट्यसाहित्य की तकनीकी समझ और विश्लेषणात्मक क्षमता विकसित होगी।

इकाई 3 – नाटक और रंगमंच : नाटक में रंगमंच की भूमिका तथा दोनों के मध्य संबंध

रंगमंच नाटक को सजीव बनाने का प्रमुख माध्यम है। अभिनय, संगीत, प्रकाश और मंच-सज्जा के तत्व नाटकीय भावनाओं के संप्रेषण को सक्षम बनाते हैं। विद्यार्थी समझेंगे कि नाटक और रंगमंच के मध्य घनिष्ठ संबंध होता है। यह इकाई नाट्यकला की व्यावहारिक समझ और प्रस्तुति कौशल को विकसित करता है।

इकाई 4 – अंधेर नगरी (भाग-1) : कथावस्तु की समीक्षा तथा वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता

इस इकाई में भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाटक अंधेर नगरी की कथा, उद्देश्य और व्यंग्यात्मकता का विश्लेषण किया गया है। यह नाटक सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियों पर करारा प्रहार करता है, साथ ही वर्तमान संदर्भ में भी इसके संदेश प्रासंगिक हैं। साथ ही यह इकाई नाटक की सामाजिक उपयोगिता और सुधारात्मक दृष्टि को स्पष्ट करती है।

इकाई 5 – अंधेर नगरी (भाग-2): सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से नाटक में निहित व्यंग्यात्मकता

'प्रस्तुत' इकाई में नाटक के व्यंग्य, प्रतीकात्मक अर्थ और राजनैतिक संदेश का विवेचन है। हास्य-व्यंग्य जन-जागरण और राजनीतिक चेतना का माध्यम बनता है। यह इकाई नाटक की सामाजिक उपयोगिता और व्यंग्य की प्रभावशीलता को उजागर करती है। नाटक के माध्यम से सत्ता और मूर्खता की आलोचना पर बल दिया गया है।

इकाई 6 – आधे-अधूरे (भाग-1): कथावस्तु की समीक्षा तथा मध्यमवर्गीय जीवन की त्रासद स्थिति

इस इकाई में मोहन राकेश के इस नाटक में मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबनाएँ और पारिवारिक असंतोष चित्रित हैं। विद्यार्थी अनुभव करेंगे कि नाटक जीवन संघर्ष और अस्तित्व-संकट को उजागर करता

है। यह विश्लेषण आधुनिक यथार्थवादी दृष्टि और पात्रों की मानसिक जटिलताओं को समझने में सहायक है।

इकाई 7 – आधे-अधूरे (भाग-2): नाटक के पात्रों का परिचय

इस अध्ययन में आधे-अधूरे के पात्र—सवित्री, महेन्द्र, अशोक, बिन्नी और किन्नी—आधुनिक समाज की टूटन और आत्मविरोध का प्रतिनिधित्व करते हैं। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पात्रों के माध्यम से जीवन की समस्याएँ और मनोवैज्ञानिक पक्ष उजागर होते हैं। नाटक का विश्लेषण समाज और व्यक्तित्व पर इसके प्रभाव को समझने में मदद करता है।

इकाई 8 – एक और द्रोणाचार्य (भाग-1): कथावस्तु की समीक्षा तथा वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता

प्रस्तुत इकाई में लक्ष्मीनारायण लाल का यह नाटक शिक्षा प्रणाली और मूल्यबोध के नैतिक संकटों को सामने लाता है। विद्यार्थी देखेंगे कि यह रचना शिक्षण-संस्कारों पर गंभीर प्रश्न उठाती है। अध्ययन समाज और शिक्षा के संबंध को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है।

इकाई 9 – एक और द्रोणाचार्य (भाग-2): नाटक का मूल उद्देश्य तथा शिक्षक जीवन की करुण स्थितियों का वर्णन

नाटक में शिक्षक वर्ग की सामाजिक स्थिति और मानसिक व्यथा का चित्रण है। विद्यार्थी अनुभव करेंगे कि यह रचना संवेदनशीलता और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना विकसित करती है। यह इकाई शिक्षक जीवन की जटिलताओं और नैतिक प्रश्नों पर प्रकाश डालता है।

इकाई 10 – आषाढ़ का एक दिन (भाग-1): कथावस्तु तथा उसकी समीक्षा

मोहन राकेश का यह नाटक प्रेम, त्याग और जीवन की जटिलताओं को कालिदास और मालविका के संबंधों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। विद्यार्थी आधुनिक हिंदी नाटक के मानवीय पक्ष और भावनात्मक तत्वों को समझेंगे। अध्ययन नाटक के दार्शनिक और नैतिक संदेश को स्पष्ट करता है।

इकाई 11 – आषाढ़ का एक दिन (भाग-2): नाटकीय कला की दृष्टि से समीक्षा

नाटक के शिल्प, संवाद, प्रतीक और मंच-निर्देशन का विश्लेषण दर्शाता है कि यह रचना नाट्यकला को नई दिशा देती है। इस इकाई से मोहन राकेश के नाट्य-दर्शन और प्रस्तुति तकनीक को समझेंगे। अध्ययन से नाटकीय कला की गहन समझ और प्रस्तुति कौशल विकसित होते हैं।

इकाई 12 –नाटक और एकांकी : दोनों में समानता एवं अंतर

इस इकाई में दोनों विधाओं के स्वरूप, उद्देश्य और तकनीकी भिन्नताओं पर चर्चा की गई है। विद्यार्थी जानेंगे कि नाटक बहु-अंकीय और विस्तृत होता है, जबकि एकांकी सीमित पर प्रभावशाली अभिव्यक्ति का माध्यम है। यह खड दोनों विधाओं के संतुलित अध्ययन में सहायक है।

इकाई 13 – दीपदान : एकांकीकार रामकुमार वर्मा का परिचय, एकांकी का सारांश एवं समीक्षा

इकाई के अंतर्गत रामकुमार वर्मा के जीवन और लेखन शैली का परिचय देते हुए इस एकांकी की

कथा और भावों का विवेचन किया गया है। विद्यार्थी मानवीय संवेदना, त्याग और सामाजिक संदेश को समझेंगे। इकाई में वर्मा के रचनात्मक योगदान और एकांकी साहित्य में उनके स्थान की पहचान कराता है।

इकाई 14 – सूखी डाली : एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क का परिचय, एकांकी का सारांश और समीक्षा

उपेंद्रनाथ अश्क की यह रचना जीवन संघर्ष, अकेलेपन और आशा–निराशा के द्वंद्व को प्रस्तुत करती है। विद्यार्थी देखेंगे कि यह एकांकी साहित्य के सामाजिक पक्ष और पाठक की संवेदनशीलता को बढ़ाती है। अध्ययन भावात्मक और सामाजिक दृष्टि दोनों से उपयोगी है।

इकाई 1 नाटक का परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नाट्य शब्द का अर्थ

1.4 नाट्य साहित्य का उद्भव

1.5 नाट्य का विकास

1.6 हिंदी नाटकों का इतिहास

1.7 हिन्दी नाटकः विकास क्रम

1.8 नवनाट्य लेखन/ समकालीन नाटक

1.9 सारांश

1.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

1.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1.12 अभ्यास प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

हिन्दी का नाट्य साहित्य संस्कृत से समृद्ध है, क्योंकि भारत में रंगमंच और नाटक का विकास ईसा से सैकड़ों वर्ष पूर्व हो चुका था। कुछ विद्वानों का मानना हैं कि नाटक की उत्पत्ति में यूनान का योगदान महत्त्वपूर्ण है। लेकिन यह वास्तव में एक भ्रांति है। दूसरी ओर नाटक की उत्पत्ति में भारतीय परिवेश का मुख्य योगदान है। ईसा से लगभग 400-500 वर्ष पूर्व की अनेक कृतियों, जैसे वाल्मीकि कृत ''रामायण'',पाणिनि कृत ''अष्टाध्यायी'' तथा बौद्ध-जैन ग्रंथों में अभिनेताओं, रंगकर्मियों और नर्तकों के नामों का उल्लेख मिलता है। परवर्ती युग में यह नाटक परंपरा लगभग लुप्त हो गई थी। वर्तमान में उपलब्ध नाट्यशास्त्र सर्वप्राचीनतम भरत का नाट्य शास्त्र है, जो संगीत, नृत्य और नाटक पर एक ग्रंथ है। विद्वानों का मानना हैं कि आधुनिक हिन्दी साहित्य का परिवर्तन नाटक रचना से आरंभ हुआ, जिसके कुछ अंश भारतेन्दु युग के पूर्व की कुछ रचनाओं में भी देखने को मिलते है। हिंदी से पूर्व संस्कृत और प्राकृत में समृद्धि

नाट्य परंपरा विद्यमान थी, परंतु हिंदी नाटकों का विकास आधुनिक युग से ही संभव हुआ है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- नाटक का 'अर्थ' एवं नाटक शब्द की 'उत्पत्ति' के बारे में जानेंगे।
- इस इकाई को पढ़ कर आप नाटक के उद्भव एवं विकास के बारे में जान पाएंगे।
- नाटक में प्रयुक्त प्रतीकों, बिंबों और नाटकीय संरचना के सौंदर्यशास्त्रीय पक्षों के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- इस अध्याय को पढ़ कर आप भारतीय नाटक एवं पाश्चात्य नाटक बारे में जान पाएंगे।

1.3 नाट्य शब्द का अर्थ

नाटक शब्द ग्रीक शब्द ''ड्रामा'' से लिया गया है जिसका अर्थ है 'करना' या 'अभिनय' करना है। नाटक शब्द की व्युत्पत्ति 'नट् धातु' से हुई है। जिसका अर्थ है सात्विक भावों का प्रदर्शन। दूसरे अर्थ में नाटक का संबंध नट (अभिनेता) से होता है और उनकी विभिन्न अवस्थाओं की अनुकृति को ही नाट्य कहते है। 'नाट्य' शब्द की व्युत्पत्ति के संबंध में विद्वानों में बड़ा मतभेद है। पाणिनी के मतानुसार, ''नाटक या 'नाट्य' शब्द की व्युत्पत्ति 'नट्' धातू से हुई है।'' डॉ. दशरथ ओझा के अनुसार ''नट्' धातु का अर्थ 'गात्र विक्षेपण' तथा 'अभिनय' दोनों ही था, परंतु कालांतर में 'नृट्' धातु का प्रयोग गात्र-विक्षेपण के अर्थ में होने लगा और 'नट्' शब्द का प्रयोग 'अभिनय' के अर्थ में होने लगा।''

संस्कृत काव्यशास्त्र में नाटक रूपक का भेद माना गया है, परंतु हिंदी में नाटक रूपक का पर्याय बन गया है। अर्थों में वैसे दोनों समान हैं। नाटक के भेद में (1) नाटक, (2) प्रकरण, (3) भाण, (4) व्यायोग, (5) समवकार, (6) डिम. (7) ईमामृग, (8) अंक, (9) वीथी तथा (10) प्रहसन हैं।

1.4 नाटय साहित्य का उद्भव

नाट्य साहित्य का उद्भव मानव इतिहास और संस्कृति के विकासक्रम में एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना के रूप में देखा जा सकता है। मनुष्य की सृजनात्मक प्रवृत्ति और सामूहिक अभिव्यक्ति की इच्छा ने नाटक जैसी विधा को जन्म दिया। प्राचीन काल से ही मानव ने जीवन के विविध अनुभवों को किसी न किसी रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसी क्रम में नाट्य साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि समाज, धर्म, राजनीति और संस्कृति की जटिलताओं को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम भी बना।

यूरोप में नाटक का उद्भव प्राचीन ग्रीक सभ्यता से जुड़ा हुआ है। ग्रीक नाट्य परंपरा की शुरुआत धार्मिक अनुष्ठानों और देवताओं के पूजन से हुई। डायोनिसस देवता के सम्मान में आयोजित उत्सवों में गीत, नृत्य और संवाद के माध्यम से सामूहिक प्रस्तुति दी जाती थी, जिसने धीरे-धीरे नाटक का स्वरूप ग्रहण किया। इस परंपरा से दो प्रमुख विधाएँ जन्मीं—ट्रेजडी और कॉमेडी। ट्रेजडी में जीवन के दुखांत पक्ष, नियति और मानव संघर्ष की गहरी अनुभूति कराई जाती थी, जबकि कॉमेडी सामाजिक व्यंग्य, हास्य और मानवीय कमियों का चित्रण करती थी। एस्किलस, सोफोक्लीज़ और यूरिपिडीज़ जैसे महान ग्रीक नाटककारों ने विश्व नाट्य साहित्य को ऐसी कृतियाँ दीं, जिन्होंने आज तक अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है। भारत में भी नाट्य साहित्य की उत्पत्ति का इतिहास अत्यंत गौरवशाली है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र को विश्व का प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाट्यग्रंथ माना जाता है। इसमें नाट्यकला को 'पंचम वेद' का दर्जा दिया गया है। संस्कृत नाटक, विशेषकर कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम्, भास के नाटक और शूद्रक का मृच्छकटिकम, न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहे बल्कि उन्होंने नाटक को जीवन और संस्कृति की व्याख्या का प्रमुख माध्यम बनाया। भारतीय नाट्य परंपरा ने रस, भाव और अभिनय को केंद्र में रखकर नाट्य साहित्य को गहराई प्रदान की।

मध्यकाल में यूरोप और भारत दोनों में नाटक के स्वरूप में परिवर्तन देखने को मिला। यूरोप में मध्यकालीन धार्मिक नाटक और नैतिक नाटकों का प्रचलन हुआ, जबकि भारत में लोकनाट्य और क्षेत्रीय रंगमंच जैसे नौटंकी, यक्षगान और तमाशा ने जनता का मनोरंजन किया और सामाजिक संदेश भी

दिए। इस काल में नाटक ने समाज के सामान्य वर्गों के बीच अपनी पैठ बनाई और जन-संस्कृति का हिस्सा बन गया।

आधुनिक युग में नाटक साहित्य ने अपनी भूमिका का विस्तार किया। अब यह केवल धार्मिक अनुष्ठानों या मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि समाज के विविध पहलुओं और समस्याओं को सामने लाने का माध्यम बन गया। औद्योगिक क्रांति, सामाजिक आंदोलनों और स्वतंत्रता की चेतना ने नाटकों की विषयवस्तु को व्यापक बनाया। नाटक अब शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन और राजनीतिक जागरण का औज़ार बना। भारत में भारतेन्दु हरिश्चंद्र, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश और धर्मवीर भारती जैसे नाटककारों ने आधुनिक हिन्दी नाट्य साहित्य को नई दिशा दी।

नाट्य साहित्य का उद्भव और विकास मानव सभ्यता की सांस्कृतिक यात्रा का दर्पण है। यह केवल कलात्मक अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि समाज के उत्थान, चेतना और विचार-विमर्श का भी माध्यम है। नाटक आज भी अपनी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए मनोरंजन, शिक्षा और सामाजिक सुधार के क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

1.5 नाट्य साहित्य का विकास

प्रारंभिक हिंदी नाटकों में भारतेंदु हरिश्चंद्र का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्हें आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक माना जाता है। उनके नाटक जैसे 'अंधेर नगरी','नील देवी','विषस्य विषमौषधम','सती प्रताप' आदि। समाज की विसंगतियों पर व्यंग्य करते हुए हिंदी नाट्य परंपरा को नई दिशा दी है। उसके पश्चात जयशंकर प्रसाद के नाटक जैसे 'स्कंदगुप्त' और 'चंद्रगुप्त' ने हिंदी नाटकों को उच्च साहित्यिक स्तर प्रदान किया। उन्होंने इतिहास और कल्पना को मिश्रित कर नाटकों की रचना की है।

आधुनिक युग में हिंदी नाटक ने नए विषयों और तकनीकों को अपनाया है। सामाजिक समस्याओं, मानवीय संवेदनाओं और मनोवैज्ञानिक पहलुओं को उभारने वाले नाटकों की रचना हुई। जिनमें मोहन राकेश जैसे नाटककारों ने यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए हिंदी नाटक को नया आयाम दिया, जैसे 'आषाढ़ का एक दिन'। जिसे आगे और विस्तार से समझा जाएगा।



महत्वपूर्ण बिंदुः

भारतीय साहित्यशास्त्र के अनुसार-नाटक के तत्व-वस्तु (कथानक), नेता या पात्र (धीरोदात्त, धीरप्रशांत, धीरललित और धिरोदात्त) और रस। पाश्चात्य साहित्यशास्त्र के अनुसार नाटक के तत्व-वस्तु, पात्र, कथोपकथन, देशकाल, उद्देश्य और शैली।

1.6 हिंदी नाटकों का इतिहास

हिन्दी नाटक की इतिहास परंपरा अत्यंत समृद्ध और विविधतापूर्ण है। इसका आरंभ संस्कृत नाटकों की परंपरा से हुआ, लेकिन आधुनिक हिन्दी नाटक का विकास भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय से माना जाता है। प्रारंभिक काल में ब्रजभाषा में नाटकों की रचना हुई। जैसे महाराज विश्वनाथ सिंह का ''आनंद रघुनंदन'' आदि। भारतेंदु युगमें भारतेंदु हरिश्चंद्र को ''आधुनिक हिन्दी नाटक का जनक'' कहा जाता है। उनके नाटक जैसे ''भारत दुर्दशा'' और ''अंधेर नगरी'' समाज सुधार और राष्ट्रीय चेतना पर केंद्रित रहे है। द्विवेदी युगमें नाटकों में सामाजिक और ऐतिहासिक विषयों को प्रमुखता दी गई। प्रसाद युग में जयशंकर प्रसाद ने नाटकों को साहित्यिक ऊंचाई दी। उनके नाटक जैसे 'स्कंदगुप्त' और 'चंद्रगुप्त' ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं। आधुनिक युगमें नाटकों में यथार्थवाद और समकालीन समस्याओं को दर्शाया गया।

1.7 हिन्दी नाटकः विकास क्रम

हिन्दी नाटक की विकास परंपरा में सर्वप्रथम संस्कृत नाट्य परंपरा को देख सकते है। भरतमुनि कृत 'नाट्यशास्त्र', कालिदास कृत 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' और 'मालविकाग्निमित्रम्', शूद्रक कृत 'मृच्छकटिकम्' आदि संस्कृत नाटकों ने भारतीय संस्कृति के अंतर्गत अमित छाप छोड़ी है। प्रारम्भिक हिन्दी नाटकों में ब्रजभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग द्रष्टव्य है। जिनमें ''प्राणचंद चौहान कृत 'रामायण महानाटक'(1610), कृष्ण जीवन लछीरामकृत 'करुणाभरण' (1617-1659), केशव दास कृत 'विज्ञान गीता'(1610), रघुराम नागर कृत 'समागार'(1700), गिरिधर दास कृत 'नहुष'(1810) और विश्वनाथ सिंह कृत 'आनन्द रघुनन्दन' आदि आते हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'नहुष' और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'आनन्द रघुनन्दन' नाटकों से माना है। हिंदी नाटकों का विभाजन जयशंकर प्रसाद को केंद्र में रख कर निम्न प्रकार से किया है-

- ❖ प्रसाद पूर्व युग- भारतेन्दु युग
- ❖ द्विवेदी युग
- ❖ प्रसाद युग
- ❖ प्रसादोत्तर युग
- ❖ नवनाट्य लेखन या समकालीन नाटक

भारतेंदु युग :

हिन्दी नाटक का व्यवस्थित रूप भारतेन्दु हरिश्चंद्र से ही प्रारंभ होता है। भारतेन्दु और उनके समकालीन नाटककारों ने सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों से स्वयं को सम्बद्ध किया। प्रचीन परंपरा और संस्कृत नाटय शिल्प के महत्व को स्वीकार करते हुए भी,जिन नाटकों की रचना की, वे सोद्धेश्य तथा लोकमंगल की भावना से ओत प्रोत है। इस युग में नाटकों की रचना खड़ी बोली में होने लगी, जिसकी भाषा सरल, प्रभावशाली और जनमानस के लिए सुलभ रही। साथ ही अनूदित रचनाओं का बाहुल्य भी देखा जाने लगा। भारतेन्दु हरिश्चंद्र कृत 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति','भारत दुर्दशा','अंधेर नगरी','सती प्रताप' आदि मौलिक नाटक के अंतर्गत आते हैं। इसके साथ ही अनूदित नाटकों में 'रत्नावली','विद्यासुंदर','पाखंड विडंबन','मुद्रा राक्षस','दुर्लभ बंधु','सत्य हरिश्चंद्र' आदि द्रष्टव्य हैं।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा भारतेन्दु मण्डल की भी स्थापना की गई जिसमें पं० बलकृष्ण भट्ट कृत 'नल दमयंती स्वयंवर', प्रतापनारायण मिश्र कृत 'कलि कौतुक रूपक', अम्बिकादत्त व्यास कृत 'भारत सौभाग्य', श्रीनिवास दास कृत 'रणधीर प्रेममोहिनी','तप्ता संवरण' और 'संयोगिता स्वयंवर' आदि, राधाकृष्ण दास कृत 'दु:खिनी बाला', राधचरण गोस्वामी कृत 'तन मन धन गुसाई जी को अर्पण' आदि नाटककार सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त शीतला प्रसाद त्रिपाठी,लाला श्रीनिवास दास, दामोदर सप्रेप्रमुख नाटककार हैं।

भारतेंदु ने पारसी रंगमंच की ओछी रसिकता से विमुख होकर एक सांस्कृतिक रंगमंच की शुरुआत की। उनकी दृष्टि अपने समय के समाज और उसकी विलक्षण रूचि पर थी। उन्होंने 'कविता वर्धिनी सभा' (1870) ई.. पैनी रीडिंग क्लब (1873) ई. और नेशनल थियेटर (1884) ई. की स्थापना की, जिनके द्वारा काशीनाथ खत्री कृत 'बाल विधवा संताप',पं0 अम्बिका दत्त व्यास कृत 'गो संकट', भारतेंदु कृत 'अंधेर नगरी' आदि का सफल मंचन हुआ। भारतेंदु युग के नाटकों में विद्रोह का स्वर भी प्रमुख रूप से उभरा था और उसमें जीवनंतता चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। अत:भारतेंदु और उनके युग के नाटककारों ने हिन्दी नाटक को जन्म, दिशा और गति दी है।

प्रसाद युग :

प्रसाद का युग कई दृष्टियों से सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में नवीन परिवर्तन का युग था। जयशंकर प्रसाद नाट्य रचयिता थे, नाट्य प्रयोक्ता नहीं। ऐतिहासिक जीवन पर लिखे गए उनके नाटक सांस्कृतिक विचारधारा, भारतीय गौरव, देश भक्ति और प्रेम से परिपूर्ण रहे। जहाँ भारतेन्दु हरिचन्द्र ने हिन्दी नाटक एवं नाट्यकला को प्रवर्तमान किया वहीं आगे चलकर प्रसाद ने उसे एक दिशा प्रदान की। ऐतिहासिक जीवन पर लिखे गए उनके नाटक सांस्कृतिक विचारधारा, भारतीय गौरव, देश भक्ति और प्रेम से परिपूर्ण रहे। प्रसाद युग में जनता अंग्रेजी सभ्यता पर मुग्ध होकर भारतीय आदर्शों व सांस्कृतिक मूल्यों की उपेक्षा करने लग गई थी। जिसकी पुनः स्थापना प्रसाद द्वारा रचित नाटकों द्वारा हुई। जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखे गए नाटकों में 'सज्जन','कल्याणी परिणय','राज्यश्री','अजातशत्रु','जनमेजय का नागयज्ञ','स्कंदगुप्त','चन्द्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' आदि महत्वपूर्ण नाटक हैं।

प्रसाद के नाटकों में मिश्रित शैली-शिल्प परिलक्षित होता है। उनके नाटकों में रंगमंच पर ऐसे दृश्य का समावेश है जो भारतीय नाट्य परंपरा दृष्टिकोण से वर्जित है। उदाहरण के लिए युद्ध, मृत्य, हत्या, आत्महत्या इत्यादि जैसे दृश्यों का रंगमंच पर विधान पाश्चात्य शैली के प्रभाव को स्पष्ट करता है। नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में प्रसाद युग पाश्चात्य प्रयोगों को वहीं तक स्वीकार किया है जहाँ तक वे उन्हें भारतीय परंपरा में आत्मसात् करने की क्षमता रखते थे। इसी परिप्रेक्ष्प नाटक और रंगमंच की यथार्थवादी परंपरा का विरोध करने में भी उन्होंने अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है।

प्रसादयुगीन अन्य नाटककारों में विशेष रूप से जिनका नाम उल्लेखनीय है उनमें गोविन्द वल्लभ पन्त, पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, सेठ गोविन्द दास, हरिकृष्ण प्रेमी, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, उदयशंकर भट्ट, हरीकृष्ण प्रेमी, मैथिलीशरण गुप्त आदि को समाविष्ट किया जाता है। अतः प्रसाद ने नाट्य विधा को एक नई दिशा और दृष्टि दी जिसके कारण इन्हें इस युग का प्रवर्तक कहना सार्थक होगा।



महत्वपूर्ण बिंदुः-

रंगमंचनाट्य अभिनय का स्थान है। रंगमच और नाटक का विकास एक-दूसरे से अंतर संबंधित है। रंगशाला के तीन भेद-रंगपीठ, रंगशीर्ष और नेपथ्य।

प्रसादोत्तर युग :

प्रसादोत्तर युगीन हिंदी नाटक के अंतर्गत दो धाराएँ प्राप्त होती हैं- राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धारा और समस्या नाटक। समस्या कथावस्तु प्रधान नाटकों के मूल प्रवर्तक लक्ष्मीनारायण मिश्र को माना जाता है। इसमें भी दो धाराएँ देखी जा सकती हैं- मनोवैज्ञानिक और सामाजिक। मनोवैज्ञानिक समस्या प्रधान नाटकों के अंतर्गत काम संबंधी समस्याओं का विश्लेषण मनोवैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक रूप से किया जाता है।

प्रसादोत्तर युग के प्रमुख नाटककारों में उपेंद्रनाथ अश्क ने आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद की प्रवृत्ति को अपनाया है। इनके द्वारा रचित नाटक हैं 'लक्ष्मी का स्वागत','छठा बेटा','अंजो दीदी','बड़े खिलाड़ी','जय पराजय' आदि। इसके साथ ही लक्ष्मीनारायण मिश्र कृत 'सन्यासी','मुक्ति का रहस्य','सिंदूर की होली' और 'आधी रात' आदि, विष्णु प्रभाकर कृत 'युगे युगे क्रांति', और सेठ गोविंददास कृत 'संतोष कहाँ','गरीब और अमीर'आदि नाटककार उल्लेखनीय हैं।



महत्वपूर्ण बिंदुः-

प्रसादोत्तर नाटक युग हिंदी साहित्य में नाट्य लेखन की एक नई धारा का प्रतिनिधित्व करता है। नाटक के विषयों में विविधता और नए आयाम को स्थान दिया है। यथार्थवादी और प्रतीकात्मक शैलियों का समावेश है। स्वतंत्रता के बाद समाज में व्याप्त समस्याओं जैसे आर्थिक असमानता, जातिवाद और साम्प्रदायिकता पर प्रकाश डाला गया। पारंपरिक मंचन से हटकर नए रंगमंच रूपों का विकास हुआ। अस्तित्ववादी और आधुनिक विचारधाराओं का समावेश दर्शनीय है। महिला सशक्तिकरण और दलित चेतना पर आधारित नाटक भी लिखे गए।

1.8 नवनाट्य लेखन/ समकालीन नाटक

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नव-निर्माण की आकांक्षा ने लोगों में उत्साह का संचार किया, परंतु इस दिशा में उत्पन्न मोहभंग ने लोगों को निराश एवं कुंठित भी किया। इस परिस्थिति में मध्यवर्ग सर्वाधिक प्रभावित हुआ। इस युग में मध्यवर्ग की आशाओं-आकांक्षाओं व विडंबनाओं को केंद्र में रख कर नाटक

रचे गए। जिस तरह की प्रवृत्तियाँ ''नईकहानी'' और ''नई कविता'' में देखी जा सकती हैं, उसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ समकालीन अर्थात नव-नाट्य लेखन में देखी जा सकती हैं। इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ सर्वप्रथम भुवनेश्वर प्रसाद कृत 'ऊसर' नाटक में देखी जा सकती हैं। इस नाट्यलेखन के अंतर्गत भुवनेश्वर प्रसाद कृत लघुनाटक 'ऊसर','तांबे के कीड़े', मोहन राकेश कृत 'आषाढ़ का एक दिन','आधे अधूरे','लहरों का राजहंस' और 'पैरों तले जमीन' (अधूरा), भीष्म साहनी कृत 'हानूश','माधवी','रंग दे बसंती चोला','कबीरा खड़ा बाजार में' आदि, जगदीश माथुर कृत 'कोणार्क','पहला राजा','शारदीया' आदि, लक्ष्मीनारायण लाल कृत 'अंधा कुआँ', शंकर शेष कृत 'एक और द्रोणाचार्य','खजुराहों का शिल्पी' आदि, स्वदेश दीपक कृत 'कोर्ट मार्शल','सबसे उदास कविता' आदि नाटक आते हैं। इस युग में विसंगति बोध की प्रवृत्ति को भी देखा गया है। कामू, सैमुअल बेकेट की पाश्चात्य 'एब्सर्ड परंपरा' से मिलते-जुलते ऐसे नाटक अधिक मात्रा में लिखे गए हैं। इस काल में भ्रष्टाचार, पीढ़ियों के संघर्ष, संबंधों की अर्थ हीनता, राजनीतिक संदर्भ, आदि विषयों पर नाटक लिखे गए। इसके साथ ही एकांकी नाटक परंपरा को देखा जाए तो यह ज्ञात होता है कि यह परंपरा संस्कृत नाटकों से ही चली आ रही है। जयशंकर प्रसाद कृत 'एक घूँट' को हिंदी की प्रथम एकांकी माना जाता है। आधुनिक काल में देखा जाए तो रामकुमार वर्मा आधुनिक एकांकियों के प्रथम रचनकर माने जाते हैं। इनके द्वारा रचित 'बादल की मृत्यु' एकांकी पाश्चात्य नाट्य विधान की तर्ज पर रचित एकांकी है।

नुक्कड़ नाटकों ने जीवन की समस्याओं को समाज के सम्मुख सीधे-सरल रूप से प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। यह जनता एवं रंगकर्मी के बीच संवाद है और यह आश्वासन देता है कि रंगमंच को शास्त्रीय अड़चनों के बिना भी सामने रखा जा सकता है। हिंदी नाट्य परंपरा में हबीब तनवीर नुक्कड़ नाटकों के प्रतिनिधि हैं। हिंदी नाट्य परंपरा में महिला नाटककारों का भी विशेष योगदान उल्लेखनीय हैं। महिला नाटककार और उनके द्वारा रचित नाटकों में मन्नू भण्डारी कृत 'महाभोज', मृदुला गर्ग 'एक और अजनबी','कितनी कैदें', मृणाल पाण्डेय कृत 'जो राम रचि राखा',कुसुम कुमार 'दिल्ली ऊँचा सुनती है','सुनो शैफाली' आदि द्रष्टव्य हैं।

एकांकी में कम पात्र, सीमित कथानक और संक्षिप्त प्रस्तुति के माध्यम से गहन भावनाओं और विचारों को व्यक्त किया जाता है। यह परंपरा हिन्दी नाट्य परंपरा को नई दिशा देने में सहायक रही है। एकांकीकार के रूप में भुवनेश्वर कृत 'कारवाँ' (1935) का नाम उल्लेखनीय है। हिन्दी की प्रथम एकांकी के रूप में जयशंकर प्रसाद कृत 'एक घूँट' को माना जाता है। इस संदर्भ

में डॉ. नगेन्द्र कहते हैं कि ''एकांकी की टेकनीक का 'एक घूँट' में पूरा निर्वाह है।''

प्रमुख एकांकी और उनके रचनाकारों में डॉ. रामकुमार वर्मा कृत 'पृथ्वीराज की आँखें',धर्मवीर भारती कृत 'नदी प्यासी थी',मोहन राकेश कृत 'अंडे के छिलके' आदि एकांकी नाटककार उल्लेखनीय है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-:1. हिन्दी नाट्य परंपरा को किन-भाग में विभक्त किया गया हैं?

प्रश्न-: 2. समकालीन नाट्य लेखन की आधारवस्तु क्या हैं और इस युग के प्रमुख नाटककर कौन-कौन हैं?

प्रश्न-3. भारतेंदु हरिश्चंद्र को आधुनिक हिंदी नाटक का जनक क्यों कहा जाता है?

प्रश्न-4. प्रसाद के नाटकों में कौन-कौन से पाश्चात्य प्रभाव दृष्टिगत होते हैं?

पश्न-5. हिंदी नाट्य के विकास में महिला नाटककारों का योगदान के बारे में लिखिए।

प्रश्न-6. एकांकी नाटकों की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।



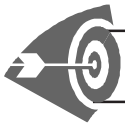
1.9 सारांश

इस अध्याय में हिन्दी नाट्य साहित्य की परंपरा और उसके विकास की यात्रा का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। नाटक लेखन का इतिहास केवल साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों से भी जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल में भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से लेकर संस्कृत नाटकों की सुदीर्घ परंपरा तक नाट्यकला का गौरवशाली इतिहास रहा है। इस प्राचीन नाट्य परंपरा ने हिन्दी नाटक के निर्माण को बुनियादी आधार प्रदान किया। मध्यकालीन काव्यधारा में भले ही नाटक लेखन प्रमुख रूप से दिखाई नहीं देता, लेकिन लोकनाट्य और रंगकर्म की विविध विधाओं ने नाटक के लिए ज़मीन तैयार की।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र को आधुनिक हिन्दी नाटक का जनक कहा जाता है। उन्होंने न केवल सामाजिक और ऐतिहासिक नाटकों की रचना की, बल्कि अपने नाटक अंधेर नगरी के माध्यम से तत्कालीन समाज की विसंगतियों और भ्रष्टाचार

पर तीखा प्रहार किया। भारतेन्दु मंडल के अन्य नाटककारों—जैसे प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', राधाचरण गोस्वामी आदि—ने भी हिन्दी नाटक को समकालीन समाज से जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इस काल को 'प्रसाद पूर्व युग' कहा जाता है, जिसमें नाटक मुख्य रूप से समाज सुधार और जागरण का माध्यम बने। इसके बाद जयशंकर प्रसाद का युग हिन्दी नाट्य साहित्य का स्वर्णिम अध्याय लेकर आया। प्रसाद ने नाटक को केवल मनोरंजन का साधन न मानकर उसे साहित्यिक और दार्शनिक गहराई प्रदान की। उनके नाटकों चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, स्कंदगुप्त और अजातशत्रु आदि में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ मानव जीवन के शाश्वत प्रश्नों को उठाया गया। प्रसाद ने नाटक की भाषा को काव्यात्मक ऊँचाई दी और चरित्रों में जीवन्तता का संचार किया। उनका नाट्य-साहित्य भारतीय संस्कृति और राष्ट्रवादी चेतना का दर्पण माना जाता है। इसीलिए प्रसाद युग हिन्दी नाटक को नयी गरिमा और गहराई प्रदान करने वाला काल है। प्रसादोत्तर युग में हिन्दी नाटक पाश्चात्य नाट्यशैली के प्रभाव से प्रभावित हुआ। यथार्थवाद, मनोविश्लेषण और सामाजिक समस्या-आधारित कथानक इस काल में प्रमुख बने। मोहन राकेश के आषाढ़ का एक दिन और धर्मवीर भारती के अंधा युग जैसे नाटकों ने न केवल नयी संरचना दी, बल्कि मंचीय प्रयोगधर्मिता और आधुनिक समाज की जटिलताओं को अभिव्यक्ति दी। इस दौर में शिल्पगत विविधता दिखाई दी और एकांकी नाटक ने भी लोकप्रियता प्राप्त की। एकांकी की संक्षिप्तता और तीव्र प्रभाव ने इसे विद्यालयों और महाविद्यालयों तक पहुँचा दिया, जहाँ इसे सांस्कृतिक प्रस्तुतियों का प्रमुख माध्यम बनाया गया। इसी समय नुक्कड़ नाटकों का उद्भव हुआ, जिसने नाटक को जनता से सीधे जोड़ा। सफदर हाशमी जैसे रंगकर्मियों ने नुक्कड़ नाटक के माध्यम से सामाजिक अन्याय, असमानता और शोषण के खिलाफ आवाज़ उठाई। यह विधा सस्ते, सहज और प्रभावी माध्यम के रूप में उभरी और जनजागरण का सशक्त उपकरण बनी। महिला नाटककारों का योगदान भी प्रसादोत्तर युग में उल्लेखनीय है। महाश्वेता देवी, मन्नू भंडारी और सुदीप्ति जैसे लेखिकाओं ने स्त्री के दृष्टिकोण से नाटक रचे, जिनमें स्त्री-जीवन की समस्याएँ, लैंगिक असमानता और सामाजिक रूढ़ियाँ प्रमुख विषय बने। महिला दृष्टि से लिखे गए नाटकों ने हिन्दी रंगमंच में संवेदनशीलता और विविधता का नया आयाम जोड़ा। दलित नाटककारों ने भी अपने अनुभवजन्य यथार्थ को नाटक के माध्यम से व्यक्त किया। दलित अस्मिता, सामाजिक बहिष्कार और जातीय अन्याय पर लिखे गए नाटकों ने हिन्दी रंगमंच को वंचित वर्ग की आवाज़ दी। इन नाटकों ने साहित्य में प्रतिरोध की चेतना को सशक्त किया और समाज के सामने उपेक्षित तबकों की वास्तविकता रखी।

अंत: अध्याय में नाटक लेखन की प्राचीन परंपरा से लेकर आधुनिक काल तक के विकास की यात्रा को समग्रता से प्रस्तुत किया गया है। इसमें भारतेन्दु युग के समाज-सुधारक नाटकों, प्रसाद युग के दार्शनिक-ऐतिहासिक नाटकों और प्रसादोत्तर युग के यथार्थवादी व प्रयोगशील नाटकों तक की परंपरा को स्पष्ट किया गया है। साथ ही, नुक्कड़ नाटक, एकांकी, महिला और दलित नाटककारों की रचनात्मकता को भी पहचान दी गई है। यह यात्रा इस बात का प्रमाण है कि हिन्दी नाट्य साहित्य केवल साहित्यिक विधा न होकर सामाजिक परिवर्तन का साधन भी रहा है।



1.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर : हिन्दी नाट्य परंपरा को प्रसाद पूर्व युग, प्रसाद युग, प्रसादोत्तर युग और समकालीन नाटक में विभक्त किया जाता हैं। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर : समकालीन नाट्य लेखन में सामाजिक यथार्थ, राजनीतिक और सांस्कृतिक मुद्दे, मनोवैज्ञानिक सदर्भों को आधार बना कर नाटकों की रचना की गई है। प्रमुख नाटककार मोहन राकेश 'आषाड़ का एक दिन','लहरों के राजहंस',धरमवीर भारती कृत 'अंधा युग' आदि हैं। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर : भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी नाटक को आधुनिक रूप प्रदान किया। उन्होंने सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय विषयों को नाटक के माध्यम से प्रस्तुत किया तथा जनजागरण का कार्य किया। उनकी रचनाओं में नवीन भाषा, यथार्थपरक दृष्टि और मंचीय प्रभाव ने हिंदी नाटक को नई दिशा दी। अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर: जयशंकर प्रसाद के नाटकों पर पाश्चात्य नाट्यकला का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उनके नाटकों में यूनानी त्रासदी की गंभीरता, शेक्सपियर की नाट्यशैली और चरित्र-निर्माण की गहराई झलकती है। उन्होंने भारतीय भावबोध के साथ पाश्चात्य तकनीक को मिलाकर नाटक को मनोरंजन के बजाय दर्शन और जीवन-मूल्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। अधिक जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।

पश्न 5 का उत्तर: आधुनिक हिंदी नाटक के विकास में महिला नाटककारों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, उषा गंगाधरन, नीलम शुक्ला आदि ने अपने नाटकों में स्त्री की अस्मिता, संघर्ष और सामाजिक असमानता को मुखर किया। उन्होंने पारंपरिक नारी छवि से हटकर स्वतंत्र,

आत्मनिर्भर और विचारशील स्त्री का चित्र प्रस्तुत किया। विस्तृत अध्ययन के लिए इस इकाई को अवश्य पढ़ें।

पश्न 6 का उत्तर : एकांकी नाटक संक्षिप्त रूप में गहरी भावनाओं और विचारों को व्यक्त करने वाला नाट्यरूप है। इसमें घटनाएँ सीमित होती हैं, पात्रों की संख्या कम होती है और कथानक एक ही भाव या परिस्थिति पर केंद्रित रहता है। एकांकी की भाषा प्रभावशाली होती है तथा समय, स्थान और घटना की एकता इसके मूल तत्व हैं। अधिक जानकारी के लिए इस इकाई का अध्ययन करें।



1.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. **शर्मा, विश्वनाथ.** (2010). हिन्दी रंगमंच का उद्भव और विकास. जोधपुर: उषा पब्लिकेशन हाउस।
2. **शिवनाथ.** (2008). हिन्दी नाटकों का विकास. इलाहाबाद: किताब महल।
3. **गुप्त, सोमनाथ.** (2005). हिन्दी नाटक साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: के.पी. प्रेस।
4. **सिंह, नामवर.** (1979). कविता के नए प्रतिमान. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
5. **वर्मा, रामकुमार.** (1995). हिन्दी रंगमंच और नाटक. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
6. **वर्मा, लक्ष्मीकांत.** (2001). आधुनिक हिन्दी नाटक: स्वरूप और विकास. आगरा: साहित्य भवन।
7. **पाण्डेय, सुधाकर.** (1998). भारतीय नाट्य परंपरा और हिन्दी नाटक. नयी दिल्ली: साहित्य अकादमी।
8. **राकेश, मोहन.** (1958). आषाढ़ का एक दिन (भूमिका सहित). दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
9. **साहनी, भीष्म.** (1981). हिन्दी रंगमंच: यात्रा और प्रयोग. नयी दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
10. **सत्येन्द्र.** (1990). हिन्दी साहित्य का इतिहास और विकास. प्रयाग: प्रयाग प्रकाशन।

1.12 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. भरतमुनि की नाट्य रचना का नाम लिखिए?
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रथम नाटक किसे माना है?
3. भारतीय साहित्यशास्त्र के अनुसार नाटक के तत्व कौन-कौन से हैं?
4. नाट्य शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
5. नाटक और नाट्यशास्त्र में क्या अंतर है?
6. एकांकी नाटक की विशेषता लिखिए।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. हिंदी नाट्य परंपरा के उद्भव और विकास पर एक आलेख प्रस्तुत कीजिए।
2. समकालीन युग में किस-किस प्रकार के लेखन ने नाटक को विकसित बनाया हैं-सतर्क उत्तर दीजिये।
3. महिला और दलित नाटककार का परिचय देते हुए हिन्दी नाटकों की महत्ता का परिचय दीजिए।
4. प्रसाद युगीन नाटकों की विशेषताओं का विस्तार से वर्णन कीजिए।
5. भारतेंदु युग के प्रमुख नाटककारों और उनके योगदान पर चर्चा कीजिए।
6. मोहन राकेश और भीष्म साहनी के नाटकों की प्रमुख विशेषताओं का विवेचन कीजिए।

******

इकाई 2 : नाटक के तत्व

2.1 उद्देश्य
2.2 प्रस्तावना
2.3 हिंदी नाटक-प्रकार, एवं प्रमुख तत्व
2.4 नाटक के प्रमुख तत्वों का विवेचन
2.5 नाटक की विशेषताएं
2.6 सारांश
2.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
2.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
2.9 अभ्यास प्रश्न

2.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई के अध्ययन से आप नाटक के प्रमुख तत्वों—कथावस्तु, पात्र, संवाद, परिवेश एवं उद्देश्य—की संरचना और उनकी विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- इस इकाई द्वारा अभिनय (आंगिक, वाचिक, आहार्य, सात्विक) तथा नाटकीय भाषा, संवाद शैली एवं मंचीय संरचना की कार्यविधियों का विश्लेषण को समझ पाएंगे।
- आप यह स्पष्ट कर सकेंगे कि नाटक एक सामूहिक कला है, जिसमें स्थापत्य, चित्र, संगीत, प्रकाश, ध्वनि और अभिनय जैसे विविध कलाओं का समन्वय अनिवार्य होता है।
- इस इसकी से आप नाटक के देशकाल, वातावरण और सामाजिक संदर्भ का मूल्यांकन कर सकते है।
- नाटक के पात्रों और कथोपकथन के माध्यम से जीवन और समाज के विविध पहलुओं की समझ विकसित कर सकेंगे।
- नाटक के रस, भाव और सजीवता को विभिन्न दृष्टियों से पहचानने तथा उनका आलोचनात्मक विश्लेषण करने में सक्षम होंगे।

2.2 प्रस्तावना

नाटक साहित्य की एक ऐसी विधा है, जो जीवन के विविध रंगों को मंच पर सजीव कर देती है। यह केवल शब्दों का खेल नहीं, अपितु दृश्य, ध्वनि, भाव और अभिनय का समन्वित रूप है। नाटक में घटनाएँ घटती नहीं,

घटित होती प्रतीत होती हैं—यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। इसमें कथानक, पात्र, संवाद, मंच सज्जा, वेशभूषा, प्रकाश और ध्वनि जैसे तत्व मिलकर दर्शकों के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ते हैं। नाटक के प्रत्येक घटक का विश्लेषण हमें साहित्य के साथ-साथ जीवन के विविध पक्षों को समझने में भी सहायक होता है। अभिनय की प्रधानता नाटक को अन्य साहित्यिक विधाओं से भिन्न और विशिष्ट बनाती है। नाटक, केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज का दर्पण भी है। इस इकाई में आप नाटक के इन्हीं मूल तत्वों का गहन अध्ययन करेंगे, जो इसकी आत्मा माने जाते हैं।

2.3 हिंदी नाटक-प्रकार, प्रमुख तत्व

पिछली इकाई में आपने नाटक का अर्थ, परिभाषाएं एवं उसकी विकास परंपरा के बारे में पढ़ा। साहित्य की अन्य विधाओं जैसे कविता, कहानी और उपन्यास आदि को हम पढ़ या सुन सकते हैं, जबकि नाटक को पढ़ने और सुनने के अतिरिक्त हम अपनी आँखों से देख भी सकते हैं। सभी साहित्यिक विधाओं का माध्यम शब्द होता है, किंतु नाटक में शब्द के साथ-साथ रूप भी समाहित्त होता है। अन्य साहित्यिक विधाएँ शब्दों द्वारा, कल्पना की सहायता से, हमारे हृदय अथवा कल्पना में भाव चित्र उपस्थित करती हैं, जबकि नाटक स्थिति-परिस्थिति को हमारे सामने साक्षात दृश्य रूपके रूप में प्रस्तुत करता है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हम जीवन की घटनाओं को वास्तव में घटित होता देख रहे हैं। इंद्रियों के आधार पर पड़ने वाले इस प्रभाव को ध्यान में रखते हुए प्राचीन भारतीय आचार्यों ने काव्य के दो विभाग किए हैं-श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य। संस्कृत साहित्य में नाटक को भी काव्य ही माना गया है और उसे दृश्य काव्य की श्रेणी में रखा गया है। इस तरह कविता और नाटक का भेद 'श्रव्य काव्य' और 'दृश्य काव्य' के रूप में किया गया है। 'श्रव्य काव्य' के शब्द उन दिनों की स्मृति को सुरक्षित रखे हुए हैं, जब साहित्य में लिखित परंपरा की बजाए मौखिक (गायन की) परंपरा का प्रचलन अधिक रहा होगा। प्राचीन समय में कविता जन समुदाय के समक्ष गाकर सुनाई जाती थी। उदाहरण के लिए, महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित आदिकाव्य 'रामायण' को लव-कुश आरंभमें गाकर ही सुनाते हैं। माना जाता है कि उन्होंने इसे भगवान रामचंद्र के दरबार में गाकर सुनाया था।

2.4 नाटक के प्रमुख तत्वों का विवेचन

कथावस्तु

नाटक की विषय-वस्तु को कथानक, कथावस्तु या घटनाक्रम कहा जा

सकता है। कथानक सरल तथा अभिनेय होना चाहिए। प्रासंगिक वृत्त अधिक नहीं होने चाहिए। नाटक की कहानी घटना तथा श्रृंखलाबद्ध न होते हुए आकर्षक तथा रोमांचक प्रसंगों से युक्त होना चाहिए। सुबोध कथानक में अन्विति और सुसंबद्धता अनिवार्य है। कुछ मोड़ भी उसमें आते है ताकि पाठक की जिज्ञासा निरंतर बनी रहे।

कथानक के फल इतिवृत्त और अभिनय के आधार पर अलग-अलग भेद किए गये हैं। फल की दृष्टि से कथानक के दो भेद किए जाते हैं। ''(1) अधिकारिक कथावस्तु (2) प्रासंगिक कथावस्तु।''

जो कथा नाटक के प्रारंभ से अंत तक चलती है और उसका सीधा संबंध नायक के साथ होता है उसे अधिकारिक कथा वस्तु कहते हैं। तो प्रासंगिक कथावस्तु का सीधा संबंध नायक-नायिका से न होकर गौण पात्रों से होता हैं, इसका कार्य कथाविकास में सहकार्य सौंदर्य बढाने में होता हैं।इतिवृत्त के आधार पर कथावस्तु के तीन प्रकार हैं: ''(1) प्रख्यात,(2) उत्पाद और (3)मिश्र।''

अभिनय की दृष्टि से कथावस्तु के दो भेद हैं.... ''(1) दृश्य (2) सूच्य।'' दृश्य का सीधा संबंध रंगमंच से होता है। मृत्यु, स्नान, संभोग और भोजन आदि दृश्यों का संकेत ही सूच्य है। इन सूच्य अंशो को पारिभाषिक शब्दों में 'अर्थोपक्षेपक' नाम से जाना और पहचाना जाता है। ये पाँच है, ''(1) विष्कम्भक (2) चूलिका (3) अंकस्य (4) अंकावतार (5) प्रवेशक।''



महत्वपूर्ण बिंदुः-

कथा को पाँच आधार पर विभाजन किया जाता है:

अभिनय की दृष्टि, संवाद पर आधारित, लोकवृत्त के आधार, फलप्राप्ति पर आधारित और कथा-विन्यास पर आधारित।

नाटक आरंभ तथा दो अंकों के बीच में गौण पात्रों के वार्तालाप के माध्यम से बीती हुई और आने वाली घटना सूचना दी जाती है उसे 'विषकम्भक' कहते है। 'चूलिका' नेपथ्य से दी जानेवाली सूचना है। एकांक समाप्ति पर बाहर जानेवाले पात्र अगले अंक की सूचना ही 'अंकस्य' है। तो 'अंकावतार' में बिना पात्रों को बदले प्रथमांक कथा आगे चलाई जाती है। 'प्रवेशिका' में निम्न पात्रों द्वारा कथावस्तु की सूचना दी जाती है। कार्य व्यापार की दृष्टि से कथावस्तु को पाँच अवस्थाओं में विभाजित किया जाता है। ''(1) आरंभ (2) यत्व (3) प्रात्याशा (4) नियताप्ति (5) फलागम।''

कथानक का प्रारंभिक भाग 'आरंभ' है। 'यत्व' में इच्छा उद्देश्य तथा सिद्धातों की पूर्ति रहती है। 'प्रात्याशा' में प्राप्ति की संभावना रहती है। तो

'नियताप्ति' में फल की प्राप्ति निश्चित होती है। 'फलागम' में पूर्णत: फल की प्राप्ति होती है।

पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों ने भी कथावस्तु को पाँच भागों में विभाजित किया है। ''(1) प्रारंभिक अवस्था (2) संघर्ष का विकास (3) चरम सीमा (4) संघर्ष का डास (5) उपसंहार या परिणति।'' भारतीय नाट्य-रचना का आधार फलागम है और पश्चिमी नाट्य रचना का संघर्ष।

कथानक की अवस्थाओं के विकास के हेतु पाँच अर्थ प्रकृतियों को मान्यता दी गई है। ''(1) बीज (2) बिंदु (3) पताका (4) प्रकरी (5) कार्य।'' आरंभिक अर्थ प्रकृति 'बीज' है। 'बिंदु' कथाविस्तार का सहायक है। 'पताका' मूल कथा के विकास में सहायक तथा चरम सीमा तक पहुँचाती है। 'प्रकरी' की प्रासंगिक कथा बीच में ही समाप्त हो जाती है। 'कार्य' अर्थ प्रकृति का अंतिम फल का द्योतक है। अवस्था तथा अर्थ प्रकृतियों में मेल लाने में विशिष्ट संधियों की अवतारणा की गई है। वे भी पाँच प्रकार की हैं। ''(1) मुख (2) प्रतिमुख (3) गर्भ (4) विमर्श (5) निर्वहण को उपसंहति भी कहते है।'' प्रारंभिक अवस्था के साथ योग होने से बीजोत्पत्ति होती है। उसे 'मुख' संधि कहते है। मुख-संधि का विकास ही 'प्रतिमुख' है। 'गर्भ' संधि में फल निश्चित रहता है। इसमें प्रात्याशा और पताका योग रहता है। प्रधान फलप्राप्ति का उपाय अपेक्षा से ज्यादा सरल हो परंतु शाप के कारण उसके प्राप्ति में बाधा हो वहाँ 'विमर्श-संधि' होती है जिसमें नियताप्ति का और प्रकरी का योग होता है। 'गर्भ' और 'विमर्श' संधियों में पताका और प्रकरी का प्रात्याशा नियताप्ति से योग आवश्यक नहीं होता। 'निर्वहण' संधि में कार्य फलागम का योग होकर नाटक पूर्णत: को प्राप्त होता है।

पात्र तथा चरित्र-चित्रण

संस्कृत आचार्यों ने नाटक के पात्रों को अनेक वर्गों में विभाजित किया है। नाटक का प्रमुख पात्र नायक कहलाता है। भारतीय नाट्यशास्त्र में नायक को सर्वगुण संपन्न माना गया है। नायक को मधुर, त्यागी, विनीत, दक्षाप्रिय बोलनेवाला, लोकप्रिय, पवित्र, वाक्पटू, उच्चकुलोत्पन्न, युवा बुद्धिमान, उत्साही, प्रज्ञावान, कलावान, आत्म सम्मानी, शूख्य तेजस्वी, दृढ, शास्त्रज्ञ और धार्मिक होना चाहिए। आधुनिक नाटकों में नायक के लिए उपर्युक्त गुण आवश्यक नहीं है।

प्रकृति के अनुसार नायक के चार भेद हैं। ''(1) धीरोदत्त (2) धीरललित (3) धीरप्रशान्त (4) धीरोद्धत्त।''

शोक-क्रोध आदि से अविचलित अंतकरण से गंभीर, क्षमावान, आत्मश्लाघा न करनेवाला अहंकारशून्य और दृढ़ व्रत नायक 'धीरोदात्त' नायक कहलाता है।

'धीरललित' नायक सुखान्वेषी, कलाविद्, निश्चित, मृदुल स्वभाव का होता है। 'धीप्रशान्त' नायक शांतिप्रिय, विनम्र, शांत स्वभाव का ब्राह्मण या वैश्य होता है। 'धीरोद्धत' नायक मानवी,कुटील, चपल, कपटी, घमंडी आत्मप्रशंसा परायण तथा प्रचंड स्वभाव का होता है। श्रृंगारिकता की दृष्टि से भी नायक के चार भेद हैं.... ''(1) दक्षिण (2) धृष्ट (3) अनुकूल (4) शठ।'' 'दक्षिण' नायक अनेक पत्नीवाला होते हुए भी सभी के साथ समान अनुराग रखता है। प्रत्यक्ष अपराध के कारण लज्जित न हो, झूठ बोले नि:शंक रहे तथा सभी से झिडकियाँ खाये वह पृष्ट नायक है। अनुकूल नायक एक पत्नीवाला होता है। तो शठ नायक किसी दूसरी नायिका के प्रति अनुरक्त रहता है। नाटक में नायक की तरह नायिका का स्थान भी महत्वपूर्ण है। नायिका रूग, गुण, शील, प्रेम, यौवन, मोहक रंग, कुलीनता अलंकार आदि अनिवार्य है। कार्य, आयु, जाति, परिस्थिति आदि के आधार पर नायिका के भी भेद हैं।

कार्यानुसार नायिकाएँ तीन प्रकार की हैं...''(1) स्वकीया (2) परकीया (3) सामान्या।'' 'स्वकीया' नायक की विवाहिता पन्ती होती है। तो 'परकीया' नायक की पन्ती न होकर किसी अन्य पात्र की अथवा अविवाहिता होती है। 'सामान्या' नायिका गणिका अथवा वेश्या होती है। सामान्या नायिका निकृष्ट दर्जे की नायिका मानी जाती है।

आयु नुसार नायिकाओं के तीन भेद हैं.... ''(1) मुग्धा (2) मध्या (3) प्रौढ़ा।'' मुग्धा नायिका में रति-भाव की अपेक्षा लज्जा-भाव अधिक होता है। मध्या नायिका में रति और लज्जा भाव समान होता है। प्रौढ़ा में लज्जा की अपेक्षा रति-भाव अधिक होता है। जाति के अनुसार नायिकाओं के चार भेद हैं .... ''(1) पद्मिनी (2) शंखिनी (3) चित्रणी (4) हस्तिनी।'' परिस्थितिनुरूप नायिकाओं को आठ भागों में विभाजित किया है.... ''(1) स्वाधीनपत्तिका (2) वासकसज्जा (3) विरहोत्कंठित (4) कलहतरिता (5) अभिसारिका (6) विप्रलब्धा (7) खंड़िता (8) प्रेषित-पतिका।''

नायक नायिका के अलावा अन्य गौण पात्र भी इसमें होते हैं। जो कथावस्तु को आगे बढाने में सहायक होते हैं। प्रतिनायक, ''(1) पीठमई, (2) विदूषक, (3) चेट, (4) बिट, (5) कंचुकी।'' ''प्रतिनायक' नायक का प्रतिद्वंद्वी होता है। 'पीठमई' प्रासंगिक कथावस्तु का नायक होता है। वह मूलकथा के नेता का सहायक होता है। 'विदूषक' वह विकृत वेशभूषा तथा वाणीद्वारा हास्य उत्पन्न कर नायक तथा प्रेक्षक को प्रसन्न करता है। 'चेट' नायक का अनुचर होता है। 'बिट' गायन वादन में निपुण होता है। 'कंचुकी' संस्कृत नाटकों का एक अन्य पात्रहै जो वृद्ध ब्राह्मण होता है। वह अंत:पुर में न झिझकते हुए आता-जाता है यर्थात उसे पूर्णत: स्वतंत्रता होती है। वह लोक

व्यवहार में कुशल तथा सभी शास्त्रों का ज्ञाता होता है।

चारित्रिक विशेषताएँ नापने के लिए तीन साधन अपनाए जाते हैं.... पात्रों के कार्यों का परीक्षण, कथोपकथन या पात्रों के वार्तालाप से प्रकट विशेषताएँ और स्वगत भाषण द्वारा अभिव्यक्त वैशिष्ट्य। नाटक के पात्रों का चरित्र-चित्रण करते समय संक्षिप्तता, सुसंबद्धता तथा तटस्थता का ध्यान रखा जाता है।

कथोपकथन

पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप को कथोपकथन या संवाद कहते है। नाटक की चमत्कारिकता कथोपकथन में होती है। बोल्टन ने कहा है कि.... ''play is it's dialogue'' ''अर्थात् इसके द्वारा पात्रों का चरित्र-चित्रण, घटना, देशकाल, भाषा और पात्रों की मन: स्थितियों पर प्रकाश पड़ता है। प्रसंग, परिस्थिति, पात्रानुकूलता, कथोपकथन के गुण है। छोटे-छोटे वाक्य, वाक्चातुर्य से युक्त संवाद ही नाटक को गतिप्रदान करते हैं। नाटक में स्वाभाविकता अनिवार्य है। संवाद से ही नाटक में रोचकता आती है।

कथोपकथन के भी तीन भेद हैं...''(1) सर्वश्राव्य (2) नियतश्राव्य (3) स्वगत-कथन।'' सर्वश्राव्या का कथन सभी सुन सकते हैं। नियतश्राव्य निश्चित पात्रों के ही सुनने के लिए होते हैं। विशेष पात्रों का कथन ही नियतश्राव्य है। 'स्वगत-कथन' में पात्र अपने-आपसे बाते करते हैं। अंतर्द्वंद्ध मन का रहस्य उसी को प्रकट करना, आंतरिकता आदि के लिए ही स्वगत कथन की निर्मिति की है। परंतु आज नाटकों में स्वगत कथन को महत्व नहीं दिया जाता। इसके अतिरिक्त 'आकाश भाषित' कथन भी होते हैं। वे स्वगत कथन का ही रूप है। वह अकेलाआकाश की ओर मुँह करते हुए आकाश में कल्पित पात्रों से वार्तालाप करता है।

परिवेश

नाटक अभिनय में स्वाभाविकता लाने के लिए पात्रों की वेशभूषा, परिस्थितियाँ, आचार-विचार, खान-पान, आहार-व्यवहार, आचरण, कथन आदि युगानुरूप होने चाहिए। स्वाभाविकता के लिए पाश्चात्य नाट्याचार्यों ने संकलनत्रय, स्थान की एकता, समय की एकता तथा घटना की एकता पर विशेष बल दिया है।

उद्देश्य

सामाजिक के हृदय में रक्त का संचार करना ही नाटक का उद्देश्य होता है। नाटक के अन्य तत्व इस उद्देश्य के साधन मात्र होते हैं। भारतीय दृष्टिकोण सदा आशावादी रहा है इसलिए संस्कृत के प्राय: सभी नाटक सुखांत रहे हैं। पश्चिम नाटककारों ने या साहित्यकारों ने साहित्य को जीवन की व्याख्या मानते हुए उसके प्रति यथार्थ दृष्टिकोण अपनाया है उसके प्रभाव से हमारे यहां भी कई

नाटक दुखांत में लिखे गए हैं, किंतु सत्य है कि उदास पात्रों के दुखांत अंत से मन खिन्न हो जाता है। अत: दुखांत नाटको का प्रचार कम होना चाहिए।

भाषा शैली

नाटक सर्वसाधारण की वस्तु है अत: उसकी भाषा शैली सरल, स्पष्ट और सुबोध होनी चाहिए, जिससे नाटक में प्रभाविकता का समावेश हो सके तथा दर्शक को क्लिष्ट भाषा के कारण बौद्धिक श्रम ना करना पड़े अन्यथा रस की अनुभूति में बाधा पहुंचेगी। अत: नाटक की भाषा सरल व स्पष्ट रूप में प्रवाहित होनी चाहिए।

देशकाल वातावरण

देशकाल वातावरण के चित्रण में नाटककार को युग अनुरूप के प्रति विशेष सतर्क रहना आवश्यक होता है। पश्चिमी नाटक में देशकाल के अंतर्गत संकलनअत्र समय स्थान और कार्य की कुशलता का वर्णन किया जाता है। वस्तुत: यह तीनों तत्व 'यूनानी रंगमंच' के अनुकूल थे। जहां रात भर चलने वाले लंबे नाटक होते थे और दृश्य परिवर्तन की योजना नहीं होती थी। परंतु आज रंगमंच के विकास के कारण संकलन का महत्व समाप्त हो गया है। भारतीय नाट्यशास्त्र में इसका उल्लेख ना होते हुए भी नाटक में स्वाभाविकता, औचित्य तथा सजीवता की प्रतिष्ठा के लिए देशकाल वातावरण का उचित ध्यान रखा जाता है। इसके अंतर्गत पात्रों की वेशभूषा तत्कालिक धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों में युग का विशेष स्थान है। अत:नाटक के तत्वों में देशकाल वातावरण का अपना महत्व है।

संवाद

नाटक में नाटकार के पास अपनी और से कहने का अवकाश नहीं रहता। वह संवादों द्वारा ही वस्तु का उद्घाटन तथा पात्रों के चरित्र का विकास करता है। अत: इसके संवाद सरल, सुबोध, स्वभाविक तथा पत्रानुकूल होने चाहिए। गंभीर दार्शनिक विषयों से इसकी अनुभूति में बाधा होती है। इसलिए इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। नीर सत्ता के निरावरण तथा पात्रों की मनोभावों की मनोकामना के लिए कभी-कभी स्वागत कथन तथा गीतों की योजना भी आवश्यक समझी गई है।

2.5 नाटक की विशेषताएं

अभिनय

यह नाटक की प्रमुख विशेषता है। नाटक को नाटक के तत्व प्रदान करने का श्रेय इसी को है। यह वह गुण है जो दर्शक को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। इस संबंध में नाटककार को नाटकों के रूप, आकार, दृश्यों की

सजावट और उसके उचित संतुलन, परिधान, व्यवस्था, प्रकाश व्यवस्था आदि का पूरा ध्यान रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में लेखक की दृष्टि रंगशाला के विधि-विधानों की ओर विशेष रुप से होनी चाहिए इसी में नाटक की सफलता निहित है।अभिनय नाटक का प्रमुख तत्व है। इसकी श्रेष्ठता पात्रों के वाक्चातुर्य और अभिनय कला पर निर्भर है। मुख्य प्रकार से अभिनय के 3 प्रकार हैं:-

क- आंगिक अभिनय (शरीर से किया जाने वाला अभिनय)- आंगिक अभिनय

आंगिक अभिनय का अर्थ है शरीर, मुख और चेष्टाओं से कोई भाव या अर्थ प्रकट करना। सिर, हाथ, कटि, वक्ष, पार्शव और चरण द्वारा किया जानेवाला अभिनय या आंगिक अभिनय कहलाता है और आँख, भौंह, अधर, कपोल और ठोढ़ी से किया हुआ मुखज अभिनय, उपांग अभिनय कहलाता है। चेष्टाकृत अभिनय उसे कहते हैं जिसमें पूरे शरीर की विशेष चेष्टा के द्वारा अभिनय किया जाता है जैसे लँगड़े, कुबड़े, या बूढ़े की चेष्टाएँ दिखाकर अभिनय करना। ये सभी प्रकार के अभिनय विशेष रस, भाव तथा संचारी भाव के अनुसार किए जाते हैं।

शरीर अथवा आंगिक अभिनय में सिर के तरह, दृष्टि के छत्तीस, आँख के तारों के नौ, पुट के नौ, भौंहों के सात, नाक के छह, कपोल के छह, अधर के छह और ठोढ़ी के आठ अभिनय होते हैं। व्यापक रूप से मुखज चेष्टाओं में अभिनय छह प्रकार के होते हैं। भरतमुनि ने कहा है कि मुखराग से युक्त शारीरिक अभिनय थोड़ा भी हो तो उससे अभिनय की शोभा दूनी हो जाती है। यह मुखराग चार प्रकार का होता है---स्वाभाविक, प्रसन्न, रक्त और श्याम। ग्रीवा का अभिनय भी विभिन्न भावों के अनुसार नौ प्रकार का होता है।

आंगिक अभिनय में तेरह प्रकार का संयुक्त हस्त अभिनय, चौबीस प्रकार का असंयुक्त हस्त अभिनय, चौंसठ प्रकार का नृत्त हस्त का अभिनय और चार प्रकार का हाथ के कारण का अभिनय बताया गया है। इसके अतिरिक्त वक्ष के पाँच, पार्श्व के पाँच, उदर के तीन, कटि के पाँच, उरू के पाँच, जंघा के पाँच और पैर के पाँच प्रकार के अभिनय बताए गए हैं। भरत ने सोलह भूमिचारियों और सोलह आकाशचारियों का वर्णन करके दस आकाशमंडल और उस भौम मंडल के अभिनय का परिचय देते हुए गति के अभिनय का विस्तार से वर्णन किया है कि किस भूमिका के व्यक्ति की मंच पर किस रस में, कैसी गति होनी चाहिए, किस जाती, आश्रम, वर्ण और व्यवसाय वाले को रंगमंच पर कैसे चलना चाहिए तथा रथ, विमान, आरोहण, अवरोहण, आकाशगमन आदि का अभिनय किस गति से करना चाहिए। गति के ही समान आसन या बैठने की विधि भी भरत ने विस्तार से समझाई है। जिस प्रकार यूरोप में घनवादियों (क्यूब्रिस्ट्स) ने अभिनयकौशल के लिए व्यायाम का विधान किया है वैसे ही भरत ने भी अभिनय का ऐसा विस्तृत विवरण दिया है कि अभिनय

के संबंध में संसार में किसी देश में अभिनय कला का वैसा सांगोपांग निरूपण नहीं हुआ।

ख- वाचिक अभिनय (संवाद का अभिनय रेडियो नाटक)- अभिनेता रंगमंच पर जो कुछ मुख से कहता है सब वाचिक अभिनय कहलाता है। साहित्य में तो हम लोग व्याकृता वाणी ही ग्रहण करते हैं, किंतु नाटक में अव्याकृता वाणी का भी प्रयोग किया जा सकता है। चिड़ियों की बोली, सीटी देना या ढोरों को हाँकते हुए चटकारी देना आदि सब प्रकार की ध्वनियों को मुख से निकालना वाचिक अभिनय के अंतर्गत आता है। भरत ने वाचिक अभिनय के लिए 63 लक्षणों का और उनके दोष-गुण का भी विवेचन किया है। वाचिक अभिनय का सबसे बड़ा गुण है अपनी वाणी के आरोह-अवरोह को इस प्रकार साध लेना कि कहा हुआ शब्द या वाक्य अपने भाव और प्रभाव को बनाए रखे। वाचिक अभिनय की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यदि कोई जवनिका के पीछे से भी बोलता हो तो केवल उसकी वाणी सुनकर ही उसकी मुखमुद्रा, भावभंगिमा और आकांक्षा का ज्ञान किया जा सके।

ग- आहार्य अभिनय (वेशभूषा, मेकअप, स्टेज विन्यास)- आहार्य अभिनय वास्तव में अभिनय का अंग न होकर नेपथ्यकर्म का अंग है और उसका संबंध अभिनेता से उतना नहीं है जितना नेपथ्यसज्जा करनेवाले से। किंतु आज के सभी प्रमुख अभिनेता और नाट्यप्रयोक्ता यह मानने लगे हैं कि प्रत्येक अभिनेता को अपनी मुखसज्जा और रूपसज्जा स्वयं करनी चाहिए। भरत के नाट्यशास्त्र में सबसे विचित्र प्रकरण है चित्राभिनय का, जिसमें उन्होंने ऋतुओं, भावों, अनेक प्रकार के जीवों, देवताओं, पर्वत, नदी, सागर आदि का, अनेक अवस्थाओं तथा प्रातः, सायं, चंदज्योत्स्ना आदि के अभिनय का विवरण दिया है। यह समूचा अभिनयविधान प्रतीकात्मक ही है, किंतु ये प्रतीक उस प्रकार के नहीं हैं जिस प्रकार के यूरोपीय प्रतीकाभिनयवादियों ने ग्रहण किए हैं।

2.6 विभिन्न कलाओं का समावेश

सामूहिक कला होने के कारण नाटक में दिगिन्न कलाओं का अनिवार्य समावेश रहता है। नाटक देखते समय हमारा ध्यान अक्सार केवल अभिनेताओं की ओर जाता है। किंतु अभिनेताओं के अलावा और भी कई व्यक्ति होते हैं जो नाटक की प्रस्तुति में सहायता करते हैं। नाटक के लिए उपयुक्त रंगमंच की सजावट करने के लिए स्थापत्य कला और चित्रकला आदि में कुशल व्यक्तियों की जरूरत पड़ती है। पात्रों की वेशभूषा तथा श्रृंगार के लिए खास तरह के विशेषज्ञ अपेक्षित होते हैं। गीत, नृत्य जादि की प्रस्तुति में सहायता के लिए संगीत वाद्य के क्षेत्र में कुशल लोगों की जरूरत होती है। मंच पर प्रकाश तथा

ध्वनि-प्रभाव माइक आदि की व्यवस्था के लिए उपयुक्त व्यक्तियों से सहयोग की आवश्यकता होती है। आधुनिक युग में निजली के प्रकाश तथा वैज्ञानिक तकनीकों के प्रयोग के कारण प्रकाश व्यवस्था की सपूर्ण नाट्य प्रभाव में बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह ध्यान रखना जरूरी होता है कि मंच के किस भाग पर कर, कितना और किस दन का प्रकाश दिया जाए कि अभिनेताओं का अभिनय अधिक से अधिक यथार्थ, सजीव और प्रभावपूर्ण हो सके।

सजीवता

नाटक की एक अन्य विशेषता यह है कि इसमें जीवन की वास्तविकता का अनुकरण जीते जागते साधनों द्वारा किया जाता है। अन्य विधाएँ जीवन का अनुकरण शब्दों वो माध्यम से उसका वर्णन करके करती है जबकि नाटक में घटनाओं को घटित होते दिखाया जाता है। अभिनेता वेशभूषा और रूप सज्जा द्वारा पात्रों का रूप धारण करते हैं और उनके आचार-व्यवहार तथा बातचीत आदि का अनुकरण करते हैं। इस तरह नाटक में जीवन के कार्य व्यापारों की प्रत्यक्ष क्रियाशील सजीवता होती है, उनका विवरण नहीं होता। प्राचीन संस्कृत आचार्यों ने अवस्था के अनुकरण को नाटक कहा है- 'अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्' (दशरूपक 1/7)। यह अवस्था शारीरिक और मानसिक दोनों ही प्रकार की होती है। इसलिए अनुकरण चार प्रकार के अभिनय आंगिक, वाचिक, सात्विक और आहार्य द्वारा किया जाता है। इस तरह नाटक में अभिनय की प्रधानता होती है।



महत्वपूर्ण बिंदुः-

नाट्य साहित्य के अंतर्गत वृत्तियों का परिचय-

'वृत्ति' शब्द की उत्पत्ति 'वृत्त' धातु में 'तिन्न' प्रत्यय के योग से हुई है। नाट्य साहित्य में वृत्तियों का योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। भरतमुनी ने 'दशरूपकाध्याय' में वृत्ती को काव्य की जननी कहा है। वृत्तियों के भेद-भारती, कौशिकी, आरभटी और सात्त्वती।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. नाटक को दृश्य काव्य की श्रेणी में क्यों रखा जाता है?

प्रश्न-: 2. नाटक के तत्वों के नाम लिखिये?

प्रश्न-: 3. नाटक के आंगिक और वाचिक अभिनय में अंतर स्पष्ट कीजिए

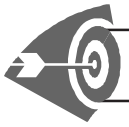
प्रश्न-: 4. नाटक में सामाजिक संदेश का महत्व किस प्रकार प्रदर्शित होता है?



2.7 सारांश

नाटक साहित्य की वह विधा है जो जीवन के विविध रंगों को दृश्य, भाव, ध्वनि और अभिनय के माध्यम से सजीव रूप में प्रस्तुत करती है। यह केवल शब्दों का खेल नहीं, बल्कि अभिनय और दृश्य का समन्वित रूप है, जिससे दर्शकों को घटनाएँ सीधे घटित होती प्रतीत होती हैं। नाटक को प्राचीन भारतीय आचार्यों ने दृश्य काव्य की श्रेणी में रखा और इसे जीवन के वास्तविक अनुकरण के रूप में प्रस्तुत किया। नाटक की सफलता इसके मुख्य तत्वों पर निर्भर करती है, जिनमें कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, परिवेश, उद्देश्य और संवाद शामिल हैं। कथावस्तु नाटक की मूल कहानी होती है, जिसे सरल, सुसंगत और रोमांचक होना चाहिए। इसे अधिकारिक और प्रासंगिक, दृश्य और सूच्य आदि भेदों में विभाजित किया जाता है और कथानक के विकास के लिए आरंभ, यत्न, प्रात्याशा, नियताप्ति और फलागम जैसे अवस्थाओं का पालन आवश्यक होता है। पात्र और चरित्र-चित्रण नाटक की सार्थकता में योगदान देते हैं, जिसमें नायक, नायिका और गौण पात्र शामिल होते हैं। नायक में नैतिक, शारीरिक और मानसिक गुणों की प्रधानता होती है, जबकि नायिका की भिन्न प्रकार की श्रेणियाँ (स्वकीया, परकीया, सामान्या) आयु, जाति और परिस्थिति के अनुसार परिभाषित होती हैं। अन्य गौण पात्र जैसे प्रतिनायक, पीठमई और विदूषक कथावस्तु को आगे बढ़ाने और हास्य, मनोरंजन तथा सजीवता जोड़ने का कार्य करते हैं। कथोपकथन या संवाद नाटक की मुख्य आधारशिला है, जो पात्रों की मानसिक स्थिति, भाव और देशकाल को प्रकट करता है। संवाद के प्रकार—सर्वश्राव्य, नियतश्राव्य और स्वगत—पात्रों के आपसी वार्तालाप और आंतरिक भावों के उद्घाटन में भूमिका निभाते हैं। परिवेश और उद्देश्य नाटक को प्रभावशाली बनाने में सहायक होते हैं; पात्रों की वेशभूषा, खान-पान, व्यवहार और आचार-विचार यथासंभव यथार्थ के अनुरूप होने चाहिए और नाटक का उद्देश्य दर्शकों में सामाजिक चेतना, मानवीय मूल्य और जीवन के अनुभव प्रस्तुत करना होता है। अभिनय नाटक की प्रमुख विशेषता है और इसे आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक रूपों में वर्गीकृत किया गया है। आंगिक अभिनय में शरीर, हाथ, भौंह और आंखों द्वारा भाव प्रकट किए जाते हैं, वाचिक में संवाद और ध्वनि प्रभाव शामिल होते हैं, आहार्य में वेशभूषा, मेकअप और मंच सज्जा का योगदान होता है, जबकि सात्विक अभिनय में मानसिक भावों का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। नाटक एक सामूहिक कला है, जिसमें स्थापत्य, चित्रकला, संगीत, प्रकाश, ध्वनि और मंच प्रबंधन जैसी विभिन्न कलाओं का समन्वय आवश्यक है। नाटक केवल अभिनय तक सीमित

नहीं रहता, बल्कि इसके पीछे कई विशेषज्ञ—प्रकाशक, मंच सज्जक, संगीतकार और तकनीकी सहायक—कार्यरत रहते हैं।



2.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- नाटक को दृश्य काव्य की श्रेणी में इसलिए रखा जाता है क्योंकि यह मंच पर काव्यात्मक संवाद, अभिनय, दृश्य प्रभाव और संगीतात्मकता के माध्यम से भावनाओं और विचारों को प्रभावी रूप में प्रस्तुत करता है। यह दर्शकों के लिए काव्य को जीवंत और दृश्य रूप में अनुभव कराने का माध्यम बनता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

पश्न 2 का उत्तर:- नाटक के प्रमुख तत्व कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, परिवेश, उद्देश्य, संवाद अर्थात शैली। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर:- नाटक में आंगिक अभिनय वह है जिसमें अभिनेता अपने शरीर, हाव-भाव, मुद्रा और क्रियाओं से भाव व्यक्त करता है, जबकि वाचिक अभिनय में संवादों, स्वर और भाषा के माध्यम से भावनाएँ प्रकट की जाती हैं। दोनों अभिनय एक-दूसरे के पूरक होते हैं और मंचीय प्रभाव को सजीव बनाते हैं। इस विषय की विस्तृत समझ के लिए इस इकाई का अध्ययन करें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- नाटक समाज का दर्पण होता है, जिसमें सामाजिक समस्याएँ, सुधार के विचार और नैतिक मूल्यों का चित्रण किया जाता है। इसके माध्यम से दर्शकों में जागरूकता, संवेदना और परिवर्तन की प्रेरणा उत्पन्न होती है। नाटक के माध्यम से समाज के उत्थान के आयामों को समझने के लिए इस इकाई को अवश्य पढ़ें।



2.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. बेनी, शेल्डन. (अनुवाद: कृष्ण दास). (1982). रंगमंच. लखनऊ: हिन्दी समिति, सूचना विभाग.
2. ओझा, दशरथ. (2005). हिन्दी नाटक: उद्भव और विकास. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस,
3. जैन, नेमिचन्द्र. (1998). भारतीय नाट्य परंपरा. भोपाल: मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी,
4. कुमार, रामेश्वर. (2010). नाट्यशास्त्र और भारतीय रंगमंच. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन,

5. शर्मा, प्रदीप. (2015). आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन,
6. वर्मा, सतीश. (2009). नाट्यशास्त्र: संस्कृति और अभिनय कला. जयपुर: प्रभात प्रकाशन.
7. त्रिपाठी, मनोज. (2012). भारतीय नाट्य और सामाजिक संदर्भ. लखनऊ: किताब घर.
8. भट्टाचार्य, अजय. (2018). रंगमंच और कला के विविध आयाम. नई दिल्ली: अनमोल प्रकाशन.
9. मिश्रा, कृष्ण. (2007). हिन्दी नाट्य और साहित्य. मुंबई: विकास प्रकाशन.
10. टंडन, रमेश. (2011). नाट्य कला और मानव व्यवहार. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास,

2.10 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. विषकम्भक क्या है?
2. स्वकीया और परकीया नायिका के बीच क्या अंतर है?
3. नाटक के तत्वों में नायक कितने प्रकार के होते हैं?
4. अर्थोपक्षेपक के भेद लिखिए?
5. आंगिक और वाचिक अभिनय में अंतर स्पष्ट कीजिए।

(ख) निम्नलिखित पश्नों के उत्तर दीजिये।

1. नाटक की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।
2. भारतीय साहित्यशास्त्र के अनुसार नाटक के तत्वों पर विस्तार से दृष्टि डाले।
3. नाटक में सामाजिक संदेश का महत्व किस प्रकार प्रदर्शित होता है?
4. नाटक में विभिन्न कलाओं (स्थापत्य, चित्रकला, संगीत, प्रकाश आदि) के समावेश का महत्व स्पष्ट कीजिए।

******

इकाई 3 : नाटक और रंगमंच (नाटक में रंगमंच की भूमिका और दोनों का संबंध)

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 रंगमच का अर्थ
3.4 रंगमंच की परिभाषा
3.5 हिन्दी नाटक में लोक रंगमंच परिचय
3.6 सारांश
3.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
3.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
3.9 अभ्यास प्रश्न

3.1 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन से आप–

- इस इकाई में आपको नाट्य साहित्य और रंगमंच की जानकारी प्रदान की जाएगी।
- हिंदी नाटक में रंगमंच की आवश्यकता को जान पाएंगे।
- रंगमंच का परिचय, हिन्दी में लोकनाट्य के प्रमुख रूप, रंगमंच विधान आदि को समझ सकेंगे।
- रंगमंच में अभिनय, निर्देशन और प्रदर्शन कलाओं में कौशल के विकास को देख पाएंगे।
- रंगमंच और नाटक के आपसी संबंध को गहराई से समझ पाएंगे।
- रंगमंच के आंतरिक और बाह्य स्वरूप का विश्लेषण कर सकेंगे।
- लोक रंगमंच और आधुनिक रंगमंच के स्वरूप तथा उनकी सांस्कृतिक भूमिका का अवलोकन कर सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना

अब तक आप नाटक के विकास क्रम को विस्तार से समझा है। पिछले पाठ में नाटक के प्रमुख तत्वों का विस्तार से वर्णन किया है। अब आप इस पाठ में रंगमंच का विस्तार से अध्ययन किया जाएगा। यह ज्ञात है कि नाटक और रंगमंच का एक गहरा और अटूट संबंध है। नाटक मानवीय अनुभवों और

भावनाओं को व्यक्त करता है, जबकि रंगमंच जीवंत रूप देने का माध्यम है। रंगमंच नाटक को मंच, प्रकाश, ध्वनि, पात्रों की अभिव्यक्ति, और संवाद के माध्यम से एक संपूर्ण रूप प्रदान करता है, जिससे जनता उस नाटक का मंचन देख सके। यह दर्शकों को नाटक की कहानी, विचार, और संदेश का अनुभव करने का अवसर देता है। रंगमंच नाटक के सार को जीवन में उतारता है और उसे सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का एक शक्तिशाली माध्यम बनाता है। दोनों का सह-अस्तित्व एक-दूसरे को समृद्ध और अर्थपूर्ण बनाता है। इसके साथ ही रंगमंच की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला है। अत: नाटक और रंगमंच मिलकर मानवीय भावनाओं और विचारों को संप्रेषित करने का एक सशक्त माध्यम बनाते हैं।

3.3 रंगमच शब्द का अर्थ

'रंगमंच' शब्द रंग और मंच इन दो शब्दों के योग से बना है। रंगमंच हिन्दी का 'रंगभूमि' और अंग्रेजी का स्टेज मात्र नहीं है। रंगमंच अंग्रेजी के थियेटर शब्द का पर्याय है। जिस प्रकार से थियेटर का वास्तु पक्ष 'स्टेज' है उसी प्रकार से रंगमंच का वास्तुपक्ष मंच, मण्डप या रंगभूमि है। 'रंग' और 'मंच' दोनों ही शब्द संस्कृत भाषा के हैं किन्तु इन दोनों का सम्मिलित प्रयोग संस्कृत नाट्यशास्त्र में देखने को नहीं मिलता है। रंगमंच एक अर्वाचीन शब्द है। इसे पूर्ण रूप से समझने के लिए इसके दोनों पदों रंग और मंच की अलग-अलग परिभाषा देना और जानना आवश्यक होता है।

रंग शब्द संस्कृत नाट्यशास्त्र में बहुलता से प्राप्त होता है रंग शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के रंज धातु से मानी गयी है। व्युत्पन्ति के अनुसार रंग एक पुलिंग संज्ञा है। धात्वर्थ के अनुसार रंग शब्द का अर्थ रंज (गति) अत्रवा, रंज (राग)+धत्र है, अर्थात् किसी दृश्य पदार्थ का वह गुण जो उसके आकार या रूप से भिन्न होता है और जिसका अनुमान केवल आंखों से होता है। रंग शब्द से ही संस्कृत में रंगभूमि, रंगशीर्ष, रंगपीठ आदि नाट्यशास्त्रीय शब्दों की प्रतिष्ठा की गयी है। इसी प्रकार के मिलते हुए पर्याय शब्द हिन्दी साहित्य में भी मिलते हैं। रामचरित मानस में धनुषयज्ञ के संदर्भ में रंगभूमि आये दोऊ भाई 'या' रंग अवनि तब मुनिहि दिखाई। रंगभूमि, रंगअवनि यज्ञ भूमि के लिए कहा गया था यह यज्ञ भूमि कोई यज्ञशाला नहीं थी बल्कि सीता स्वंयवर का स्थान था जहां सीतारामादि पात्रों द्वारा धर्नुभंग तथा विवाह का नाटक नृप मुनि रूपी प्रेक्षकों के समक्ष सम्पन्न हुआ था। रंग शब्द का अर्थ संस्कृत हिन्दी कोश में सार्वजनिक आमोद स्थली, सभाभवन, नृत्यगान और अभिनय दिया गया है। जबकि मानक

हिन्दी कोश में रंग शब्द का अर्थ मनोविनोद के लिए की जाने वाली मनुष्य एक जीवन जीता है और मर जाता है। जीवन के इस पूरे सफर में वह नाना प्रकार के भावों और संवेदनाओं से टकराता है। खुश होता है, दुखी होता है। रूठता है, मनाया जाता है। प्रेम करता है, नफरत भी करता है। भाव और संवेदना के स्तर पर वह सब कुछ देखता, सुनता और महसूसता है। किंतु उसका यह सब व्यापार केवल उसके अपने जीवन पर आधारित होता है। एक व्यक्ति एक जीवन में एक ही जीवन का आनन्द ले पाता है। मसलन एक पुरुष पिता होने के एहसास को तो जीता है। उसे अनुभूत कर उसमें रमता है। खुश होता है, जिम्मेदारी को धारण कर सार्थकता और संतुष्टि भी प्राप्त करता है किंतु वह माँ होने की खुशी नहीं महसूस कर सकता। माँ होने का सुख एक स्त्री ही महसूस कर सकती है। किंतु वहीं दूसरी ओर पिता होने को सुख भी एक स्त्री नहीं महसूस कर पाती। इसी तरह जीवन-जगत की तमाम भावनाओं, संवेदनाओं और एहसासों को एक ही जीवन में प्राप्त नहीं किया जा सकता। किंतु सभी प्रकार के भावों और संवेदनाओं को महसूस करने की उत्कंठा मनुष्य की नैसर्गिक फितरत है। हम एक ही जिन्दगी में अनेक जिन्दगियों का आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं। हमारी यही चाहत हमें कलाओं की ओर उन्मुख करती है। जब साहित्य, रंगमंच, फिल्म, चित्रकला और संगीत आदि कलाओं में हम विभिन्न प्रकार के भावों और संवेदनाओं को साधारणीकृत रूप में अनुभव करते हैं तो उससे एक खास तरह के आनन्द की अनुभूति होती है जिसे विद्वजन रसास्वाद कहते हैं। सिनेमा का हीरो जब आततई शक्तियों से लड़ता है तब अपने स्वयं के तटस्थ जीवन में बैठे हम, कहीं न कहीं उस जोश और जुनून को जी रहे होते हैं जो उस हीरो में परदे पर दिखलाई पड़ता है। वास्तविक जिंदगी में हमें किसी से प्यार न हो किंतु जब कोई प्रेम कहानी पढते हैं तब पात्रों के भीतर कहीं न हम खुद को एक प्रेमी के रूप में जी रहे होते हैं। इसी को कहते हैं एक जीवन के भीतर अनेक जीवन को जीना। जीवन सीमित है, और जीने की उत्कंठा अनंत। साहित्य और कलाएँ इसी उत्कंठा की पूरक हैं।

3.4 रंगमंच की परिभाषा

संसार के प्रत्येक देश का अपना-अपना रंगमंच होता है। रंगमंच एक जीवन्त कला है और युगानुकूल संस्कृति का अभिन्न अंग व प्रतिबिम्ब है। यह एक निष्क्रिय और स्थूल तत्त्व न होकर जीवन्त और क्रियाशील तत्त्व है। रंगमंच का सम्पूर्ण बोध उसके सूक्ष्म स्वरूप, कला और विज्ञान के विवेचन से व्याख्यायित हो जाता है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने रंगमंच को उसके

वास्तविक और पारिभाषिक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रसिद्ध रंग समीक्षक नेमिचन्द्र जैन ने रंगमंच को परिभाषिक रूप देते हुए कहा है- ''नाट्यकला सर्जनात्मक अभिव्यक्ति का वह रूप है जिसमें संवादमूलक आलेख या कथा को (जिसे हम नाटक कहते हैं) अभिनेताओं द्वारा रंगशिल्पियों की सहायता से किसी रंगमंच पर दर्शक समूह के सामने प्रदर्शित किया जाता है।'' इस परिभाषा में उन्होंने रंगमंच और उसके मुख्य मूल तत्त्वों को उद्घाटित किया है जो नाटक अभिनेता, रंगव्यवस्थापक, प्रेक्षक आदि हैं। उन्होंने रंगमंच को संस्कृति का जीवित स्रोत माना है जो मंच पर सक्रिय रूप में क्रिया करती हुई सजती संवरती रहती हैं। हिन्दी साहित्य कोश में रंगमंच को वह मंच बताया गया है जिस पर प्रेक्षकों के सम्मुख नाटक का अभिनय प्रदर्शित किया जाता है। अब इससे प्रेक्षागृह तथा नाटक दोनों का ही बोध होता है। यह परिभाषा रंगमंच के स्थूल रूप को ही परिभाषित करती है. जबकि रंगमंच का आन्तरिक संसार भी है। डॉ. अज्ञात लिखते है-''नाट्य मण्डप रंगमंच का स्थूल शरीर है। नाटक इसका सूक्ष्म शरीर है और अभिनयादि इसकी आत्मा या प्राण है रंगमंच एक साथ ही कला विज्ञान और योग का समन्वित अधिष्ठान है। उन्होंने अपनी परिभाषा में जीवन के प्रत्येक पक्ष को रखकर रंगमंच को विभिन्न कलाओं और विज्ञान का समन्वित रूप बताते हुए उसमें विशिष्ट उद्देश्यों को प्रतिष्ठित किया है। गोर्डन क्रेग ने अपने शब्दों में लिखा है- ''रंगमंच न अभिनय है और न नाटक या नृत्य है बल्कि उन सब तत्वों का समन्वय है जिनसे वह निर्मित होता है। रंगमंच की कलाओं का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन और उद्बोधन करना होता है, इसमें मनोरंजन को माध्यम बनाकर उड़द्बोधन का उद्देश्य अभिनय का आश्रय लेकर रंगमंच का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न साधन और सुविधाओं से सम्पन्न उस मंच पर अभिनय करके आस्वादकों का मनोरंजन कराया जाता है। रंगमंच एक विशेष प्रकार की कलात्मक विधा है जो सीमित अर्थों में वर्ग विशेष, समुदाय विशेष की अपेक्षा, समाज विशेष का प्रतिनिधित्व करता है। रंगमंच के सूक्ष्म स्वरूप का विश्लेषण करते हुए नरनारायण राय लिखते हैं-''आलोचना अपनी मूल्यांकन प्रक्रिया से तब सीधे रंगमंच से जुड़ी होती है जहाँ दृष्टव्य के संदर्भ में प्रस्तुत किये जा रहे नाटक का काव्य रूप परीक्ष्य होता है। रंगमंच एक ऐसा सेतु है जो नाटककार और दर्शक की कल्पना को जोड़ता है।'' नाट्य समीक्षकों ने रंगमंच के संबंध में एक नये तथ्य की संयोजना की ओर संकेत किया है कि नाटक का काव्य रंगमंच पर दर्शकों के सम्मुख आकर परीक्षित होता है क्योंकि दर्शक पक्ष अपनी मेधा, बुद्धि के बल पर उसका मूल्यांकन करता है। वास्तव में रंगमंच को दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक वाह्य पक्ष और दूसरा आन्तरिक पक्ष। बाह्य पक्ष तो वह है जिसके अन्तर्गत नाटक,

मंच, प्रस्तुति, अभिनेता, रंगशिल्पी, प्रेक्षागृह दर्शक समूह आदि आते हैं और आन्तरिक पक्ष वह है जिसमें दर्शकगण आते हैं जो अभिनीति नाटक के अनुभूति पक्ष से संबंधित होते हैं और मंचित नाट्य के साथ साधारणीकरण करके डूब जाते हैं और भावावेग में बह उठते हैं। नाटककार इसी अनुभूति मंचीय सत्यता को लाने का प्रयत्न अपनी रंगकृति में करता है।

रंगमंच की विशुद्ध व्याख्या करते हुए इन साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में कहा गया है– ''थियेटर व्यवहार और सिद्धान्त रूप में नाटकीय कला है जिसका वैयक्तिक स्वरूप 'भारतीय रंगमंच' 'मध्ययुगीन थियेटर' आदि विशेष शैली में निहित है'' रंगमंच पर अभिनीत नाटक को दर्शक जहां रुचि से देखते हैं वहीं निर्देशक उसे जीवन्त रूप में निर्देशित करने में ही अपनी सार्थकता समझता है। युग–युग से एक के बाद एक दर्शक मंच की ओर दृष्टि गड़ाये नाटक की प्रतीक्षा करते रहे हैं इसको स्वीकार करते हुए नेमिच्द्रं जैन लिखते हैं– ''रंगमंच मनोरंजन का रूप होकर भी उन सब मौलिक मूल्यों और क्रियाओं के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है, जिसके बिना संस्कृति की कोई सार्थकता नहीं।'' रंगमंच के इसी महत सत्य को स्वीकार करते हुए परिभाषा के माध्यम से पश्चिमी कॉन्स्टेंटिन स्टैनिस्लावस्की ने उजागर किया है– ''The theater should not be a place in which to e&hibit Scenery it Should be a place in which the entire beauty of life can be unfolded---the inner beauty and the meaning of life.'' यहीं नाटक अथवा रंगमंच की सत्यप्रति है जो गहन अनुभूति के रूप में रंगमंच का अनुभूति पक्ष है।

हिंदी रंगमंच–

सोलहवीं शती के पूर्वार्थ में हिन्दी रंगमंच का प्रारम्भ दो धाराओं के साथ होता है। पहली थारा में सन् 1533 में या उस के आस–पास 'विद्याविलाप' नामक नाटक मंचन नेपाल में हुआ जो तीन चार सौ वर्षों तक लगातार चलता रहा इसे राज्याश्रय तथा लोकाश्रय दोनों प्राप्त था, विभिन्न पर्वों राज्योत्सवों और राजकुमारों के जन्म विवाह आदि संस्कारों के अवसर पर खेले जाने वाले इन नाटकों का प्रचार–प्रसार केवल नेपाल तक ही सीमित रहा और ये रंगमंच व्यावसायिक नहीं थे। दूसरी धारा में ब्रज प्रदेश में रास लीला नाटकों ने जन्म लिया तथा लोकाश्रय पाकर उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में सड़दयों का वित्तरंजन करते रहे। इन लोकनाटकों से प्रेरित होकर ब्रजभाषा में कई नाटक लिखे गये जिनके मंचित होने का उल्लेख नहीं मिलता अत: अनुमान किया जाता है कि यह धारा ब्रजभाषा के नाटकों के साथ सूख कर विलुप्त हो गयी। 18वीं शती में अंग्रेजों का शासन स्थिर हो जाने के बाद हिन्दी रंगमंच को पुनर्जीवन मिला। ''भारतीय भाषाओं के साथ हिन्दी में भी आधुनिक रंगमंच प्रारम्भ हुआ तो यह

जहाँ एक और अंग्रेजी साहित्य के परिचय अध्ययन का अंग्रेज शासकों के मनोरंजन प्रकारों के अनुकरण का परिणाम था, वहीं साथ ही वह देश की प्राचीन संस्कृति और मध्य युगीन प्रादेशिक नाट्यपरम्पराओं के नये सिरे से अन्वेषण का परिणाम भी था। यही कारण है कि उस समय देश की लगभग प्रत्येक भाषा में जो नई रंगमंचीय गतिविधि प्रारम्भ हुई उसकी तत्कालिक प्रेरणा विजातीय होने पर भी उसकी भाववस्तु और रूपाकृति किसी भी पाश्चात्य नाट्य प्रकार से भिन्न ही नहीं थी बल्कि समसामयिक प्रादेशिक नाट्य रूपों से अत्यधिक प्रभावित थी।'' इस तरह 16वीं शती के उत्तरार्थ में एक ओर रामलीला, रास लीला, नौटंकी आदि लोक नाट्य परम्परा विद्यमान थी तो दूसरी ओर बड़े बड़े नगरों में विदेशी नाटकों का मंथन भी लोगों को अपनी और आकृष्ट कर रहा था।

लखनऊ के नबाव वाजिद अली शाह द्वारा लिखित एवं निर्देशित 'रहस' का मंचन 1843 ई. में तथा उन्हीं द्वारा रचित 'दरयाएत अश्शुक' सन् 1850 ई. में मंचित हुआ। सन् 1855 ई. में सैय्यद आगा हसन 'अमानत' की रचना 'इन्दरसभा' का मंचन लखनऊ में किया गया। ''नबाव वाजिद अली शाह का रंगमंच शाही रहसखाने तक ही सीमित था किन्तु 'अमानत' की इन्दर सभा ने अपनी प्रसिद्धि द्वारा जनता के रंगमंच का द्वार खोला। उसके रचनाकाल में सभी लोकनाटकों में अश्लीलता आ गई थी, अमानत की इन्दर सभा भी उस परम्परा का निर्वाह करती है।'' इन्दर सभा से पहले सन् 1853 ई. में भी विष्णुदास अमृतभावे की हिन्दू ड्रामेटिक कोर द्वारा 'राजा गोपीचन्द्र और जालन्धर' का प्रदर्शन बम्बई में हुआ, फिर भी इन नाटकों के मंचन से हिन्दी रंगमंच को विकास की कोई सुनिश्चत दिशा नहीं मिल सकी। ''सन 1868 तक और कहीं हिन्दी नाटक के मंचन का समाचार प्राप्त नहीं होता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने सर्वप्रथम इसका उल्लेख किया है कि हिन्दी भाषा में जो पहला नाटक खेला गया वह 'जानकी मंगल' था। स्वर्गवासी मित्रवर बाबू ऐश्वर्य नारायण सिंह के प्रयत्न से चैत्र शुक्ल सम्वत् 1628 में बनारस थियेटर में बड़ी धूम-धाम से यह खेला गया।'' यहाँ यह उल्लेखनीय है कि डॉ. अज्ञात जी हिन्दी के प्रथम अभिनीत नाटक का नाम विद्याविलाप मानते हैं। ''सन 1533 ई0 में था इसके आस-पास भाँटगाँव (भक्तपत्तन) नेपाल में अभिनीत विद्याविलाप ही हिन्दी का प्रथम (विधिवत अभिनीत) नाटक है। वास्तव में इन्दर सभा और जानकी मंगल का मंचन शौकिया तौर पर हुआ था। राजा गोपीचन्द्र और जालन्दर की प्रस्तुति व्यावसायिक रूप में हुई थी। इस तरह हिन्दी रंगमंच की दो धाराओं का प्रारम्भ होता है (1) व्यावसायिक रंगमंच और (2) अव्यावसायिक रंगमंच (शौकिया रंगमंच) व्यावसायिक रंगमंच में पारसी नाटक मण्डलियों का रंगकर्म आता है।

जिनका उद्देश्य मूल रूप से धन कमाना था तथा शौकिया या आव्यावसायिक रंगमंच के अन्तर्गत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, माघव शुक्ल और जयशंकर प्रसाद जैसे समर्पित लोगों का रंगकर्म आता है जिनका प्रमुख उद्देश्य धनार्जन न होकर एक सुरुचि सम्पत्र रंगमंच को निर्मित करनी थी। आधुनिक हिन्दी रंगमंच के विकास में इन दोनों का योगदान है।

3.5 हिन्दी नाटक में लोक रंगमंच परिचय

हिन्दी नाटक में लोक रंगमंच का महत्व अत्यधिक है, क्योंकि यह न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि भारतीय संस्कृति, सामाजिक मूल्य और परंपराओं का जीवंत प्रतिबिंब भी है। इसका उद्भव ग्रामीण और स्थानीय समुदायों में हुआ, जहाँ इसे मुख्य रूप से त्योहारों, धार्मिक अनुष्ठानों, विवाह और सामाजिक आयोजनों के अवसर पर प्रस्तुत किया जाता था। लोक रंगमंच का मूल उद्देश्य समाज के जनमानस को मनोरंजन के साथ-साथ नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संदेश प्रदान करना है। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता इसका सरल, सहज और सादगीपूर्ण मंचन है, जो कलाकारों और दर्शकों के बीच सीधे संवाद और सहभागिता स्थापित करता है। कलाकार अपने अभिनय में भावों की सूक्ष्मताओं और सामाजिक संदर्भों को जीवंत रूप में दर्शाते हैं, जिससे दर्शक केवल देखने वाले नहीं रह जाते, बल्कि नाटक की कहानी और पात्रों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ जाते हैं। लोक रंगमंच में संगीत, नृत्य और गीत का महत्वपूर्ण स्थान है, जो प्रस्तुति को और प्रभावशाली बनाता है। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश की नौटंकी और रामलीला, ब्रज क्षेत्र की रासलीला, महाराष्ट्र का तमाशा, राजस्थान का खयाल, मध्य प्रदेश का नाचा, असम की अंकिया, बिहार की बिदेसिया, तमिलनाडू का थेरुक्कथु और केरल का कृष्णट्टम जैसी प्रस्तुतियाँ दर्शकों के मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक संदेश और सांस्कृतिक चेतना भी फैलाती हैं। ये सभी रूप न केवल मनोरंजन का साधन हैं, बल्कि ग्रामीण समाज की मान्यताओं, जीवन शैली, धार्मिक रीति-रिवाज और लोक परंपराओं का संवाहक भी हैं। लोक रंगमंच में स्थानीय भाषा, बोली, सांस्कृतिक प्रतीक और परंपरागत पोशाक का प्रयोग इसे दर्शकों के लिए और अधिक सजीव और प्रासंगिक बनाता है। लोक रंगमंच का प्रभाव केवल मंच तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह समाज के मानसिक और सांस्कृतिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

लोक रंगमंच की भूमिका केवल कहानी प्रस्तुत करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक जागरूकता और सांस्कृतिक संरक्षण का एक शक्तिशाली

माध्यम भी है। प्रस्तुतियों में ग्रामीण जीवन, सामाजिक संघर्ष, नैतिक मूल्यों, महिलाओं की स्थिति, पर्यावरण संरक्षण, शिक्षा और सामाजिक समानता जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को संवेदनशील और संवादात्मक तरीके से दर्शाया जाता है। कलाकार और दर्शक के बीच की सहभागिता और संवाद प्रस्तुति को हर बार नया अनुभव बनाता है। दर्शक अपनी प्रतिक्रियाओं और उत्साह के माध्यम से कलाकार को मार्गदर्शन देते हैं, जिससे प्रदर्शन हर बार अनोखा और समय के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश के अनुरूप ढलता है। लोक रंगमंच की यह विशेषता इसे केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज की सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण और संवर्धन का माध्यम बनाती है। इसकी सरलता, स्वाभाविकता और स्थानीयता इसे दर्शकों के लिए सजीव अनुभव बनाती है और उन्हें उनके स्वयं के सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश से जोड़ती है। लोक रंगमंच न केवल नाट्य कला की तकनीक और प्रस्तुति का संयोजन है, बल्कि यह सामाजिक संवाद, नैतिक शिक्षा और सांस्कृतिक संवेदनाओं के प्रसार का माध्यम भी है। इसलिए हिंदी नाटक में लोक रंगमंच की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है; यह समाज को जोड़ने, सांस्कृतिक मूल्य बनाए रखने और मनोरंजन तथा शिक्षा का समन्वित अनुभव प्रदान करने में सक्षम है। लोक रंगमंच केवल एक प्रस्तुति का माध्यम नहीं, बल्कि एक जीवंत, सांस्कृतिक और सामाजिक मंच है, जो अपनी सहजता, स्वाभाविकता और पारंपरिक रूपों के माध्यम से आज भी दर्शकों के मन और समाज में अपनी गहरी छाप छोड़ता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. रंगमंच की परिभाषा क्या है?

प्रश्न-: 2. लोक रंगमंच के प्रमुख रूपों के उदाहरण लिखिए?

प्रश्न-: 3. रंगमंच और नाटक के संबंध पर प्रकाश डालें।

प्रश्न-: 4. रंगमंच के बाह्य और आंतरिक पक्ष क्या हैं?



3.6 सारांश

आपने इस अध्याय में नाटक और रंगमंच के आपसी संबंध के संदर्भ में अध्ययन किया है, जो मानवीय भावनाओं, विचारों और कहानियों को प्रभावशाली ढंग से दर्शक के सम्मुख प्रस्तुत करने में मदद करता है। नाटकअनुभवों और सामाजिक, राजनीतिक आदि मुद्दों को शब्दों और संवादों के माध्यम से व्यक्त करता है। रंगमंच जीवन के विविध पहलुओं को नाटक के माध्यम से

मंच पर जीवंत बनाता है, इसे अभिनय, दृश्य प्रभाव, संगीत और सजावट के माध्यम से दर्शकों तक पहुँचाता है। रंगमंच नाटक को सजीव अनुभव में प्रदान करता है, जिससे दर्शकों के साथ भावनात्मक और सांस्कृतिक जुड़ाव होता है। इसके संदर्भ में लोक रंगमंच, पारंपरिक नाट्य विधाओं और आधुनिक रंगमंच का प्रभाव भी समाहित है।

3.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- रंगमंचवह कला है जिसके अंतर्गत नाटक, अभिनय, संगीत, नृत्य, और दृश्य प्रभावों के माध्यम से भावनाओं, विचारों और कहानियों को प्रस्तुत किया जाता है। यह दर्शकों और कलाकारों के बीच संवाद का माध्यम बनता है, जिससे सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यक्तिगत भावनाएँ व्यक्त होती हैं। संक्षेप में, रंगमंच जीवन और कला का संगम है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर: - लोक रंगमंच के प्रमुख रूपों मेंनौटंकी, रामलीला औररासलीला (उत्तर प्रदेश), तमाशा (महाराष्ट्र), खयाल(राजस्थान), यक्षगान (दक्षिण भारत) आदि हैं। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते हैं।

प्रश्न 3 का उत्तर :- नाटक भाव व्यक्त करता है और रंगमंच उसे जीवन्त रूप प्रदान करता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- बाह्य—मंच, नाटक, अभिनेता, प्रस्तुति; आंतरिक—दर्शक की अनुभूति और भाव। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते हैं।

3.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. ब्रैंडर, मैथ्यू. (2005). नाटक साहित्य का अध्ययन (इन्दुजा अवस्थी, अनुवाद). आत्माराम एंड संस, दिल्ली।
2. वत्सयायन, कपिला. (2010). पारंपरिक भारतीय रंगमंच: अनंत धाराएँ (बदिउज्जमा, अनुवाद). नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
3. वर्मा, राजकुमार; गुप्त, जगदीश; पाण्डेय, रामजी. (2012). हिन्दी नाटक और रंगमंच. हिंदुस्तानी अकादेमी, इलाहाबाद।
4. जैन, नेमिचन्द्र. (2008). रंगमंच: सिद्धांत और अनुभव. राष्ट्रीय प्रकाशन, दिल्ली।

5. राय, नरनारायण. (2015). नाट्य कला और रंगमंच. प्रकाशन गृह, भोपाल।
6. ज्ञात, डॉ. (2011). हिंदी रंगमंच का इतिहास. साहित्य निकेतन, बनारस।
7. क्रेग, गार्डन. (2000). The Art of Theatre. O&ford University Press, London।
8. वत्स, अंशुल. (2018). लोक रंगमंच और सामाजिक संदेश. साहित्य संगम, जयपुर।
9. शर्मा, सुरेश. (2014). हिंदी नाट्य विधाएँ और मंचन कला. ज्ञानदीप प्रकाशन, दिल्ली।
10. मिश्रा, प्रिया. (2016). भारतीय रंगमंच: इतिहास और परंपरा. नव प्रकाशन, लखनऊ।

3.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. भरतमुनि के द्वारा बताए गये रंगमंच के प्रकार को लिखिए?
2. रंगमंच की परिभाषा क्या है?
3. लोक रंगमंच क्या है? उसके उदाहरण बताये।
4. रंगमंच के भाग क्या है?
5. रंगमंच और नाटक के संबंध को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. हिन्दी रंगमंच के संदर्भ में एक आलेख प्रस्तुत कीजिए।
2. रंगमंच में अभिनय, निर्देशन और प्रदर्शन कलाओं पर प्रकाश डालिये।
3. रंगमंच के विधान के संदर्भ में विस्तार से लिखे।
4. रंगमंच विधान के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से लिखिए।
5. आधुनिक और पारंपरिक रंगमंच के बीच तुलना कीजिए।

******

इकाई 4 – अंधेर नगरी (भाग 1) कथावस्तु की समीक्षा और वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता

4.1 उद्देश्य
4.2 प्रस्तावना
4.3 'अंधेर नगरी' नाटक की कथावस्तु का सार
4.4 'अंधेर नगरी' नाटक की पात्र योजना
4.5 'अंधेर नगरी' नाटक की कथावस्तु की विशेषताएँ
4.6 सारांश
4.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
4.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
4.9 अभ्यास प्रश्न

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप–

- नाटक में चित्रित शासन–व्यवस्था का आज के संदर्भ में वर्णन कर पाएंगे।
- न्यायपूर्ण व्यवस्था के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कर सकते है।
- नाटक में निहित व्यंग्य को समझकर उसका उल्लेख कर सकेंगे।
- पात्रों के व्यवहार और उनके सामाजिक प्रतिनिधित्व को विश्लेषित कर सकेंगे।
- नाटक के माध्यम से तत्कालीन समाज की राजनीतिक और आर्थिक असमानताओं की पहचान कर सकेंगे।
- प्रहसन नाटक की संरचना और उसकी शैलीगत विशेषताओं को समझ कर व्याख्या कर सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना

नाटक में कथावस्तु महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। कथावस्तु इतिहास, कल्पना, जनश्रुति, भावानुभावों, विचार–विमर्श आदि समस्याओं को प्रदर्शित करता है। 'अंधेर नगरी' नाटक छः दृश्यों में विभक्त कथावस्तु लोक–प्रचलित कथा पर केन्द्रित है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा विदेशी संस्कृति की चमक धमक के सम्मुख भारतीय संस्कृति के मूल्यों को बचाए रखने का प्रयास किया है।

इस नाटक में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने रोचकता और व्यंग्यात्मक ढंग से नाटक के कथावस्तु को व्यक्त किया है। 'अंधेर नगरी' एक प्रहसन नाटक है। प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत आप 'अंधेर नगरी' नाटक के कथानक, उसके विविध आयामों और उसकी विशेषताओं का अध्ययन करेंगे।

4.3 'अंधेर नगरी' नाटक की कथावस्तु का सार

किसी नाटक में कथावस्तु ही वह मूल आधार है जिस पर सारी कथा की विशेषताओं और उद्देश्य का ताना-बाना बुना जाता है। 'अन्धेर नगरी' की कथावस्तु कल्पना को सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर आश्रित कर के प्रस्तुत किया गया है। इसमें अंग्रेजी शासन काल की दुर्व्यवस्था और तत्कालीन समाज की दीन-हीन स्थिति को प्रकट किया है। यह एक प्रहसन है जिस का कथानक अंधेर नगरी कथा-सार सीधा सादा है, इसमें कहीं कोई वक्तता नहीं है। इस नाटक का विभाजन छ: अंकों में हुआ है जिन्हें लेखक के बाहय प्रान्त, बाजार, जंगल, राजसभा, अरण्य और श्मशान नाम से व्यंजित किया है। कथा का प्रवाह धीरे-धीरे आगे बढ़ता है और चरम उत्कर्ष की सृष्टि करता है। 'बाह्य प्रान्त' में महन्त जी अपने दो चेलों नारायण दास और गोवर्धन दास के साथ रामभजन करते हुए मंच पर प्रवेश करते हैं। महन्त जी अपने चेलों को पूर्व और पश्चिम दिशाओं में जाने के लिए कहते हैं ताकि वे वहां से भीख ला सके। गोवर्धनदास चौपट राजा की अंधेर नगरी में पहुंचता है वह देखते हैं कि बाजार में तरह-तरह की वस्तुएं बिक रही है और सभी का मूल्य टके सेर है। उसे आश्चर्य होता है। गुरु के समझाने के बाद भी यह सदा के लिए वहीं रहना चाहता है ताकि वह टके सेर के भाव से बहुत अच्छा खा सकें चौपट राजा एक बकरी के दीवार के नीचे दब कर मर जाने के अपराध में निरपराधी कोतवाल को फांसी की सजा सुना देता है लेकिन उसकी गर्दन में फाँसी का बड़े आकार का फंदा पूरा नहीं आता जिस कारण गोवर्धन की मोटी गर्दन उसमें डाल कर उसे लटका देने का निर्णय किया जाता है लेकिन ठीक समय पर गुरु जी उसे बचा लेते हैं और चौपट राजा अपनी मूर्खता से स्वयं फांसी पर चढ़ जाता है। लेखक ने नियोजित ढंग से कथा को गति प्रदान की है लेकिन इस नाटक के केन्द्र बिन्दु दो ही है। बाजार का दृश्य और राजसभा के द्वारा लेखक ने नगर की अन्धी और अविवेकपूर्ण व्यवस्था का परिचय दिया है। जिसका समापन राजा की फांसी के साथ होता है। नाटक के आरम्भ में जिस हास्य की दृष्टि आरम्भ होती है वह निरन्तर कथा प्रवाह के साथ बढ़ती ही जाती है और नाटक के अन्तिम दृश्य में दर्शक या पाठक खुलकर जोर से हंस पड़ता है। जब दीवार

के नीचे बकरी के दब कर मर जाने का दृश्य आता है और उसका दोष एक से दूसरे और दूसरे से तीसरे के सिर मड़ा जाता है तो पाठक बिल्कुल भी नहीं सोच पाता कि इसके कारण अन्त में फाँसी का फंदा स्वयं राजा के अपने ही गले में पड़ जाएगा।

वर्तमान समय में इसका प्रभाव :-

'अंधेर नगरी' भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाटकों में सबसे अधिक चर्चित नाटक है। इस नाटक की लोकप्रियता का प्रभाव 130 वर्षों के बाद भी जनमानस की कहावतों में जीवित है। आज भी जब कोई अन्याय, असमानता और भ्रष्टाचार से त्रस्त होता है तो कहता है 'अंधेर नगरी' चौपट राजा। टके सेर भाजी टके सेर खाजा। भारतेन्दु ने 'अंधेर नगरी प्रहसन यूँ तो बनारस नेशनल थियेटर के लिये सन् 1881 ई. में लिखा था जो लिखने वाले दिन ही दशाश्वमेध घाट पर अभिनीत भी हुआ था। यह नाटक भारतेन्दु की व्यंग्य क्षमता का प्रमाण है। एक लोकप्रिय प्रहसन जिसका राजनीतिक अर्थ समय के साथ हर दौर में प्रासंगिक है। राज्य कुव्यवस्था, भ्रष्टाचार, जातिवाद और शासक वर्ग के दंभ से उत्पन्न अराजकता पर 'अंधेर नगरी' तीखा व्यंग्य नाटक है। पहले दृश्य में एक महन्त अपने दो चेलों के साथ नगर में राम भजन गाते हुए प्रवेश करता है। महन्त के शिष्यों के नाम गोबरधन दास और नारायण दास है। महन्त अपने शिष्य नारायण दास को निर्देश देता है और कहता है, ''यह नगर दूर से तो बड़ा सुन्दर दिखाई देता हैं'',दूर से बड़ा सुन्दर कहना महन्त की परिपक्कता और अनुभव को दर्शाता है कि प्रथम दृष्टि में ही किसी व्यक्ति अथवा वस्तु पर अपना मत नहीं व्यक्त करना चाहिए। महन्त दोनों शिष्यों को अलग-अलग दिशाओं में भिक्षा लाने के लिए भेजता है और साथ ही दोनों शिष्यों को लोभ न करने की शिक्षा भी देता है। ''लोभ पाप का मूल है, लोभ मिटावत मान''।

आज भी जब कोई अन्याय, असमानता और भ्रष्टाचार से त्रस्त होता है तो कहता है-'अंधेर नगरी चौपट राजा। टके सेर भाजी, टके सेर खाजा। भारतेन्दु ने अंधेर नगरी' प्रहसन यूँ तो बनारस नेशनल थियेटर के लिये 1881 में लिखा था, जो लिखने वाले दिन ही दशाश्वमेध घाट पर अभिनीत भी हुआ था। एक लोकप्रिय प्रहसन जिसका राजनीतिक अर्थ समय के साथ हर दौर में प्रासंगिक है। राज्य कुव्यवस्था, भ्रष्टाचार, जातिवाद और शासक वर्ग के दंभ से उत्पन्न अराजकता पर 'अंधेर नगरी' तीखा व्यंग्य नाटक है। पहले दृश्य में एक महन्त अपने दो चेलों के साथ नगर में राम भजन गाते हुए प्रवेश करता है। महन्त के शिष्यों के नाम गोबरधन दास और नारायण दास है। महन्त अपने शिष्य नारायण दास को निर्देश देता है और कहता है, 'यह नगर दूर से तो बड़ा सुन्दर दिखाई देता हैं','दूर से बड़ा सुन्दर' कहना महन्त की परिपक्कता और अनुभव

को दर्शाता है कि प्रथम दृष्टि में ही किसी व्यक्ति अथवा वस्तु पर अपना मत नहीं व्यक्त करना चाहिए। महन्त दोनों शिष्यों को अलग-अलग दिशाओं में भिक्षा लाने के लिए भेजता है और साथ ही दोनों शिष्यों को लोभ न करने की शिक्षा भी देता है। 'लोभ पाप अंधेर नगरी के दूसरे अंक में बाजार का दृश्य हैं बाजार में सब खाने की दुकानें हैं। कबाब वाला, चने जोर गरम वाला, नारंगी वाला, हलवाई, कुंजड़िन, मुगल मेवे वाला, पाचक वाला, मछली वाला, बनिया और जात वाला (ब्राहमण) बाजार में आवश्यकता की हर वस्तु बिक रहीं है। हर सामान बेचने वाला अपने सामान की विशेषताओं का बखान अपनी भाषा में कर रहा है। भारतेन्दु उसी जन भाषा का प्रयोग सटीक शब्दों और उपमाओं द्वारा किया जो भारतेन्दु की साधारण जन की भाषा पर अधिकार शक्ति को दर्शाता है। बाजार की विशेषता है कि 'हर चीज का मूल्य टके सेर है'।

''अंधेर नगरी चौपट राजा।
टके सेर भाजी टके सेरखाजा।।''

कबाब वाला अपने कबाबों को गरम, चौरासी मसाले वाला और चटपटा बता रहा है। दाम टके सेर। चना जोर गरम बेचने वाला घासीराम अपने चनों की विशेषता बताता है कि उसका चना तौकी और मैना नाम की प्रसिद्ध वैश्याऐं भी खाती हैं। हर सामान बेचने वाले की बोली भिन्न और खास है। जिसमें ग्राहकों के लिए प्रलोभन ओर प्रचार भी है। दाम वही टके सेर। चना वाले के संवादों में व्यंग्य और सरल हास परिहास भी है और अर्थ पूर्ण शब्द बाण भी है।

''चना हाकिम सब जो खाते।
सब पर दूना टिकस लगाते।।''

चने वाले की बोली में नौकरशाही की मनमानी और हठधर्मी साफ झलकती है। नारंगी वाला नारंगी को अलग अलग मशहूर जगहों का नाम लेकर उनके स्वाद की विशेषता केवड़ा, नींबू मीठा नींबू सुन्दर रंग की आवज लगाता है। नारंगी वाले की भाषा को कुछ विद्वानों ने अश्लील बताया। परन्तु भारतेन्दु ने बाजार के दृश्य में हाट बाजार की बोली को ही पात्रों से बुलवाया है। जैसा की हर दुकानदार अपने माल को बेचने के लिए बोलता है। यह सरलता और सजीवता ही भारतेनदु के लेखन की विशेषता हैं हलवाई अपनी मिठाईयों, जलेबी, इमरती, लड्डू, गुलाब जामुन, खुरमा, बूँदी, बरफी की तारीफ करता है। भूखें लड्डू के लिए 'जो खाय सो भी पछताय, जो न खाय सो भी पछताय' की आवाज लगा रहा है। साथ ही समोसा, कचौडी, दालमोठ, रेवडी और पाप? का वर्णन करता हुआ कहता है। खाजा ले जा खाजा। टके सेर खाजा।

कुंजड़िन सारी सब्जियों के नाम पुकारने के साथ कहती हैं जैसे काजी वैसे पाजी। रैयत राजी टके सेर भाजी। कुंजड़िन के मुख से 'हिन्दुस्तां का मेवा

फूट और बैर कहलवाकर भारतेन्दु ने चुभने वाला व्यंग्य किया है जो फलों के नाम को आधार बनाकर तत्कालीन भारतीय समाज की कमजोरी और पतन के कारण को इंगित करता है। मुगल अपना मेवा भी टके सेर बेच रहा है। सबसे तीखा, आक्रामक और अंग्रेजी राजतन्त्र की पोल खोलने वाला व्यंग्य पाचक वाले (चूरन वाले) का है-

''चूरन अमले सब जो खावे। दूनी रिशवत तुरंत पचावै।
चूरन पुलिस वाले खाते। सब कानून हजम कर जाते।''

चूरन का भाव भी टके सेर है। मछली भी टके सेर बिक रही है। आटा, चावल और चीनी सभी का दाम टके सेर है। जात वाला (ब्राहमण) अपनी जात को टके सेर बेच रहा है। टके में ब्राहमण को धोबी और धोबी को ब्राहमण टके में झूठ को सच, ब्राहमण को मुसलमान और क्रिस्तान (ईसाई) बनाने को कहता है। टके में धर्म, प्रतिष्ठा बेचने, झूठी गवाही देने, पाप को पुण्य बताने, कुल, मर्यादा, वेष, धर्म सब टके सेर में बिक रहे हैं। महन्त का शिष्य इस नगर में ही रहने का आग्रह करता है। जबकि महन्त अन्धेर नगरी में एक क्षण भी रुकने को तैयार नहीं होता। महन्त कहता है कि-

''सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास, ऐसे देस कुदेस में, कवहुँ न कीजे वास'' गोबरधन दास अंधेर नगरी में ही रुक जाता है। महन्त उसे संकट में स्मरण करने का आदेश दे कर दूसरे चेले नारायण दास के साथ अन्यत्र चले जाते हैं।नाटक के चौथे अंक में राजसभा का दृश्य है। भारतेन्दु ने हास परिहास के साथ ही राजा के निकम्मेपन, आलस, भोग विलास और उसकी बुद्धिहीनता का चित्रण किया है। जो पान खाने की आवाज को सुपनखा का आना समझकर भागने लगता है राजा का मन्त्री इसका दोष तमोली पर लगाता है और बुद्धि विवेकहीन राजा तमोली को दो सौ कोड़े लगाने का हुक्म देता है। दूसरे दृश्य में फरियादी का आगमन होता है जो बनिये की दीवार गिरने से अपनी बकरी के मरने पर न्याय माँगता है राजा पहले दीवार को पकड़ लाने का हुक्म देता है। भारतेन्दु राजा की अज्ञानता और न्याय के प्रति लापरवाही को तीखा व्यंग्य बना देते हैं, जिससे नाटक देखने या पढ़ने वाला बरबस ही हँसने लगता है। राजा फिर कल्लू बनिये को उसके स्वयं को निरपराध बत्ताने और कारीगर पर कमजोर दीवार बनाने का इल्जाम लगाने पर कारीगर से चूने वाले पर फिर भिश्ती, कसाई, गड़रिये ओर अन्त में शहर कोतवाल पर आरोप लगाता है। राजा शहर कोतवाल को फाँसी पर लटकाने का दण्ड देता है। पाँचवे अंक में अराजकता और अन्याय पर व्यंग्य हैं राजा के सिपाही महन्त के चेले को पकड़ लेते हैं क्योंकि उसकी गर्दन मोटी है और फाँसी का फंदा कोतवाल के गले से बड़ा है। औचित्य पर इससे प्रखर व्यंग्य और क्या हो सकता हैं। चेले की

करुण पुकार पर महन्त का आगमन होता है और महन्त अपने चेले गोबरधन दास को एक युक्ति बताते हैं और गुरु शिष्य दोनों फाँसी पर चढ़ने की जिद करते हैं। राजा के पूछने पर महन्त का यह संवाद कि आज मरने वाला सीधा स्वर्ग जायेगा पर सभी फाँसी पर चढ़ने को अपने को प्रस्तुत करते हैं। भारतेन्दु ने अच्छे बुरे सारे कर्मों के लिए राजा मन्त्री और सारे लोगों के आग्रह को स्वार्थ लिप्तता को उजागर किया है। अन्त में राजा स्वयं फाँसी के तख्ते पर चढ़ जाता है और स्वर्ग जाने के लालच में फाँसी लगा लेता है। अंधेर नगरी नाटक पर श्री सत्य प्रकाश मिश्र का यह कथन कितना प्रासांगिक हैं। ''यह नाटक इस अर्थ से समकालीन नाटक है कि यह किसी भी समय के अनाचार, भ्रष्टाचार, विवेक शून्यता और मनमाने पन पर रोशनी डालता है। इस प्रहसन में व्यंग्य के माध्यम से जो कुछ भी कहा गया है, उतना ही अधिक कहने की गुंजाइश भी है। रंग कर्मी और कुशल निर्देशक इस नाटक में बहुत कुछ समावेश करने की क्षमता का इस्तेमाल करके अपने समय की समस्याओं को रेखांकित करते हुएउसका उत्तर खोज सकते हैं।''

सामाजिक व्यभिचार में भ्रष्टाचार सदैव देश को खोखला बनाये रहा है। भारतेन्दु जी ने बड़े साहस और जिन्दादिली से कुत्सित वृत्तियों पर नजर डाली है और उस उखाड़ फेंकने का भरपूर प्रयास किया है। भ्रष्टाचार की जड़े हर देश को खोखला करती रही है। भारतेन्दु के समय भी रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार चरमसीमा पर था। देश का सदैव दुर्भाग्य रहा है इस भ्रष्टचार के रंग में रंगकर छोटा-बड़ा हर वर्ग का मनुष्य सदैव गद्दारी करता रहा है। इसमें सन्देह ही क्या था कि राजा विदेश रहता था। न्याय और व्यवस्था के नाम अंधाधुंध चल रही थी। नाटक देखने और पढ़ने वाले अन्त में यही कहते हैं, अंधेरी नगरी के चौपट राजाओं का यही हाल होना चाहिए।

कवि प्रभाकर माचवे ने भी लिखा है ''यहाँ अमूल्य वस्तुएँ भी बेची जाती हैं- मसलन सतीत्व, प्रमाणिकता, वोटर-संख्या,/ पण्य वस्तु लावण्य बना है, नगण्य है क्या?/ खुदा चढ़ा नीलाम, आत्मा की फोटू खींची जाती है। चेतना की दृष्टि से अंधेर नगरी आज का ही नाटक है इसमें कोई शक नहीं है।'' प्रसिद्ध निर्देषक डॉ. सत्यव्रत ने 'अंधेर नगरी' को आज के एक समसामयिक नाटक के रूप में देखा, और इसके पात्रों में आज के चरित्रों को स्थित अनुभव किया 'बाबा, अर्थात् आज के शुभ्र वेषधारी विदेषों से नाता लगाये धनसम्पन्न योगी, चेला नारायणदास-गोवर्धनदास अर्थात् हमारी वह नयी पीढ़ी जिस पर हिप्पी बीटनिक संस्कृति अनायास हावी हो रही है, राजा अर्थात् सत्ता के लिए या सत्ता पर बने रहने के लिए जितनी भी सिद्धांतहीनता बरती जा सकती है, और जितने भी न्यस्त स्वार्थों को प्रश्रय दिया जा सकता है, उनका प्रतिनिधि मंत्री अर्थात्

उन सब विदेषी ताकतों का प्रतिनिधि जिनके इषारे पर सत्तानाचती रहती है, फरियादी अर्थात् वह साधारण जन जो सदियों से न्याय माँग रहा है लेकिन उसे आज तक न्याय नहीं मिला, यद्यपि बड़े-बड़े वायदे हुए, बड़े परिवर्तन हुए, किन्तु शासकीय खानापूर्ति के अलावा उस साधारण जन के लिए खींचा है वह कुछ इसी प्रकार की है 'अन्धाधुंध सारा मच्यौ सब देसा, मानहुँ राजा रहत विदेसा।' नाटककार देश में निवास करने वालों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं -

चूरन साहेब लोग जो खाता। सारा हिन्द हजम कर जाता।।

अर्थात् पैसे पर सब कुछ बिकता है। एक टका दो, हम अपनी जात बेचते हैं। टके के वास्ते ब्राह्मण हो जायं और धोबी को ब्राह्मण कर दें। टके के वास्ते जैसी कहो वैसी व्यवस्था दें। टके के वास्ते झूठ को सच करें। टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान। टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें टके के वास्ते झूठी गवाही दें। टके के वास्ते पाप को पुण्य मानें, टके के वास्ते नीच को भी पितामह बनावैं।

4.4 'अंधेर नगरी' नाटक की पात्र योजना

कथावस्तु का अन्य तत्व पात्र योजना है। पात्र-योजना नाटक की कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले होते हैं। इसलिए उनकी योजना कथावस्तु के अनुसार ही होती है। अंधेर नगरी का आकार बहुत छोटा है इसलिए इसमें पात्रों के चारित्रिक विकास का लेखक के पास बहुत बड़ा अवसर तो नहीं था पर फिर भी तीन प्रमुख पात्र महन्त जी, गोवर्धन दास और चौपट् राजा अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करने में सफल रहे हैं। वैसे बाज़ार दृश्य में कबाब, घासीराम, नारंगी वाली, हलवाई, कुंजड़नि, गुगल पाचक वाला, मछली वाली, जात वाला (ब्राह्मण), बनिया आदि अनेक पात्र दिखायी देते हैं। कथानक में उनके केवल नाम और कार्यों की गणना की गई है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. 'अंधेर नगरी' में कितने दृश्य और किस श्रेणी का नाटक है?

प्रश्न-: 2. 'गोवर्धनदास बाजार में क्या अनुभव करता है?

प्रश्न-: 3. राजा की मूर्खता का उदाहरण कौन सा दृश्य है?

4.5 'अंधेर नगरी' नाटक की कथावस्तु की विशेषताएँ

भारतेन्दु हरिश्चंद्र अपने 'नाटक' नमक निबंध में कथावस्तु की विशेषताओं

को बताते हुए लिखते हैं कि ''नाटक की कथा की रचनाऐ सी विचित्र और बद्ध होनी चाहिए कि जबतक अंतिम अंकन पढ़ै किम्बा न देखै यह न प्रकट हो कि खेल कैसे समाप्त होगा।'' इससे स्पष्ट है कि यहाँ भारतेन्दु हरिश्चंद्र कथावस्तु में उपस्थित तत्वों में-जिज्ञासा, सुसंबद्धता और रोचकता की ओर संकेत कर रहे हैं।

'अंधेर नगरी' के ये सारे दृश्य एक-दूसरे से भली भांति जुड़े हुए है, यह सभी दृश्य दर्शक के मन में रोचकता और जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं, उसे अंतिम दृश्य तक बांधे रखते है। 'अंधेर नगरी' की कथावस्तु में गतिशीलता का गुण विद्यमान भी है। नाटक का अंत दर्शकों को शिक्षा प्रदान करने में सक्षम हुआ है। इस प्रकार हम देखते हैं कि रोचकता, पूर्वा-परसंबद्धता, एकसूत्रता, गतिशीलता आदि नाटक की कथावस्तु की जो विशेषताएँ मानी जाती हैं, वे सभी 'अंधेर नगरी' नाटक में पूर्णत: से देखने को मिलती हैं।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 4. महन्त के शिष्यों को दी गई शिक्षा क्या है?

प्रश्न-: 5. नाटक में व्यंग्य और हास्य के माध्यम से क्या संदेश दिया गया है?

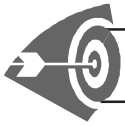
प्रश्न-: 6. प्रहसन शैली में 'अंधेर नगरी' का महत्व क्या है?



4.6 सारांश

अंधेर नगरी' नाटक भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा रचित एक प्रहसन नाटक है, जो शासन-व्यवस्था की मूर्खता, भ्रष्टाचार और समाज की अराजक स्थिति को हास्य और व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत करता है। कथावस्तु सरल और स्पष्ट है, जिसमें छ: दृश्य हैं: बाह्य प्रान्त, बाजार, जंगल, राजसभा, अरण्य और श्मशान। नाटक का आरंभ महन्त जी और उनके दो चेलों के प्रवेश से होता है, जो नगर के अव्यवस्थित और अराजक हालात का परिचय देते हैं। बाजार दृश्य में प्रत्येक दुकानदार अपनी वस्तु और मूल्य टके सेर में प्रस्तुत करता है, जो भ्रष्टाचार, जातिवाद और अनियमित शासन पर व्यंग्य करता है। गोवर्धन दास का फांसी के दृश्य तक पहुँचना और अंत में राजा का स्वयं फांसी पर चढ़ना दर्शकों को न्यायहीन शासन की वास्तविकता के प्रति जागरूक करता है। पात्र योजना में महन्त जी, गोवर्धन दास और चौपट राजा मुख्य हैं, जबकि अन्य पात्र बाज़ार और राजसभा में सामाजिक और आर्थिक व्यंग्य को सजीव बनाते हैं। नाटक की विशेषताएँ-जिज्ञासा, गतिशीलता, एकसूत्रता, हास्य और व्यंग्य-

इसे आज भी समकालीन दृष्टि से प्रासंगिक बनाती हैं। वर्तमान समय में भ्रष्टाचार, न्यायहीनता और सत्ता की दंभपूर्ण कार्यप्रणाली पर यह नाटक शिक्षाप्रद और चेतावनीपूर्ण दृष्टि प्रस्तुत करता है। भारतेन्दु ने सरल जनभाषा और प्रतीकों का प्रयोग कर समाज की कमजोरियों, शासन की मूर्खता और नैतिक संदेश को कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया है।



4.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर :- 'अंधेर नगरी' नाटक में छः दृश्य है। साथ ही यह नाटक प्रहसन की श्रेणी में आता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

पश्न 2 का उत्तरः- लोक रंगमंच के प्रमुख रूपों मेंनौटंकी, रामलीला औररासलीला (उत्तर प्रदेश), तमाशा (महाराष्ट्र), खयाल(राजस्थान), यक्षगान (दक्षिण भारत) आदि है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तरः- 'अंधेर नगरी' में राजा की मूर्खता उस समय प्रकट होती है जब वह न्याय के नाम पर निर्दोष व्यक्ति को फाँसी देने का आदेश देता है। उसकी निर्णयहीनता और अनुचित तर्क शासन की विफलता को उजागर करते हैं। इस प्रसंग के माध्यम से समाज में विवेकपूर्ण नेतृत्व की आवश्यकता का बोध होता है। विस्तार से समझने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तरः- महन्त अपने शिष्यों को लालच और मूर्खता से दूर रहने की सीख देते हैं। वे बताते हैं कि लोभ और अंधानुकरण मनुष्य को विनाश की ओर ले जाते हैं, जबकि विवेक और संयम ही सच्चे धर्म का आधार हैं। इस शिक्षा की गहराई को समझने के लिए इस इकाई का अध्ययन करें।

प्रश्न 5 का उत्तरः- नाटक में व्यंग्य और हास्य का प्रयोग समाज की भ्रष्ट व्यवस्था और अन्यायपूर्ण शासन पर कटाक्ष करने के लिए किया गया है। हास्य के भीतर गंभीर सामाजिक संदेश छिपा है, जो न्याय, विवेक और सत्य के महत्व को रेखांकित करता है। इस विचार को और विस्तार से जानने हेतु इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तरः-'अंधेर नगरी' प्रहसन शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें हास्य के माध्यम से गंभीर सामाजिक सच्चाइयों को प्रस्तुत किया गया है। यह नाटक सत्ता, अंधविश्वास और मूर्खता पर तीखा व्यंग्य करता है। भारतीय प्रहसन परंपरा में इसके महत्व को समझने के लिए इस इकाई का अध्ययन करें।



4.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र. (1881). अंधेर नगरी. भारत ज्ञान विज्ञान समिति, नई दिल्ली।
2. राधाकृष्ण दास. (1995). भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र का जीवन चरित्र. राजश्री पुरुषोत्तम टण्डन हिन्दी भवन, लखनऊ।
3. शर्मा, ए. (2001). भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाटक और उनका समाजशास्त्र. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी।
4. मिश्रा, सत्य प्रकाश. (2010). भारतेन्दु नाट्य विमर्श. बनारस: संस्कृत विश्वविद्यालय।
5. माचवे, प्रभाकर. (2005). अंधेर नगरी और समकालीन समाज. मुंबई: लोकभारती।
6. सिंह, वी.के. (2012). भारतेन्दु और प्रहसन नाट्य कला. पटना: बिहार पब्लिकेशन।
7. वर्मा, ह. (2008). हिंदी नाटक में व्यंग्य और सामाजिक संदेश. दिल्ली: हिन्दी साहित्य मंच।
8. गुप्ता, र. (2015). भारतेन्दु और उनकी राजनीतिक व्यंग्य क्षमता. लखनऊ: भारतीय नाट्य परिषद।
9. जोशी, पी. (2003). भारतेन्दु के नाटक: शैली और विषयवस्तु. जयपुर: राजस्थान पब्लिकेशन।
10. पाठक, एन. (2018). अंधेर नगरी का समकालीन विश्लेषण. भोपाल: मध्य प्रदेश साहित्य समिति।

4.9 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. गोबर्धनदास अंधेर नगरी के बाजार से क्या लेकर आता है?
2. किसकी सूझ-बूझ से गोबर्धनदास फांसी चड़ने से बच जाता है?
3. कौन सा पात्र स्वेच्छा से फांसी पर चड़ जाता है?
4. महन्त के शिष्य को भिक्षा के लिए कौन से निर्देश दिए गए थे?
5. बाजार के दृश्य में व्यंग्य का प्रमुख उदाहरण क्या है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. 'अंधेर नगरी' नाटक के कथानक पर लेख लिखिए।
2. 'अंधेर नगरी' नाटक में क्या शिक्षा दी गई है।

3. नाटक में न्याय और भ्रष्टाचार पर प्रस्तुत व्यंग्य का विश्लेषण कीजिए।
4. अंधेर नगरी के पात्रों के सामाजिक प्रतिनिधित्व का वर्णन कीजिए।
5. प्रहसन शैली में नाटक की प्रासंगिकता और सीख का विवेचन कीजिए।

******

इकाई-5 अंधेर नागरी (भाग - II)

(सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से नाटक में निहित व्यंग्यात्मकता)

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य
5.2 प्रस्तावना
5.3 अंधेर नगरी नाटक में व्याप्त रजीनीतिक और सामाजिक दृष्टि
5.4 सारांश
5.5 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
5.6 अधिक जानने के लिए पढ़ें
5.7 अभ्यास प्रश्न

5.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- अंधेरी नगरी नाटक में सामाजिक व्यांग्यत्मक दृष्टिकोण को जान पाएंगे।
- अंधेरी नगरी नाटक में राजनैतिक व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- इस इकाई से आप नाटक के मूल तत्व से परिचित होंगे।
- अंधेर नगरी के प्रतीकात्मक अर्थ और समयगत यथार्थ से इसकी तुलना कर सकते है।
- नाटक में न्याय, सत्ता और नौकरशाही की विसंगतियों को समझ पाएंगे।
- भारतेन्दु हरिश्चंद्र के वैचारिक दृष्टिकोण और उनके योगदान का मूल्यांकन कर सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना

अंधेर नगरी' भारतेंदु हरिश्चंद्र का एक अत्यंत व्यंग्यात्मक नाटक है। यह नाटक तत्कालीन ब्रिटिश शासन व्यवस्था की विसंगतियों, सामाजिक अन्याय और भ्रष्ट नौकरशाही की प्रकीर्णता को उजागर करता है। नाटक का कथानक सामंती ढांचे पर आधारित प्रतीत होता है, लेकिन इसका वास्तविक उद्देश्य 19वीं सदी के मध्य की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति की तीखी

आलोचना करना है। भारतेंदु ने 'चौपट राजा' की कल्पना के माध्यम से सत्ता के विवेकहीन निर्णय, न्याय प्रक्रिया की विडंबना और नौकरशाही की चालाकी का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। गोवर्धन और नारायण जैसे पात्रों के माध्यम से नाटक ने जनता की मानसिक स्थिति और लोभी वृत्ति पर प्रभाव भी दिखाया। अंधेर नगरी की व्यवस्था, जहाँ हर वस्तु का मूल्य समान और न्याय प्रणाली मनमाने ढंग से संचालित होती है, केवल काल्पनिक प्रतीक नहीं, बल्कि लेखक के समय की वास्तविक समस्याओं और भ्रष्टाचार का प्रतीक है। इस नाटक के माध्यम से भारतेंदु ने सामाजिक सुधारों की आवश्यकता, स्त्रियों की स्थिति में सुधार, वर्ण-जाति व्यवस्था में असमानता और शिक्षा के महत्व पर भी ध्यान आकर्षित किया। महंत द्वारा अपने शिष्यों को लोभ और लालच से बचाने का उपदेश सामाजिक चेतना को दर्शाता है। वहीं, गोवर्धन का मोह और आकर्षण शासन व्यवस्था की अराजकता और जनता के लिए उत्पन्न खतरों को उजागर करता है।

अंधेर नगरी का व्यंग्य मात्र राजनीतिक नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी गहन है। ब्रिटिश शासन के दौरान जमींदारी प्रथा, किसानों का शोषण, देशी उद्योगों का विनाश, और आर्थिक संकट के परिप्रेक्ष्य में यह नाटक जनता में चेतना और जागरूकता उत्पन्न करने का माध्यम बनता है। नाटक का मंचन विभिन्न रूपों में आज भी किया जा सकता है और यह समकालीन राजनीतिक और सामाजिक संदर्भों में उतना ही प्रासंगिक है। भारतेंदु का लेखन केवल व्यंग्यात्मक नहीं है; यह समाज और राजनीति में सुधार के लिए प्रेरणा देने वाला एक साधन भी है। अंधेर नगरी का चित्रण इसलिए विशेष है क्योंकि इसमें धर्म और अधर्म, न्याय और अन्याय में कोई भेद नहीं है। इस नाटक के माध्यम से न केवल तत्कालीन शासन व्यवस्था की आलोचना होती है, बल्कि यह भविष्य के पाठकों और दर्शकों के लिए सामाजिक और राजनीतिक जागरूकता का माध्यम भी बन जाता है। नीचे आप इस इकाई को पढ़ कर पता चलेंगा।

5.3 अंधेर नगरी नाटक में व्याप्त रजीनीतिक और सामाजिक दृष्टि

भारतेन्दु हरिश्चंद्र कृत अंधेर नागरी में व्यक्त सामाजिक यथार्थ का संबंध स्वयं भारतेंदु के समय से है, यद्यपि नाटक प्रस्तुति सामंती व्यवस्था के ढाँचे में हुई है परंतु यह ढाँचा मात्र बाहरी है। नाटक की अंतर्वस्तु का गहरा संबंध भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय की भारत की विशिष्ट परिस्थितियों से है। वह समय कैसा था और उसकी अभिव्यक्ति नाटक में किस रूप में हुई है, इसके संदर्भ में आप इस इकाई में पढ़ेंगे। साथ ही अंधेर नगरी में व्यक्त यथार्थ के स्वरूप

पर भी इकाई के प्रकाश डाला जाएगा ताकि आप उसकी पहचान कर सकें। अंधेर नगरी नाटक एक राजनीतिक नाटक भी है। इस दृष्टि से भी नाटक पर इस इकाई में विचार किया गया है और यह जाँचने की कोशिश की गई है, कि नाटक में व्यक्त राजनीतिक दृष्टि की विशेषता क्या-क्या है। अंधेर नगरी का व्यंग्य बड़ा तीक्ष्ण और साथ ही यथार्थ विडम्बना का मार्मिक चित्रण भी हुआ है। नाटक को व्यंग्य और विडंबना की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में भी विवेचित करने का प्रयास इकाई में किया गया है जिससे नाटक की आंतरिक शक्ति को पहचाना जा सके।

तत्कालीन सामाजिक स्थितिका वर्णन

सामाजिक स्तर पर अंग्रेजों ने ऊपर से नीचे तक राजसत्ता के ढाँचे को बदलना आरंभ कर दिया था। स्थानीय स्तर पर जमींदारी प्रथा का विस्तार हुआ, जिसने किसानों की दशा को पहले से अधिक दयनीय बना दिया। यह जमींदारी प्रथा किसानों को ऐसी पैदावार के लिए मजबूर कर रही थी, जिनसे देशी जमींदारों और विदेशी शासकों को लाभ प्राप्त हो रहा था, लेकिन जिसकी वजह से किसानों का शोषण और उत्पीड़न अत्यधिक बढ़ गया था। इसके साथ ही अंग्रेजों ने इंगलैंड में बने माल की बिक्री सुनिश्चित करने के लिए, देशी उद्योगों को नष्ट करना आरंभ कर दिया था। कई बड़े-बड़े औद्योगिक केंद्र जो मुगल काल में विकसित हुए, अंग्रेजों के राज में धीरे-धीरे नष्ट होना आरंभ हो गए। दूसरी ओर, यूरोप इंगलैंड में उद्योगीकरण की जो प्रक्रिया आरंभ हुई थी, उसका भी असर भारत पर भी पड़ा। एक ओर भारत से कच्चा माल एकत्र करने और उसे भारत से बाहर ले जाने की जरूरत थी, तो दूसरी ओर इंगलैंड और यूरोप का बना माल भारत के विभिन्न हिस्सों तक अधिक दाम में पहुँचाने की।

कार्ल मार्कस ने इस संबंध में कहा है कि ''रेलवे का प्रादुर्भाव भारत में आधुनिक उद्योगों के आगमन का पूर्वसूचक है।'' उन्नीसवीं सदी के मध्य में नील, चाय, काफी आदि के क्षेत्र में कई उद्योग स्थापित हुए। सन् 1850 ई. और सन् 1855 ई. के बीच सूती कपड़ों के कारखाने, जूट की मिलें और कोयला खानों की स्थापना हुई। सन् 1879 ई. में भारत में 56 सूती कपड़ा मिलें स्थापित हो चुकी थी। सन1882 ई. में जूट की 20 मिलें लग चुकी थीं औरसन1880 ई. में 56 कोयला खदानें काम कर रही थीं।

इसके साथ-साथ आधुनिक शिक्षा का प्रसार हुआ जिसने राष्ट्रव्यापी और सुधारवादी आंदोलनों पर गहरा असर डाला। भारत में आधुनिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार ब्रिटिश सरकार ने अपनी राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक जरूरतों के चलते किया। लॉर्ड मैकाले जैसे अंग्रेज शासकों का विचार था कि अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा भारतीयों को पूरी तरह पश्चिमी सभ्यता में रंगा जा सकेगा

और उन्हें सदा के लिए राजभक्त बनाया जा सकेगा। इस शिक्षा ने भारतीयों को पश्चिमी सभ्यता के विकृत रूप में रंगने, उन्हें अंग्रेजों जैसा बनने की प्रेरणा भी दी है।

इस आधुनिक शिक्षा ने उस बुद्धिजीवी वर्ग को जन्म दिया, जिसने राष्ट्रीय मुक्ति और समाज सुधार आंदोलन में न केवल महत्वपूर्ण भूमिका निभाई अर्थात उसका नेतृत्व भी किया। इनके बीच से महान वैज्ञानिक, कवि, इतिहासकार, समाजशास्त्री, साहित्यिक, दार्शनिक और अर्थशास्त्री उत्पन्न हुए। भारतेंदु हरिश्चंद्र भी इसी प्रगतिशील बुद्धिजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

बुद्धिजीवी वर्ग ने अपने विचारों को लोगों तक पहुँचाने हेतु विविध तरीकों का उपयोग किया। उन्होंने कई राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक संगठन बनाए, समाचार पत्र और पत्रिकाओं का प्रकाशन भी किया और उनके माध्यम से भारतीय जनता में नई चेतना और नये विचारों का प्रचार-प्रसार किया। स्वयं भारतेंदु ने कई पत्रिकाओं का प्रकाशन किया और अपने समकालीन लेखकों को पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन और उनमें लिखने के लिए प्रेरित किया। भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा कविवचन सुधा (1968), हरिश्चंद्र मैगजीन (1873) और बाला बोधिनी (1874) का सम्पादन और प्रकाशन किया।

19वीं सदी में नया समाज बन रहा था, जो समाज में से पुरानी रूढ़ियों, मान्यताओं और आचरणों को समाप्त करने के लिए अनथक प्रयास किया। समाज सुधार के बारे में प्रबुद्ध वर्ग का दृष्टिकोण उदार, विवेकशील और लोकतांत्रिक भावनाओं पर आधारित था। जैसे उन्होंने वर्ण व्यवस्था और जातिवाद का विरोध किया। स्त्री की हीन-दशा से जुड़ी प्रथाओं को समाप्त कराने का संघर्ष किया जिनमें सती प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, बालिका वध आदि शामिल हैं। उन्होंने स्त्री-शिक्षा, विधवा विवाह आदि का समर्थन ही नहीं किया वरन् इसके लिए संस्थाएँ भी स्थापित की।

सन् 1857 ई. के संघर्ष की असफलता ने सामंती शासन की पुन: स्थापना का विकल्प हमेशा के लिए खत्म कर दिया था। लेकिन इसी दौर में परिस्थितियाँ नये ढंग से सामने आ रही थीं जिसने सन् 1870 ई. के बाद नये राजनीतिक उभार को जन्म दिया और जिसकी परिणति सन 1885 ई.में कांग्रेस की स्थापना से हुई। इस दौर की उस विशेष स्थिति पर रोशनी डालते हुए ए.आर.देसाई कहते है कि ''सन 1857 ई.के विद्रोह के परवर्ती काल में किसानों का असंतोष लगातार बढ़ गया क्योंकि ब्रिटिश शासन में वे अधिकाधिक विपन्न होते गये थे। भू-राजस्व और लगान के बढ़ते हुए बोझ का उन पर बड़ा बुरा असर पड़ा था। सन् 1870 ई.तक हस्तशिल्प और कारीगर उद्योग पूरी तरह खत्म हो गए थे जिसके चलते कृषि संकुलता बढ़ी। सन् 1870 ई.के कृषि संकट के फलस्वरूप

किसानों की स्थिति और भी बुरी हुई और उनमें ऋण ग्रस्तता बढ़ी।''

दूसरे अफगान युद्ध के वित्तीय बोझ और सन् 1877 ई.के असंयत, अतिव्यापी, भव्य और चमत्कारिक दिल्ली दरबार जिसमें विक्टोरिया को भारत साम्राज्ञी घोषित किया गया, के कारण लोगों का असंतोष और रोष बढ़ा ही, खासकर इसलिए कि यह दुर्भिक्ष और भुखमरी का जमाना था। इसके पश्चात सन् 1878 ई.के वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट जो भारतीय प्रेस की स्वतंत्रता पर रोक लगाने के निमित्त पारित किया गया था, और सन् 1879 ई.के इंडियन प्रेस और आर्स एक्ट के कारण लोगों के असंतोष की ज्वाला प्रज्वलित हुई। इन्हीं परिस्थितियों के बीच भारतेंदु हरिश्चंद्र और उनके समय के दूसरे लेखक लिख रहे थे। राष्ट्रीय असंतोष की जिस भावना को इस दौर में डब्ल्यू.सी.बनर्जी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, आर.सी.दत्त, दादा भाई नौरोजी, जस्टिस रानाडे, गोपालकृष्ण गोखले आदि व्यक्त कर रहे थे, उसी असंतोष को अपने ढंग से भारतेंदु युग के लेखक भी व्यक्त कर रहे थे और अंधेर नगरी की रचना इन्हीं परिस्थितियों में इसी असंतोष की अभिव्यक्ति के लिए की गई थी।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने प्रहसनों में इस साम्राज्यवादी व्यवस्था को व्यक्त किया है। अंग्रेजी राज में सुख, समृद्धि, शक्ति एवं व्यवस्था का उन्होंने अत्यंत व्यंग्य किया। तत्कालीन परिस्थितियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने साहित्य और जनता को निकट लाने का गंभीर दायित्व निभाया है। भारतेंदु युग में जो तीखा प्रहसनात्मक व्यंग्य, गहरी आलोचनात्मक समझ और वैचारिक संर्घष उत्पन्न हो रहा था, उसी में भविष्य के बीज विद्यमान है।

'अधर नगरी' नाटक में व्यक्त प्रबंधन की तीखी आलोचना

नौकरशाही की आलोचना करते हुए भारतेंदु हरिश्चंद्र ने उनकी राज्य व्यवस्था, रिश्वतखोरी, जनता के प्रति विद्वेष और उत्पीड़न की नीति आदि को व्यंगतापूर्ण रेखांकित किया है। नाटक में 'चना जोर गरम' बेचने वाला 'घासी राम' कहता है :-

''चना हाकिम सब जो खाते। सब पर दूना टिकस लगाते।
चूरन बेचने वाला 'पाचक वाला' कहता है:-
चूरन अमले सब जो खावै। दूनी रुशवत तुरत पचावै।
चूरन साहब लोग जो खाता। सारा हिंद हजम कर जाता।
चूरन पुलिस वाले खाते। सब कानून हजम कर जाते।''

इसी प्रकार पाँचवें दृश्य में गोवर्धन दास 'राग काफी' में जो गीत गाता है उसी में यह भी कहा गया है=

''भीतर स्वाहा बाहर सादे, राज करहिं अमले अरु प्यादे।
अन्धाधुन्ध मच्चौ सब देसा, मानहूं राजा रहत विदेसा।''

उक्त पंक्तियां अत्यंत अर्थपूर्ण हैं। अंग्रेजी राज व्यवस्था सन् 1857 ई. के बाद ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया के हाथ में आ गया था। परंतु विक्टोरिया के नाम पर राजसत्ता पर वास्तविक अधिकार अंग्रेज नौकरशाही के पास था। विक्टोरिया रानी लंदन में ही वास करती थी। भारतेन्दु युग के दौर मेंमध्यवर्गीय बुद्धिजीवी जनता का यह विश्वास था कि महारानी विक्टोरिया का भारत की शासक होना ईश्वरीय वरदान है, परंतु भारतवासियों पर जो भी उत्पीड़न और अत्याचार हो रहा है, उसके लिए नौकरशाही अर्थात नियुक्त अंग्रेज ही जिम्मेदार है। यही कारण है कि भारतेन्दु हरिश्चंद्र महारानी विक्टोरिया या उनके शाही परिवार की प्रशंसा का कोई भी अवसर नहीं चूकते।

परंतु इसके साथ ही वे अंग्रेजी राज्यव्यवस्था की नौकरशाही (जिनमें राजे-रजवाड़े और जमींदारों को भी शामिल करते हैं।) की आलोचना भी प्रस्तुत करते हैं। यह अंतर्द्वद्ध केवल भारतेन्दु हरिश्चंद्र में ही नहीं था बल्कि उस दौर के प्राय: सभी देशभक्त बुद्धिजीवियों और लेखकों में विद्यमान था।

अंधेर नगरी नाटक में सीधे सरल संवादों के माध्यम से और कुछ कथा की अंतर्वस्तु में सांकेतिक अभिव्यक्ति के माध्यम से भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने नौकरशाही की कुव्यवस्था का व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। चेले गोवर्धनदास को पहली नजर में राज्य अत्यंत सुखकर लगता है क्योंकि वहां हर चीज़ एक ही दाम पर बिकती है। वह यह सोचता है कि यहाँ रह कर वह सारी सुख सुविधाओं का आनंद ले सकता है, परंतु जब वह निरपराध पकड़ा जाता है और उसे राजा द्वारा फांसी का हुक्म हो जाता है, तो राजसत्ता का वास्तविक चरित्र उसके सामने आता है। राजसत्ता का बाहरी चरित्र कुछ और है तथा आंतरिक चरित्र कुछ और। यह द्वैत ही अंधेर नगरी को भारतेन्दु युग के राजनीतिक यथार्थ से जोड़ता है।

राज्यव्यवस्था के चरित्र को भारतेंदु ने मुकदमे वाले प्रसंग द्वारा भी व्यक्त किया है। वस्तुत: यह न्याय की प्रक्रिया का यह चित्र अयथार्थ प्रतीत होता हुआ भी अपने अर्थ में यथार्थ में निहित विडंबना को प्रभावशाली रूप में व्यक्त करता है। 'अंधेर नागरी' नाटक के चौथे दृश्य का आरंभ राजसभा से होता है। सेवक राजा से चिल्लाकर कहता है कि 'पान खाइए, महाराज' तो राजा उसके चिल्लाने से डर जाता है और मंत्री को आदेश देता है कि वह सेवक को सौ कोड़े लगाए। इस पर मंत्री सेवक का बचाव करते हुए दोष तमोली पर थोपता है-''न तमोली पान लगाकर देता, न यह पुकारता।'' इस पर राजा तमोली को दो सौ कोड़े लगाने का आदेश देता है। मंत्री फिर बात बदलता है और राजा को सुपनखा को सजा देने का परामर्श देता है। नाटक में राजा और मंत्री के बीच की यह बातचीत राजा की मूर्खता और मंत्री की चतुराई का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

राज्य में राजा शक्तिशाली है, परंतु बुद्धि और विवेक का उसमें अभाव है। मंत्री इस बात का लाभ उठाते हुये उसकी मूर्खता और शक्ति का इस्तेमाल अपने बौद्धिक बल से करता है।

यहाँ यह देखा गया है कि निर्णय लेने और आदेश देने का अधिकार राजा के पास है, परंतु निर्णय लेने और आदेश देने का वास्तविक अधिकार मंत्री के पास है, क्योंकि राजा उसी के कहे अनुसार आदेश करता है। इस प्रकार मंत्री राजा से अधिक ताकतवर दिखाई देता है, वास्तविक सत्ता उसी के हाथ में है। यहाँ बकरी के मरने का मुकदमा इसी सच्चाई को व्यंग्यात्मक रूप में प्रकट करता है। यहाँ मंत्री तब तक राजा की मूर्खताओं को बड़ावा देता रहता है, जब तक कि मामला उसके हाथ से नहीं निकलता। जब राजा कोतवाल से जवाबतलब करता है और मंत्री को यह आशंका होती है कि 'ऐसा न हो कि बेवकूफ - इस बात पर सारे नगर को फूंक दे या फाँसी दे दे। तो वह बुद्धिमत्ता से अपने हस्तक्षेप द्वारा मामले को कोतवाल की सजा पर ही खत्म करवा देता है।

''हुक्म हुआ कि मोटा आदमी पकड़ कर फांसी दे दो, क्योंकि बकरी मारने के अपराध में किसी न किसी को सजा होनी जरूरी है, नहीं तो न्याव न होगा।''

राजा के इस बदले हुए फैसले के अनुसार राज्य में मोटे आदमी की तलाश शुरू हो जाती है। न्याय की यह पूरी प्रक्रिया झूठ और दिखावे के सिवा कुछ नहीं है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. नाटक में 'टका सेर' की अवधारणा का सांकेतिक महत्व क्या है?

प्रश्न-: 2.नाटक में न्याय व्यवस्था की अराजकता कैसे व्यक्त होती है?

प्रश्न-: 3. नाटक में महंत की भूमिका क्या है?

'अंधेर नगरी' में व्यक्त यथार्थ

नाटक में महन्त अपने शिष्यों गोवर्धनदास और नारायण दास को लोभी वृत्ति से बचे रहने का उपदेश देकर सुंदर नगर में भेजता है। गोवर्धन राज्य के रंग-ढंग से बहुत प्रभावित हेता है। वह उसी नगर में रहना चाहता है, परंतु महंत उसे सावधान करते हैं। लेकिन वह नहीं मानता और वहीं रुकने का फैसला करता है। गोवर्धन उस बाजार के आकर्षण में आनन्द-विभोर हो जाता है जहाँ हर चीज टके सेर बिकती है। वह उसी नगर में रहने लगता है, व मिठाई व दूसरी चीजों का भरपूर उपभोग करता है। अंधेर नगरी के राजदरबार में एक

मुकदमा आता है। दिवार के गिरने से बकरी की मृत्युके मुकदर्म में गोवर्धन दास को फांसी देने के फैसले पर खत्म होता है। गोवर्धन का बकरी की मौत से दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं है। लेकिन जिसको फांसी दी जानी है, उसका गला फांसी के फंदे के नाप का नहीं है और न्याय की मांग है कि अपराध की सजा तो किसी न किसी को दी ही जानी चाहिए, इसलिए खा-खाकर मोटे हुये गोवर्धनदास को पकड़ लिया जाता है। अपने आपको निरपराध पकड़े जाने पर गोवर्धन को अपने गुरु की याद आती है। स्मरण करते ही, महंत वहां पहुंचते हैं, जहाँ गोवर्धन को फाँसी चढ़ाई जानी है। दोनों इस बात पर लड़ने लगते हैं कि फाँसी पर पहले मैं चढूँगा। राजा उनके झगड़े को समझ नहीं पाता और जानना चाहता है कि वे क्यों लड़ रहे हैं। तब महंत बताता है कि, 'इस समय ऐसी साइत है कि जो मरेगा सीधा वैकुंठ जाएगा। इस बात पर सभी फाँसी चढ़ने के लिए उतावले होने लगते हैं। परंतु वैकुंठ जाने के लालच में राजा स्वयं को फाँसी पर चढ़ाए जाने का आदेश देता है। इस नाटक का अर्थ न तो एक देश और न एक काल तक सीमित है। भारतेंदु ने एक ऐसे राजा की कहानी को लिखा है, जिसके राज्य में प्रत्येक वस्तु का मूल्य एक समान था। जहाँ सोना और मिट्टी की कीमत एक थी'टका सेर'। 'अंधेर नगरी' का चौपट राजा अविवेकपूर्ण राजसत्ता का प्रतीक है, जिसे नौकरशाही मनमाने ढंग से चलाती है।

'अंधेर नगरी' और भारतेन्दु हरिश्चंद्र का वैचारिक परिप्रेक्ष्य

अंधेर नगरी इसलिए अंधेर नगरी नहीं है क्योंकि वहाँ का राजा बुद्धिहीन है और नौकरशाही चालाक है। अंधेर नगरी इसलिए भी अंधेर नगरी है क्योंकि भारतेन्दु हरिश्चंद्र के अनुसार उसमें धर्म और अधर्म में अंतर नहीं किया जाता। ऊँच और नीच में भेद नहीं किया जाता। अंधेर नगरी का चित्रण, काल्पनिक नहीं है। यह लेखक की अपने समय की विकसित समझ है।

आप देख चुके हैं कि इस नाटक के सामान्य से दीखने वाले कथानक में तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था की भ्रष्टाचारिता, सत्ता, विवेकहीनता जनता को सताने की प्रवृत्ति के युग की विकृति और विसंगति का चित्रण मिलता है। वैसे तो अंधेरी नगरी का केंद्र बिंदु है- पैसे और धन का बढ़ता महत्व। परंतु नाटक का मूल स्वर इतना ही नहीं है, अंधेर नगरी अंधव्यवस्था का प्रतीक है। अंधेर नगरी को व्यापक रूपक के तौर पर देखा जाये तो वह समकालीन राज्य व्यवस्थाओं पर व्यंग्य के रूप में भी देखा जा सकता है।

सन् 1970 ई. के बाद के दौर में, अंधेर नगरी की ओर साहित्य संसार का ध्यान एक बार फिर गया। यह नाटक जगह-जगह कई रूपों में खेला गया है। मंचीय नाटक के रूप में, नुक्कड़ नाटक के रूप में, लोक नाट्य के रूप

में मंचन किया गया है। अंधेर नगरी में राज्य व्यवस्था का जो चित्र प्रस्तुत किया गया था, वह वर्तमान में उतना ही सच नजर आ रहा है, जितना भारतेंदु युग के दौर में आता होगा।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न 4- गोवर्धन का मोह और लालच किसका प्रतीक है?

प्रश्न 5- नाटक में राजा और मंत्री का द्वैत किस बात को प्रकट करता है?



5.4 सारांश

भारतेंदु हरिश्चंद्र का 'अंधेर नगरी' नाटक एक तीखा व्यंग्य है जो तत्कालीन शासन व्यवस्था की मूर्खता, अन्यायपूर्ण न्याय प्रणाली और भ्रष्ट नौकरशाही पर करारा प्रहार करता है। भारतेन्दु हरिश्चंद्र का नाटक 'अंधेर नगरी' तत्कालीन-राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक स्थिति का प्रतीकात्मक चित्रण है। नाटक में, ''चौपट राजा'' की कहानी के माध्यम से राज्य की अव्यवस्था, भ्रष्टाचार, और विवेकहीनता पर तीखा व्यंग्य किया गया है। नाटक का कथानक में महन्त अपने शिष्य गोवर्धन और नारायण को लोभ से बचने का उपदेश देकर एक नगर के बाजार में भेजता है, जहाँ पर प्रत्येक वस्तु ''टका सेर'' की दर पर बिकती है। गोवर्धन वहां के आकर्षण में बंधकर रह जाता है और भोग-विलास में डूब जाता है। एक अजीबो-गरीब मुकदमे में उसे फांसी का पात्र बना दिया जाता है, परंतु उसके गुरु महन्त के हस्तक्षेप के कारण कहानी हास्यास्पद मोड़ पर समाप्त होती है, जिसमें राजा खुद फांसी के लिए तैयार हो जाता है। राजनीतिक और सामाजिक दृष्टिकोण को देखा जाये तो नाटक में सत्ता के विवेकहीन निर्णय, नौकरशाही के भ्रष्ट आचरण, और न्याय प्रणाली की अराजकता को उजागर किया गया है। यह ''अंध व्यवस्था'' का प्रतीक बनता है, जहाँ हर वस्तु का मूल्य एक समान है और धर्म तथा अधर्म का कोई भेद नहीं किया जाता है। तत्कालीन यथार्थ के संदर्भ में नाटक उस समय की ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतियोंजैसे जमींदारी प्रथा, किसानों का शोषण, देशी उद्योगों का विनाशऔर आर्थिक संकट की स्थितियों को व्यक्त करता है। आधुनिक शिक्षा के प्रसार और सामाजिक सुधार आंदोलनों ने नया समाज बनाने की प्रक्रिया शुरू कीजिसमें वर्ण व्यवस्था, जातिवाद, और स्त्रियों की हीन स्थिति के विरुद्ध संघर्ष को देखा गया। अर्थ और प्रभाव तथ्य में 'अंधेर नगरी' केवल उस समय के समाज की ही आलोचना नहीं दर्शाता है, बल्कि यह वर्तमान में भी

राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था के लिए प्रासंगिक है। नाटक का मंचन विभिन्न रूपों में किया गया है और आज भी इसकी व्याख्या सामयिक संदर्भों में की जाती है।

5.5 प्रगति विवरण (केवल रुपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- 'अंधेर नगरी' में 'टका सेर' की अवधारणा अंधव्यवस्था और विवेकहीनता की प्रतीकात्मकता को दर्शाती है।अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर:- भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाटक 'अंधेर नगरी' में न्याय व्यवस्था की अराजकता एक अत्यंत तीव्र व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत की गई है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर:- महंत का पात्र शिष्य को नैतिक और सामाजिक शिक्षा देने का माध्यम है। ऊपर इसका उत्तर विस्तार से दिया है, कृपया देखें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- गोवर्धन का मोह और लालच सत्ता और न्याय व्यवस्था की विडंबना को दिखाता है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

पश्न 5 का उत्तर:- नाटक में राजा और मंत्री का द्वैत राजनीतिक सत्ता और वास्तविक शक्ति के अंतर को प्रकट करता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

5.6 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. चंद्रप्रकाश सिंह, (2010)। मध्यकालीन हिन्दी नाट्य-परंपरा और भारतेन्दु. कानपुर: ग्रंथ कुटीर।
2. रमविलस शर्मा, (2005)। भारतेन्दु युग. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
3. गोपीनाथ तिवारी, (2012)। भारतेन्दु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन. पटना: राजकमल प्रकाशन।
4. अरोड़ा, पी. एल., (2008)। हिन्दी नाटक का इतिहास. दिल्ली: राष्ट्रीय प्रकाशन।
5. मिश्रा, राजेश, (2015)। भारतेन्दु और सामाजिक व्यंग्य. बनारस: साहित्यिक विमर्श।
6. दास, ए. आर., (2003)। भारतीय सामाजिक और राजनीतिक परिवेश. कोलकाता: ज्ञान निकेतन।

7. वर्मा, सुनील, (2007)। अंधेर नगरी का अध्ययन. लखनऊ: साहित्य संगम।
8. शुक्ला, अजय, (2011)। भारतेन्दु हरिश्चंद्र जीवन और कृतियाँ. भोपाल मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी।
9. सिन्हा, कमलेश, (2009)। हिन्दी व्यंग्य नाटक का स्वरूप. पटना ज्ञानदीप प्रकाशन।
10. गुप्ता, मीनाक्षी, (2014)। भारतेन्दु युग का साहित्यिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य. जयपुर: विद्या निकेतन।

5.6 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने इस नाटक में किस पर व्यंग्य किया है?
2. नाटक में महन्त की भूमिका का क्या महत्व है?
3. अंधेर नगरी का प्रतीकात्मक अर्थ क्या है?
4. नाटक में राजा का चित्रण किसका प्रतीक है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र की लेखनी का सामाजिक सुधार और राजनीतिक जागरूकता पर क्या प्रभाव पड़ा?
2. नाटक का मंचन आज के संदर्भ में कैसे किया जा सकता है?
3. नाटक की सांस्कृतिक और साहित्यिक महत्व को कैसे समझा जा सकता है?
4. अंधेर नगरी में न्याय प्रणाली और सत्ता का द्वैत कैसे प्रस्तुत किया गया है?
5. नाटक में व्यंग्य और हास्य के माध्यम से सामाजिक चेतना कैसे प्रकट की गई है?

******

इकाई 6 आधे-अधूरे (भाग-।)

कथावस्तु की समीक्षा और मध्यवर्गीय जीवन की त्रासदी

6.1 उद्देश्य
6.2 प्रस्तावना
6.3 मध्यवर्गीय विडम्बना को दर्शाता नाटक 'आधे-अधूरे'
6.4 मध्यवर्ग की अवधारणा उड़द्भव और विकास
6.5 मध्यवर्ग की विशेषताएँ
6.6 'आधे-अधूरे'नाटक का कथानक
6.7 'आधे अधूरे' नाटक की रंगमंचीयता की समस्याएँ और चुनौतियाँ
6.8 सारांश
6.9 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
6.10 अधिक जानने के लिए पढ़ें
6.11 अभ्यास प्रश्न

6.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- नाटक के कथानक के अध्ययन से आप मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं का विश्लेषण कर पाएंगे।
- नाटक के पात्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से आप मानव व्यवहार और संघर्ष को समझ सकेंगे।
- सामाजिक और पारिवारिक सम्बन्धों का अध्ययन कर पाएंगे।
- आधे अधूरे नाटक मंचन की विशेषताओं का ज्ञान हासिल होंगा।
- नाटक के माध्यम से सामाजिक मूल्य और नैतिक सीमाओं की समझ विकसित कर पाएंगे।
- इस इकाई से आपको पाठक/दर्शक के दृष्टिकोण से नाटक की व्यावहारिक प्रासंगिकता का आकलन का ज्ञान प्राप्त होंगा।

6.2 प्रस्तावना

आधे अधूरे नाटक मोहन राकेश द्वारा लिखा गया महत्वपूर्ण नाटक है। यह नाटक सन् 1969 ई. में लिखा गया व प्रथम मंचन दिल्ली में 'देशांतर' द्वारा ओम शिवपुरी के निर्देशन में हुआ। मोहन राकेश नवनाट्य परंपरा के नाटककार

माने जाते हैं। स्वतंत्रता के पश्चात नव निर्माण की आकांक्षा लिए जनता में उत्साह का संचार हुआ, परंतु इस दिशा में मिली असफलता से उत्पन्न मोहभंग ने जनता को निराशा और कुंठा की ओर धकेल दिया। नवनाट्य परंपरा के अंतर्गत मध्यवर्गीय की आकांक्षा-आशाओं व विडंबनाओं का चित्रण मुख्य बिन्दु रहा है। आधे-अधूरे नाटक इस कोटि में लिखा गया एक महत्वपूर्ण नाटक है। मोहन राकेश ने इस नाटक के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं और अधूरेपन को उजागर किया है। यह नाटक एक शहरी परिवार की कहानी है, इस नाटक में हर सदस्य अपने जीवन में अधूरापन और असंतोष का सामना करता है। नाटक का मुख्य विषय ''पूर्णता की तलाश'' है, जो समाज और परिवार के जटिल संबंधों को दर्शाता है। यह हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण कृति है, जो न केवल मनोरंजन करती है बल्कि गहन सामाजिक संदेश भी देती है। इस इकाई में नाटक रंगमच पर प्रस्तुति में आने वाली समस्याओं और चुनौतियों को आप समझने का प्रयास करेंगे। इस इकाई में आप समकालीन भारतीय मध्य वर्ग के परिप्रेक्ष्य में कथ्य, चरित्र-चित्रण, संबंध विश्लेषण, परिवेश के बारे में जानेंगे।

6.3 मध्यवर्गीय विडम्बना को दर्शाता नाटक 'आधे-अधूरे'

यह नाटक मौजूदा महानगरीय भारतीय पारिवारिक जीवन की विडम्बनाओं के सघन बिंदुओं और स्त्री-पुरुष संबंधों की विसंगतियों का जीवन्त चित्रण करता है। इसके यथार्थपरक कथ्य को समझने से पूर्व भारतीय परिप्रेक्ष्य में मध्यवर्ग की अवधारणा और उसकी विशेषताओं को जान लेना उपयोगी और आवश्यक होगा। मोहन राकेश द्वारा रचित नाटक 'आधे-अधूरे' मध्यवर्गीय परिवारों के सामाजिक और पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को दर्शाता है। यह नाटक एक मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है, जिसमें पति-पत्नी और उनके बच्चों के बीच तनावपूर्ण संबंधों को दर्शाया गया है। नाटक में पति महेन्द्रनाथ बेरोज़गार है और पत्नी सावित्री परिवार की आर्थिक ज़िम्मेदारी को उठाती है। इस स्थिति से उनके परिवार के बीच असंतोष और संघर्ष उत्पन्न होता है। बच्चों के साथ भी माता-पिता के संबंधों में दूरी, अविश्वसनीयता और संवादहीनता दिखाई देती है।

'आधे-अधूरे' नाटक समाज में व्याप्त पारिवारिक संरचना, आर्थिक दबाव, और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच संघर्ष को गहराई से उजागर करता है। इसमें यह भी दर्शाया गया है कि कैसे पारिवारिक समस्याएँ व्यक्ति के मानसिक और भावनात्मक जीवन को प्रभावित करती है।

6.4 मध्यवर्ग की अवधारणा उद्भव और विकास

इस संसार में व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्तर और मनोवैज्ञानिक स्तर से समाज व्यक्ति समूहों के कई वर्गों में विभक्त हो जाता है। इससे व्यक्ति को वर्ग विशेष में प्रतिष्ठित करने के लिए उसकी आय, संपत्ति, आर्थिक दृष्टिकोण, वंश-परंपरा, रहन-सहन का स्तर और शिक्षा आदि का ध्यान रखा जाता है। समाज में व्याप्त संगठनों की आर्थिक सामाजिक व्यवस्था, मानव-जाति की वर्ग-विहीन स्थिति को संकेत देता है। लेकिन उसके बाद के समाज और विशेषत: मध्य युग में उत्पादन वृद्धि और व्यक्तिगत संपत्ति को एकत्र करने हेतु बढ़ती हई लालसा ने समाज को मुख्यत:उच्च (शोषक वर्ग) और निम्न (शोषित वर्ग) वर्गों में विभाजित कर दिया। औद्योगिक क्रांति, वैज्ञानिक प्रगतिऔर पूंजीवादी व्यवस्था ने विश्व की आर्थिक सामाजिक और बौद्धिक अवस्था पर व्यापक प्रभाव डाला और 18वीं शताब्दी के अंतिम दौर में उच्च और निम्न के बीच एक तीसरे वर्ग का जन्म हुआ, जिसे मध्यवर्ग कहा गया है। कुछ आर्थिक सामाजिक चिंतकों के अनुसार सन् 1812 ई. से पहले किसी वर्ग के लिए मध्यवर्ग शब्द का प्रयोग नहीं किया गया। स्पष्ट है कि 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में मध्यवर्ग पूंजीवादी औद्योगिक व्यवस्था के साथ बढ़ता चला गया। मार्क्स ने वर्ग-संघर्ष के ऐतिहासिक विकास की विवेचन भी की है, उच्च, निम्न और मध्य वर्ग को 'बुर्जुआ','प्रोलेतेरियत' और 'पैटी बुर्जुआ' के रूप में प्रस्तुत किया है।

6.5 मध्यवर्ग की विशेषताएँ

यह मुख्यत: पढ़े-लिखे लोगों का वर्ग माना जाता है। सरकारी और गैर-सरकारी संस्थानों में ऊँचे-ऊँचे या छोटे-छोटे पदों पर काम करने वाले नौकरीपेशा अफसर, कर्मचारी, प्रोफेसर, वकील, डॉक्टर, लेखक, इंजीनियर, व्यापारी और औसत दर्जे के उद्यमी उद्योगपति इत्यादि मध्यवर्ग के अंतर्गत आते हैं। इस वर्ग का चरित्र लचीला तथा अंतर्विरोधी होता है। ब्रिटिश शासन में उसकी नौकरशाही को चलाने वाले और उसका विरोध कर आज़ादी की लड़ाई लड़ने वाले बुद्धिजीवी इसी वर्ग से आए थे। अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण अपने मध्यवर्ग श्रेणी से, संघर्ष करते हुए, अपने से ऊपर वाले वर्ग में जाने के लिए प्रयत्नरत ये लोग परिस्थितियों की मार से पिटकर लगातार निचले वर्ग की ओर धकेले जाते रहे हैं। इससे इनमें एक सतत तनाव और अंतद्वंद्व की स्थिति बन जाती है। सभी सुख-सुविधाओं,अपनी सुरक्षा और सुविधा के लिए यह वर्ग प्राय: किसी भी समझौते और अवसरवादिता के लिए तत्पर रहता है। प्राय: सोचने-कहने और

करने के बीच की खाई तथा दिखावे की भावना इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

6.6 'आधे-अधूरे'नाटक का कथानक

'आधे अधूरे' नाटक की शुरूआत एक काले कोट वाले आदमी से होती है, जो नाटक की भूमिका अपने शब्दों में बना कर प्रस्तुत करता है। नाटक के कथानक की शुरूआत महेन्द्र और उसकी पत्नि सावित्री से होती है। महेन्द्र घर पर रहता है, और सावित्री ऑफिस से घर आती है, घरआते ही देखती है कि सारा घर बिखरा पड़ा है, घर में कोई नज़र नहीं आ रहा है। उसकी छोटी बेटी किन्नी ने किताब फाड़ के फैला कर रखी है, अशोक उसका बेटा है, जिसने मैगज़ीन से कुछ तस्वीरें काटी हैं, उसका कचरा भी वहीं पड़ा है। किसी ने चाय पी होगी, लेकिन चाय का कप वहीं हॉल में पड़ा है, उसे उठा कर किचन में नहीं रखा गया है।

सारा दिन ऑफिस में कार्य करने के पश्चात शाम को सावित्री अभी ऑफिस से आई है, और घर की यह हालत को देखकर दुखी हो जाती है। सारी चीज़े अपनी-अपनी जगह पर रखती है, घर के फर्नीचर की झाड़-पोंछ करती है, जिससे पता चलता है कि बहुत दिनों से ठीक से साफ-सफाई नहीं हुई है। इसी दौरान वह अपने पति महेन्द्र नाथ को बताती है कि आज शाम को सिंघानिया उसका बोस घर आ रहा है। यह बात सुनकर महेन्द्रनाथ को अच्छा नहीं लगता है। सावित्री इस संदर्भ में कहती है, सावित्री ने सिंघानिया को घर बुलाया है, ताकि वह अशोक की नौकरी लगवा सकें। कई सालो से महेन्द्रनाथ बेरोज़गार है, जिसका ज़िम्मेदार सावित्री जुनेजा को मानती है। जुनेजा महेन्द्रनाथ का दोस्त है, इन बातों से पता चलता है कि दोनों ने मिलकर कोई काम (बिजनेस) शुरू किया था। बिजनेस का लाभ जुनेजा को मिला लेकिन महेन्द्रनाथ को नहीं मिल पाया। इसके परिणाम स्वरूप आज महेन्द्रनाथ की इस हालत का ज़िम्मेदार सावित्री जुनेजा को मानती है।

अशोक सावित्री का बेटा है, वह नौकरी के लायक हो चुका है, लेकिन वह न ही नौकरी करना चाहता है, न ही उसका पढ़ाई में मन लगता है। सावित्री की बड़ी बेटी बिन्नी ने घर से भागकर मनोज नाम के लड़के से शादी कर ली है। परंतु उसकी गृहस्थी में उदासीनता कायम रहती है। वह अक्सर अपने घर से परेशान होकर मायके आ जाती है। सावित्री और महेन्द्रनाथ एक-दूसरे से बात ही कर रहे थे कि बिन्नी परेशान होकर अचानक मायके आ जाती है। महेन्द्रनाथ और सावित्री को यह लगता है कि वह अपने पति से झगड़ा करके आई है। इसलिए वह बिन्नी से पूछना चाहते हैं, परंतु बिन्नी कुछ भी साफ़-

साफ़ नहीं बताती है। इस संशय को दूर करते हुये मनोज कहता है कि उनके रिश्ते में जो उदासीनता है, वह बिन्नी के मायके की ही छाया है। उसी छाया की तलाश करने बिन्नी अक्सर यहाँ बारबार आती जाती है।

सावित्री बेटी बिन्नी से बात ही कर रही होती है कि तभी छोटी बेटी किन्नी आ जाती है। घर में जो सुविधाएँ किन्नी को चाहिए परंतु उसे वह सुविधाएँ नहीं मिल पा रही हैं, वह उसकी शिकायत अपनी माँ से करती है। वह कहती है, यदिउसकी इच्छा पूरी नहीं हुई तो वह स्कूल में पढ़ने नहीं जाएगी। किन्नी को फटे हुए जुराब पहनकर स्कूल जाना पड़ता है। स्कूल में कुछ खरीद कर खाने के लिए भी उसके पास रूपए नहीं होते हैं।

अशोक छोटी बहन किन्नी से हमेशा गुस्सा रहता है, और वह अपनी माँ से उसकी हरकतों के लिए शिकायत करता रहता है। किन्नी की आयु लगभग बारह-तेरह साल है, परंतु वह यौन संबन्धों से संबन्धित जानकारी प्राप्त करने में रुचि लेने लगती है। इसे अनैतिक समझते हुये अशोक इसका विरोध करता है।

इसी दौरान किन्नी गुस्से में अशोक की प्रेमिका का जक्रि कर देती है। परिणाम स्वरूप किन्नी, अशोक और बिन्नी में झगड़े स्वरूप बातचीत होने लगती है। तभी उनके पिता महेन्द्रनाथ को गुस्सा आ जाता है, और इस घर में उसका क्या स्थान है, यह जानने का प्रयास करता है। इस संदर्भ में सकारात्मक उत्तर न मिलने पर वह घर छोड़कर चला जाता है।

महेन्द्रनाथ के जाने के बाद सावित्री कहती है, यह हर शुक्र-शनिचर को वह घर छोड़कर चले जाते हैं, बाद में वापस आ जाते हैं।

सावित्री अपने तीनों बच्चों को डाँट ही रही होती है, कि अचानक पुरूष दो अर्थात सिंघानियाँ की एंट्री होती है। उन्हें देखकर सावित्री अपनी गुस्से वाली अभिव्यक्ति बदल कर समान्य हो जाती है। कुछ ही देर में सिंघानिया और सावित्री एक-दूसरे से बात करते हैं, सावित्री बात-चीत के दौरान लगातार यह प्रयास करती है, कि सिंघानिया अशोक से प्रभावित हो जाए और उसकी कहीं न कहीं नौकरी लगवा दे। परंतु सिंघानिया बिन्नी के विषय में अधिक रूचि व्क्त करता है। एक अच्छा खासा समय व्यतीत करने के बाद अंत में जाने से पहले जब वह अशोक से अशोक के विचारों के बारे में प्रश्न करता है, तो अशोक ऐसा अभिनय करता है जैसे कोई कीड़ा उसकी पतलून में घुस गया हो। पुरूष दो अर्थात सिंघानिया अशोक के व्यवहार से निराशा व्यक्त करके चला जाता है।

सिंघानिया के जाने के पश्चात सावित्री और अशोक की बहस हो जाती है, अशोक सावित्री की मेहनत और उसकी कोशिशों को अनावश्यक समझता

है। उसे ऐसा लगता है, उसके पिता की जो हालत है वह उसकी माँ के ही कारण है। उसे अपने पिता की स्थिति पर रहम आता है, परंतु अपनी माँ को वह सकारात्मक रूप से नहीं देखता। अशोक और सावित्री के बीच तर्क-वितर्क होने के बाद वह बचाव करते हुऐ जब सावित्री कहती है, वह यह सब अपने परिवार के लिए ही कर रही है। अब वह चाहती है कि उसका हाथ बटाने वाला कोई न कोई हो, घर का कोई व्यक्त नौकरी करे और उसका घर चलाने में सहयोग करे। अशोक इससे इंकार कर देता है, साथ ही अपनी माँ को उल्टा जवाब देकर कहता है कि-''वह क्यों करती हैं यह सब, न करें।'', जिससे सावित्री मनोवैज्ञानिक रूप से अत्यधिक आहत हो जाती है।

'आधे-अधूरे' नाटक वर्तमान के समाज के ऐसे तमाम लोगों की अभिशप्त जिंदगी का प्रामाणिक दस्तावेज़ है, जिन्होंने जीवन की तमाम इच्छाओं-आकांक्षाओं और उपलब्धियों को भौतिक सुख-सुविधाओं से जोड़ लिया और इस मृग-मरीचिका में फंसकर पारिवारिक संबंधों की सहज आत्मीयता, ऊष्मा और भावनात्मक सुरक्षा तथा आत्मिक शांति को पूरी तरह से खो दिया। मोहन राकेश के शब्दों में इस नाटक में, 'अधूरे का मतलब इनकम्पलीट है।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न-: 1. 'आधे-अधूरे'नाटक का मुख्य विषय क्या है? इस नाटक में समाज के किस पहलू को उजागर किया गया है?

प्रश्न-: 2. 'आधे-अधूरे' नाटक में मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाओं को किस प्रकार चित्रित किया गया है?

प्रश्न-: 3. नाटक में महेन्द्रनाथ की स्थिति किसका प्रतीक है?

6.7 'आधे अधूरे' नाटक की रंगमंचीयता की समस्याएँ और चुनौतियाँ

नाटक का रंगमंच पर मंचन करने के दौरान अनेकों समस्याओं का सामना करना पढ़ता है। यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि 'आधे-अधूरे' समकालीन हिंदी रंगमंच का अत्यंत कठिन और चुनौतीपूर्ण किंतु साथ ही सर्वाधिक अभिमंचित और लोकप्रिय नाटक माना जाता है। 'आधे-अधूरे' नाटक में यद्यपि एक ही दृश्य-बंध, समकालीन परिवेश वर्णन, रूपसज्जा, वेशभूषा, चरित्रों की कम संख्या और अभिमंचन की दृष्टि से कठिन घटना-प्रसंगों के अभाव जैसी कई विशेषताएँ आती हैं, जो नाटक के सहज अभिनेयता में सहायक है। फिर भी

इसकी लम्बी 'प्रस्तावना' जो कि एक ही कलाकार द्वारा पाँच भूमिकाएँ निभाने की युक्ति, पार्शवकर्म और तकनीक कुशलता इत्यादि अनेक ऐसी समस्याएँ हैं, जो इसके मंचन प्रस्तुतीकरण में कठिनाई उत्पन्न करती है। 'वर्तमान से लगभग तीन दशक पूर्व के हिंदी रंगमंच की स्थितियों में यह नाटक रंगमंचीय दृष्टि से केवल चुनौतीपूर्ण ही नहीं प्राय: अरंगमंचीय भी माना था। अनेक वरिष्ठ नाट्य-समीक्षकों एव निर्देशकों ने इस पर कई आरोप भी लगाए थे। यहाँ आप संक्षेप में इसकी समस्याओं और चुनौतियों का अध्ययन कर सकते हैं।

प्राय: यह कहा जाता है कि 'आधे-अधूरे' की प्रस्तावना नाटक का अभिन्न अंग नहीं है। वह फिजूल, अनावश्यक और आरोपित प्रतीत होता है। एक मध्यवर्गीय विशिष्ट परिवार के सीमित अनुभव को सामान्य जन का व्यापक अनुभव-सत्य सिद्ध करने हेतु मोहन राकेश ने इसकी रचना की है। उनके द्वारा दर्शाये गए अनिश्चितता और आम आदमी के बारे में इसमें किए गए बड़े-बड़े दावे मूल नाटक से सिद्ध नहीं होते। लेकिन सच तो यह है कि वैचारिक स्तर पर चाहे जो भी कहा जाए, व्यावहारिक स्तर पर वास्तविकता यह है कि इस नाटक की वे तमाम प्रस्तुतियाँ अपेक्षित समग्र प्रभाव पैदा नहीं कर सकीं, जिनमें निर्देशकों ने प्रस्तावना को हटाने व काटने-छाँटने की स्वतंत्रता ली।

रंगमंच की दृष्टि से प्रस्तावना की सबसे बड़ी समस्या यह है, कि इसे साठ पंक्तियों के लम्बे एकालाप के रूप में नाटक के एकदम आरंभ में ही रखा गया है। रंगमंच पर किसी भी अभिनेता के लिए इसे प्रभावशाली ढंग से अभिनीत करना और आरंभ से अंत तक दर्शकों को बांधे रखना आसान काम नहीं है। वैसे भी, यथार्थवादी नाटक में इस अयार्थवादी प्रस्तावना की संगति बैठा पाना कठिन कार्य है।

'आधे-अधूरे' नाटक पर यह भी आरोप लगाया गया है कि एक ही कलाकार द्वारा पाँच भूमिकाएँ अभिनीत करने की योजना नाटक की आंतरिक आवश्यकता नहीं है, महज एक चौंकाने वाली युक्ति भर है। व्यावहारिक स्तर पर हिंदी रंगमंच के पास एक भी ऐसा सशक्त अभिनेता नहीं है, जो इस चुनौती को विश्वसनीयता और प्रभावशीलता से स्वीकार कर सके। परंतु इस आरोप को भी इस नाटक की सभी प्रस्तुतियों ने असत्य और निराधार साबित कर दिया है जो दिल्ली, कलकत्ता और बम्बई जैसे महानगरों में ही नहीं देश के अनेक छोटे-छोटे शहरों और कस्बों में भी सफलतापूवर्क प्रस्तुत की गई। साथ ही बहुसंख्य दर्शक-समूहों द्वारा सराहना भी की गई। फिर भी,इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता है कि अभिनय की दृष्टि से यह नाटक की एक कठिन समस्या है, जिससे छोटे-छोटे प्रसंग-दृश्यों के साथ लगातार वेश को बदलने और साथ ही चरित्रांतर भी करना और स्वयं को विश्वसनीय बनाए रखना सामान्य

प्रतिभा के किसी कलाकार के सामर्थ्य की बात नहीं है। इसके साथ ही सावित्री की भूमिका भी अत्यंत जटिल है, थोड़ी सी भी असावधानी उसे चरित्रहीन और कुलटा भी बना सकती है। इसके अलावा संवादों में शब्दों का स्थान, लय-विधान आदि सर्वाधिक निश्चित और महत्वपूर्ण है कि मंचन के दौरान परिवर्तन से मामूली सा परिवर्तन भी अर्थ का अनर्थ कर सकता है। इस नाटक के मंचन हेतु कल्पनाशील, अनुभवी और कुशल कलाकारों के बिना काम नहीं चल सकता।

नाटक में केवल अभिनय ही चुनौतीपूर्ण नहीं है, बल्कि उसके साथ जुड़े अन्य कार्य, जैसे मंच सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि प्रभाव, वेशभूषा आदि भी बड़ी समस्याएँ हैं। अभिनय ही नहीं इस नाटक का रंगमंच पर पार्शवकर्म भी एक बड़ी समस्या है। इस नाटक में रोचकता और कुतूहलपूर्ण नाटकीय घटनाओं का अभाव है तथा सम्पूर्ण नाटक क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं के छोटे-छोटे विस्फोटों और मनोभावों के घात-प्रतिघातों पर ही टिका है, इसलिए इसमें कल्पना के माध्यम से छायालोक की विशिष्ट भूमिका है। नाटक के आरंभ, अंतराल और अंत में स्पॉट लाइट और अवमंदक अर्थात डिमर का विशेष प्रयोग कथ्य और चरित्रों के प्रदर्शन में विशेष रूप से सहायक है। इसी प्रकार 'एक खंडहर की आत्मा' को व्यक्त करता हुआ हल्का संगीत जैसे संकेत भी सामान्य संगीत प्रभावों की अपेक्षा अधिक अभिव्यक्ति के लिए सूक्ष्म संगीत से दर्शाया जा सकता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार की संतुलित और सुनिश्चित प्रकाश-योजना हेतु प्रवीण एवं प्रशिक्षित छायालोक-परिकल्पक और परिचालक की आवश्यकता होती है। इस नाटक के मंचन के लिए ऐसा संगीतकार चाहिए जो मौलिकता, संवेदनशीलता और रचनात्मकता से भरपूर हो। इसके अतिरिक्त पार्शवकर्म जैसे मंच सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि प्रभाव आदि के लिए उच्च स्तर की तकनीकी कुशलता की भी आवश्यकता होती है। अधिकांश नाट्य-दल इन आवश्यकताओं को पूर्ण करने में कठिनाई महसूस करते हैं, क्योंकि उनके पास सीमित संसाधन और तकनीकी विशेषज्ञता होती है। यह नाटक के निर्माण और प्रस्तुति में आने वाली व्यावसायिक और तकनीकी समस्याओं को रेखांकित करता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न 4 :- सावित्री की भूमिका किस दृष्टि से महत्वपूर्ण है?

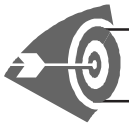
प्रश्न 5 :- बच्चों के व्यवहार से नाटक में क्या दर्शाया गया है?



6.8 सारांश

सावित्री की बड़ी लड़की बिन्नी मनोज जीवनसाथी को पाते ही बाहर निकल भागी है। लड़का पत्रिकाओं में अभिनेत्रियों की रंगीन तस्वीरें काटता हुआ उस मौके के इंतजार में है, जब वह भी यहाँ से निकल सकेगा। अपने पिता के लिए उसके मन में करुणा है। माँ के लिए आक्रोश। वह बड़ी बहन के प्रेम में विश्वास नहीं करता, उसे घर से निकलने का ज़रिया मानता है। 'यही स्थिति परिवार के दूसरे सदस्यों की है। हर एक अपने अधूरेपन के साथ दूसरे के अधूरेपन पर प्रहार करता है। इस प्रकार परिवार का हर सदस्य अपने जीवन से असंतुष्ट है और किसी ऐसे भविष्य का इंतजार कर रहा है, जिसका दूर-दूर तक पता नहीं है। इस पहलू पर प्रकाश डालते हुए ओम शिवपुरी कहते हैं, 'एक अन्य स्तर पर यह नाट्य रचना मानवीय संतोष के अधूरेपन का रेखांकन है जो जिंदगी से बहुत कुछ चाहते हैं, उनकी तृप्ति अधूरी ही रहती है। मध्यवर्ग के इसी आधे-अधूरेपन का नाटक है, 'आधे-अधूरे'।

इस प्रकार आपने इस इकाई में मोहन राकेश द्वारा रचित 'आधे-अधूरे' नाटक एक शहरी मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है, जो अपने जीवन में अधूरेपन और असंतोष का सामना करता है। नाटक के अंतर्गत महेन्द्रनाथ, सावित्री और उनके तीनों बच्चों के बीच तनावपूर्ण संबंधों को दर्शाया गया है। लंबे समय से महेन्द्रनाथ बेरोज़गार है, और सावित्री परिवार की आर्थिक ज़िम्मेदारियों को सम्पूर्ण करती है, जिससे उनके बीच असंतोष और संघर्ष पैदा होता है। सावित्री अपने जीवन में पूर्णता की तलाश करती है, परंतु उसे यह एहसास होता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में अधूरा ही है। नाटक में परिवार के प्रत्येक सदस्य की व्यक्तिगत समस्याएँ और उनके संघर्षों को गहराई से प्रदर्शित किया गया है।यह नाटक के अंतर्गत समाज में पारिवारिक संरचना, आर्थिक दबाव, और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच संघर्ष को उजागर करता है। इसकी भाषा सरल और प्रभावशाली है, जो दर्शकों को गहराई से प्रभावित करती है।



6.9 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- 'आधे-अधूरे' नाटक का मुख्य विषय 'पूर्णता की तलाश' है। इस नाटक में समाज के उन पहलू को दिखाया गया है, जहाँ आर्थिक दबाव, पारिवारिक तनाव और व्यक्तिगत आकांक्षाओं के बीच संघर्ष होता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तरः- महानगरीय भारतीय पारिवारिक जीवन की विडम्बनाओं के सघन बिंदुओं और स्त्री-पुरुष संबंधों की विसंगतियों का जीवन्त चित्रण करता है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तरः- महेन्द्रनाथ की बेरोज़गारी और असंतोष मध्यवर्गीय पुरुष की आर्थिक और सामाजिक विडम्बना का प्रतीक है। विस्तार से पढने के लिए कृपया ऊपर इकाई में देखें।

प्रश्न 4 का उत्तरः- सावित्री परिवार की आर्थिक और भावनात्मक जिम्मेदारी को संभालते हुए मध्यवर्गीय स्त्री की संघर्षशीलता को दिखाती है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 5 का उत्तरः- बच्चों की असंतोषपूर्ण मानसिकता और जीवन के प्रति भ्रमित दृष्टिकोण परिवार और समाज की अस्थिरता को उजागर करता है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।



6.10 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. राकेश, मोहन. (1969). आधे अधूरे. राधाकृष्ण प्रकाशन।
2. नागेन्द्र, डॉ. (2015). हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास. नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
3. त्यागी, हरिप्रकाश. (2010). समकालीन हिन्दी नाटक और रंगमंच. तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. श्रीवास्तव, शंकर. (2008). मध्यवर्गीय जीवन और हिंदी नाट्य साहित्य. आलोक प्रकाशन, प्रयागराज।
5. मिश्रा, राकेश. (2012). हिंदी नाटक: कथ्य और रंगमंचीय दृष्टि. पब्लिकेशन हाउस, लखनऊ।
6. वर्मा, निर्मल. (2007). समकालीन नाटकों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण. ज्ञानदीप प्रकाशन, दिल्ली।
7. शर्मा, रमेश. (2013). हिंदी रंगमंच का इतिहास. विज्ञान प्रकाशन, भोपाल।
8. त्रिपाठी, अजय. (2011). नाटक और सामाजिक यथार्थ. विद्यापीठ प्रकाशन, वाराणसी।
9. गुप्ता, मधुकर. (2009). हिंदी नाटक और परिवार चित्रण. संजीवनी पब्लिकेशन, दिल्ली।
10. श्रीवास्तव, अजय कुमार. (2014). आधुनिक हिंदी नाटक: विश्लेषण

और आलोचना. तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

6.11 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त पश्नों के उत्तर दीजिये।

1. 'आधे अधूरे' नाटक के लेखक कौन है?
2. नाटक के प्रमुख पात्र कौन-कौन है?
3. इस नाटक का प्रथम मंचन किसने किया?
4. सावित्री और महेन्द्रनाथ की चारित्रिक विशेषताओं को बताये?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. नाटक का कथानक और मुख्य विषय क्या है?
2. नाटक में पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को कैसे दर्शाया गया है?
3. 'आधे-अधूरे' नाटक की रंगमंचीयता में कौन-कौन सी समस्या और चुनौतियाँ द्रष्टव्य है?
4. नाटक में मध्यवर्गीय जीवन की विडम्बना किस प्रकार चित्रित हुई है?
5. सावित्री और महेन्द्रनाथ के संघर्ष से समाज और परिवार पर क्या प्रभाव पड़ता है?

******

इकाई 7 : आधे-अधूरे (भाग-II)

उपन्यास के पात्रों का परिचय

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर दृष्टि

7.4 मोहन राकेश द्वारा रचित नाटकों में स्त्री- पुरुष: सम्बन्धों का विश्लेषण

7.5 'आधे-अधूरे' नाटक की भाषागत विशेषताएँ और संवाद योजना

7.6 संवाद में दृश्य बिम्ब का समावेश

7.7 सारांश

7.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

7.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

7.10 अभ्यास प्रश्न

7.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'आधे-अधूरे' नाटक के पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- आप स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलताओं को सामाजिक संदर्भ में समझ पाएंगे।
- नाटक की भाषागत विशेषताओं एवं संवाद योजना का विवेचन कर सकेंगे।
- इस इकाई से आप पात्रों के निर्णयों और उनके जीवन पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव को समझ पाएंगे।
- पात्रों की अंत द्वंद्वात्मक स्थिति और उसके सामाजिक कारणों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नाट्य कला में दृश्य-बिम्ब और प्रतीकात्मक संवाद की भूमिका के बारे में पता चलेगा।
- संवाद योजना और भाषागत सूक्ष्मताओं के माध्यम से पात्रों के व्यक्तित्व का अनुभव होंगा।

7.2 प्रस्तावना

इस नाटक के अध्ययन से आप मध्यवर्गीय भारतीय समाज की पारिवारिक

और वैवाहिक जटिलताओं को समझने में सहायता मिलेगी। इस नाटक समाज में अलग-अलग भूमिकाएं और संघर्ष कैसे पारिवारिक जीवन को प्रभावित करते हैं। पात्रों का मनोवैज्ञानिक पक्ष को समझने में सहायता मिलेगी। इस इकाई में पढ़कर आप यह समझ सकेंगे कि इन पात्रों का मनोविज्ञान उनके निर्णयों और उनके जीवन की दिशा को किस प्रकार प्रभावित करता है। सायत नाट्य कला के विशेष पहलुओं और हिंदी साहित्य की उत्कृष्टता का अनुभव होगा। व्यक्तिगत और नैतिक शिक्षा पर भी यह नाटक दृष्टि डालता है। यह नाटक अधूरेपन, असंतोष और जीवन की चुनौतीपूर्ण स्थितियों को उजागर करता है। इस नाटक के अध्ययन से आप अपने जीवन में भी आत्म-मूल्यांकन और प्रेरणा को पा सकते हैं।

7.3 पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर दृष्टि

'आधे-अधूरे' नाटक एकचरित्र प्रधान नाटक है। नाटक की प्रस्तावना के अंतर्गत पुरुष कहता है कि, ''मैं इसमें हूँ और मेरे होने से ही बहुत कुछ इसमें निर्धारित या अनिर्धारित है।'' अर्थात नाटककार ने पहले की तरह इस बार भी अपनी रचना को पुरुष-प्रधान बनाने का प्रयत्न किया है। परंतु यहाँ सावित्री का किरदार महेन्द्रनाथ और सभी पुरुषों के किरदार से अधिक उभर कर आया है। अर्थात 'आधे अधूरे' नाटक के पाँच-पाँच पुरुष पात्रों पर अकेली सावित्री भारी पड़ती है। 'आधे-अधूरे' की सावित्री एक नौकरीपेशा स्त्री है, जिसकी उम्र चालीस साल के आस-पास है लेकिन चेहरे पर यौवन की चमक और चाह अब भी बाकी है। सावित्री जीवन में असफल हो चुके आत्मविश्वासहीन अपने पति महेंद्रनाथ से निराश होकर पिछले बीस-बाईस सालों से अपनी कल्पना से पूरे-आदमी की तलाश में जुनेजा, मनोज, शिवजीत और सिहांनिया जैसे कई पुरुषों से रूबरू होकर घर वापस लौटती रही है। उसकी विडम्बना यह है कि तमाम महत्वाकांक्षाओं और कोशिशों के बावजूद वह उसी आधे-अधूरे पति महेंद्रनाथ के साथ ही जीने के लिए मजबूर है।

शादी से पहले दोस्तों का चहेता और हंसमुख महेंद्रनाथ सावित्री से शादी के बाद कारोबार में लगातार असफल होकर आज पत्नी की कमाई पर जी रहा है, छोटी-छोटी बातों पर लड़ने-छिड़ने वाला और पत्नी के परिचितों या प्रेमियों के आने पर चुपचाप घर से चला जाने वाला एक पराजित व्यक्ति की भांति अपने आपको बेकार समझता है, महेन्द्रनाथ कटु से कटु व्यक्तित्व और कभी-कभी खूंखार बन जाने वाला अजीब-सा कुंठित व्यक्ति बन गया है। घर के सभी सदस्यों से अपमानित होकर वह बचपन के मित्र जुनेजा के यहाँ ऐसे जाता है,

जैसे कभी घर नहीं लौटेगा। परंतु अंत में 'ब्लडप्रैशर' की बुरी हालत में ही वह वापस आ जाता है। वह ऐसी असमंजस स्थिति में न सावित्री के साथ रह सकता है और न उससे अलग।

यह निश्चित है कि इस प्रकार के परिवार में लालन-पालन हुए बच्चे स्वभावत: विकृतियों के शिकार होते हैं। बड़ी लड़की बिन्नी अपनी माँ के प्रेमी मनोज से विवाह कर बैठती है और अब उसे भी अधूरापन लगने लगा है। बिन्नी अत्यंत निराश, दुखी तथा टूटी हुई सी है। छोटी लड़की किन्नी में विद्रोह-भाव विद्यमान है। वह अत्यंत सिर चढ़ी, मुंहफट, जिद्दी, आत्मकेंद्रित और छोटी उम्र में ही यौन संबंधों में रुचि रखने वाली बिगड़ी हुई लड़की है। लड़के अशोक के चेहरे की कड़वाहट भरी हंसी तथा उसका आक्रोश, अस्वीकार और पलायन झलकता है। उसके आक्रोश में युवा पीढ़ी की पीड़ा झलकती है। पढ़ाई से जी चुराने वाले इक्कीस वर्षीय विरक्त और निकम्मा यह लड़का कोई काम-काज करने के बजाए अभिनेत्रियों की तस्वीरों और अश्लील पुस्तकों के सहारे जीवन काट रहा है। नाटक में चित्रित सभी चरित्रों में अंतर्द्वंद्व टूटन, जलन, आक्रोश, तिक्तता और अजनबीपन दिखाई पड़ता है।

अन्य पुरुष जुनेजा पैसे और दबदबे वाला व्यक्ति है। परंतु दोस्त से हमदर्दी रखनेवाला सुलझा हुआ व्यक्तित्व है। शिवजीत के पास डिग्री और दुनिया घूमने का अनुभव है, परंतु वह दोगले किस्म का आदमी है। जगमोहन के पास अच्छे संबंध, जबान पर मिठास और खर्च की दरियादिली है, परंतु वह एकनिष्ठ नहीं है। मनोज बड़े नाम वाला आदमी है वह माँ की जगह बेटी को ले भागता है। कामुक प्रवृत्ति वाला बॉस सिंघानियाँ सावित्री के बजाए किन्नी में रुचि लेता है।

नाटक में चित्रित सभी पात्र अपने-अपने व्यक्तित्व को उचित रूप से प्रस्तुत किया है, किंतु महेंद्रनाथ के अलग-अलग मुखौटो का उपयोग कर एक जटिल चरित्र की सृष्टि करना अपने आप में चुनौतियों भरा है। एक कलाकार से पाँच भूमिकाओं का मंचन करवाने के पीछे भी यही बुनियादी वजह है।

इस संदर्भ में इब्राहिम अल्काज़ी ने लिखा है कि ''समाज-व्यवस्था आज तेज़ी से बदल रही है। न तो कोई टिकाऊ मूल्य रह गए हैं, न काई धार्मिक आस्था, न कोई राजनीतिक विश्वास, न कोई व्यक्तित्व या सामाजिक विवेक। सभी कुछ काम चलाऊ है और हरेक समाधान तात्कालिक सुविधा पर टिका है।'' मध्यवर्गीय समाज का व्यक्ति खुद अपने आप से कट गया है। 'आधे-अधूरे' नाटक में दर्शाये गये मध्यवर्गीय चरित्रों के भीतर यौन कुंठाओं, अपूर्ण महत्वाकांक्षाओं, असफलताओं और घृणा, तनाव, रिक्तता, चिड़-चिड़ाहट, छट-पटाहट, टूटन, आक्रोश और बिखराव का घना जंगल दिखाई पड़ता है।

7.4 मोहन राकेश द्वारा रचित नाटकों में स्त्री-पुरुषः सम्बन्धों का विश्लेषण

मोहन राकेश के नाटकों में आज के मध्यवर्गीय जीवन में स्त्री-पुरुष संबंधों की विडम्बना, विषमता और त्रासदी का विश्लेषण-विवेचन चित्रित हुआ है। कालिदास से लेकर नंद और महेंद्रनाथ तक की यात्रा मोहन राकेश के पूरे रचनात्मक व्यक्तित्व, उनकी छटपटाहट एवं मान्यताओं का महत्वपूर्ण रेखांकन है, जिसमें नर-नारी संबंधों के जटिल इतिहास को चित्रित किया है। 'आधे-अधूरे' नाटक में पहली बार उन्होंने अपने इस कथ्य को समकालीन परिवेश, चरित्र तथा जीवन को आज की जीवित भाषा में प्रभावशीलता के साथ प्रस्तुत करने की सार्थक कोशिश की है। यह नाटक बड़ी ही प्रखरता से स्त्री-पुरुष के लगाव और अलगाव, प्रेम और घृणा तथा संलग्नता की विवशता और उसे तार-तार करने की कुरूपता का प्रामाणिक दस्तावेज़ माना गया है। एक अलग धरातल पर यह नाटक वर्तमान के मध्यवर्गीय परिवार और समाज के विघटन और कुंठा की करुण कथा भी है और मानवीय संबंधों एवं मूल्यों के टूटने की गाथा भी वर्णित है।

मोहन राकेश के नाटकों के संवाद का दायरा बहुत-कुछ सीमित है, परंतु उसके भीतर उनकी गहरी, सूक्ष्म और प्रखर दृष्टि बहुत दूरदर्शी है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के पात्र कालिदास मल्लिका (प्रेमिका) को छोड़कर प्रियंगुमंजरी (पन्ती) को अपनाता है परंतु कालांतर में उससे असंतुष्ट होकर मल्लिका के पास वापस लौटता है और अंत में उसे भी अपने पूर्णतः अनुकूल न पाकर वहाँ से चला जाता है। अन्य नाटक 'लहरों के राजहंस' की सुंदरी नंद की प्रेमिका भी है और पत्नी भी। परंतु सम्पूर्ण संतुष्टि और सामंजस्य यहाँ भी उसे महसूस नहीं है। पुरुष के व्यक्तित्व से हताश होकर 'आधे-अधूरे' में संपूर्णता और संतोष की इस तलाश का कार्य मोहन राकेश ने स्त्री अर्थात सावित्री को सौंपा है। परंतु वह बाहर और भीतर मनः स्थिति से जुड़ती-टूटती सावित्री अंत तक उतनी ही अधूरी और असंतुष्ट बनी रहती है। स्त्री और पुरुष दोनों ही घर नामक इस नरक को छोड़कर बाहर भाग जाना चाहते हैं। इस नाटक में वर्णित नियतिवाद एक निष्क्रिय हताशा को जन्म देता है जो दृढ़ इच्छाशक्ति, इंसानी कोशिश और संघर्ष के तमाम रास्तों को बंद कर देता है।

7.5 'आधे-अधूरे' नाटक की भाषागत विशेषताएँ और संवाद योजना

मोहन राकेश द्वारा सम्पूर्ण नाट्य-लेखन को बदले और निरंतर परिवर्तित

हो रहे मानवीय संबंधों के संदर्भ में सही नाट्य-भाषा की तलाश कहा जा सकता है। इसीलिए सही नाटकीय शब्द और संवाद में उसकी उचित एवं सार्थक जगह तलाशने की जैसी छटापटाहट, बेचैनी और प्रयोगशीलता राकेश में देखने को मिलती है, वह अन्यत्र देखने में दुर्लभ है।

'आधे-अधूरे' में वर्तमान भारतीय मध्यवर्गीय जीवन के सूक्ष्म व जटिल अनुभवों, संवेदनाओं, बहुआयामी वैविध्यपूर्ण स्थितियों और जूझते व टूटते आधे-अधूरे व्यक्तित्व वाले पात्रों की तनावपूर्ण विस्फोटक मन:स्थितियों को सम्पूर्ण सच्चाई के साथ अपने समकालीन मुहावरे और बोलचाल की सृजनात्मक भाषा में पहली बार सफल नाटकीय अभिव्यक्ति मिली है। इस नाटक की भाषा पारस्परिक संबंधों के तनाव, बिखराव, अलगाव, ऊब, झल्लाहट, छटपटाहट, बौखलाहट, आक्रोश, विडम्बना, संघर्ष और मनहूसियत को 'जीने की भाषा' में प्रस्तुत करती है।

संवाद में प्रतीकात्मकता

'आधे-अधूरे' नाटक की भाषा की एक प्रमुख विशेषता प्रतीकात्मकता है कि इसके अंतर्गत नाटककार प्राय: प्रचलित या पारंपरिक, बड़े-बड़े प्रतीकों के प्रयोग की अपेक्षा रोज़मर्रा की जिंदगी में शामिल होने वाली आम और बहुत साधारण वस्तुओं को स्थान देते है। दृश्य-बंध के अंतर्गत उपयोगी सभी टूटी-अधटूटी और घिसी-पिटी वस्तुएं इस घर की प्रत्यक्ष आर्थिक स्थिति के रेखांकन के साथ-साथ सावित्री के परिवार के सदस्यों को पारस्परिक विघटित व संबंधों के बिखराव का संकेत भी देती है। नाटककार मोहन राकेश लिखते है कि ''तीन दरवाजे तीन तरफ़ से कमरे से झाँकते हैं।'' 'कमरे' को इस घर के जीवन और दरवाज़ों को उसमें ताँक-झाँक करने वाले सिंघानिया, जगमोहन तथा जुनेजा का रूप नहीं दे देता?

यहाँ प्रतीकों के माध्यम से स्थिति का वर्णन किया गया है। 'आधे-अधूरे' के संवाद योजना की सबसे बड़ी विशेषता एक खरी, तनावपूर्ण, स्वत:स्फूर्त, बिम्बात्मक भाषा और आंतरिक लयपूर्ण संवादों की रचना है। इस नाटक के प्रत्येक पात्र के संवादों के शब्दों के अर्थ को जाने बिना ही सिर्फ उसकी ध्वनि और उच्चारण के अंदाज़ से बोलने वाले के चरित्र की मुख्य विशेषता को पहचाना जा सकता है। नाटक संवादों के स्वरूप में पर्याप्त विविधता भी है आरंभ में काले सूट वाले आदमी के लम्बे एकालाप और अंत में जुनेजा-सावित्री के बड़े-बड़े संवादों को छोड़ दें तो शेष संपूर्ण नाटक के संवाद प्राय: छोटे-छोटे, सघन, प्रखर, विश्वसनीय, तथा चरित्रों और स्थितियों, मन:स्थितियों को जीवंतता से उद्घाटित करने वाले हैं। नाटक के संवादों में शब्दों का स्थान इतना निश्चित है कि मामूली सा हेर-फेर भी अर्थ का अनर्थ कर सकता है। आत्मीय, सहज,

अंतरंग और रचनात्मक बोलचाल की भाषा में प्रतीकात्मक प्रभावशाली संवाद-सृजन राकेश की एक बड़ी उपलब्धि है।

नाटक में शाब्दिक संवाद योजना

'आधे-अधूरे' के अनेक संवाद पूर्णत: साधारण, अभिधात्मक और सहजपूर्वक प्रतीत होते हैं। लेकिन उनके व्यंग्यात्मक अर्थ बड़े संवेदनशील और प्रभावपूर्ण है। महेंद्रनाथ आर्थिक व सामाजिक कारणों से स्वयं को हीन समझता है और सावित्री के सामने अपने आपको कमड़ोर बने रहने के लिए विवश है। पन्ती (सावित्री) के प्रश्नों और आरोपों का कोई संतोषजनक उत्तर उसके पास नहीं है। इसलिए वह बड़ी ही चतुराई से वार करता है। उसका प्रहार ऊपर से मासूम और बेचारा सा लगने के बावजूद भीतर से बेहद तीखा व गहरा होता है। उदहारण के लिए देखा जाए तो पुरुष एक का आँखें बचाते हुए स्त्री (सावित्री) से यह कहना कि, 'आ गई दफ्तर से? लगता है आज बस जल्दी मिल गयी?' यह एक सामान्य प्रश्न या साधारण कथन-सा दिखाई देता है, जबकि वास्तव में वह उसके दफ्तरी जीवन पर व्यंग्य कर रहा होता है। वह इस प्रकार कहता है मानों, 'तुम्हारा मन तो दफ्तर और अपने चाहने वालों के बीच ही लगता है। घर तो मजबूरी में ही आना पड़ता है सिर्फ कुढ़ढ़ने और लड़ने के लिए।' सावित्री का दफ्तर से घर देर से आने पर बस न मिलने की बात को भी महेंद्रनाथ जैसे सिर्फ एक बहाना या झूठ ही समझता है। सावित्री भी यह बात अच्छी तरह से समझती है, इसीलिए वह जानबूझकर जवाब न देकर उस पर प्रश्न कर देती है। सिंघानियाँ और जगमोहन को लेकर किए गए महेंद्रनाथ के व्यंग्य एवं कटाक्ष सावित्री को चुभते हैं। इसके साथ ही दबंग, आक्रामक, कटु और तेज़ तर्रार सावित्री जगमोहन के सामने कैसे बेबस और विनम्र हो जाती है। उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है ''मैं वहाँ परदेस गई हूँ जहाँ पहुँचने से डरती रही हूँ, उम्र भर।... तुम कितनी अच्छी तरह समझते हो मुझे ..... कितनी अच्छी तरह! इस वक्त मेरी जो हालत है अंदर से....।''

नाटक के अन्य पात्र खुशी के संबंध में बिन्नी के जवाब पर महेंद्रनाथ की यह टिप्पणी भी देखी जा सकती है। महेंद्रनाथ बिन्नी से कहता है की ''आदमी जो जवाब दे, वह उसके चेहरे से भी तो झलकना चाहिए।'' मन, वचन और भावभंगिमा का यह असामंजस्य बिन्नी के अंतद्वंद्ध तनाव और दु:ख के साथ-साथ वर्तमान के व्यक्ति की विभाजित मानसिकता एवं विषमता का संकेत भी दे देता है।

सावित्री द्वारा कई स्थान पर किया गया 'ओहु, होह, हो....।' जैसे अनेक निरर्थक शब्दों का प्रयोग किया है और किन्नी द्वारा बिन्नी और माँ के शब्दों की भिन्न अर्थ एवं अन्दाज़ में पुनरावृत्ति (जो सामान्यत: दोष मानी जाती है)

यहाँ उनके मन की खीझ, कड़वाहट, झुंझलाहट और दबे हुए आक्रोश की सशक्त एवं सार्थक अभिव्यक्ति बन जाती है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न–: 1. 'आधे अधूरे' नाटक के पात्र महेन्द्रनाथ की चारित्रिक विशेषता लिखे।

प्रश्न–: 2. नाटक 'आधे अधूरे' का मुख्य विषय क्या है?

प्रश्न–: 3. बिन्नी का व्यक्तित्व किस प्रकार का है?

7.6 संवाद में दृश्य बिम्ब का समावेश

वास्तव में नाटक के अंतर्गत संवाद का वास्तविक अर्थ चरित्रों द्वारा बोले गए शब्दों या वाक्यों से ही नहीं होता। यहाँ मौन भी अर्थ का प्रदर्शन करते हुए संवाद करता है और नाटक के चरित्रों द्वारा या उनकी मुख-मुद्राओं, भंगिमाओं और रंग-विशेषताओं से मंच पर बनने वाले दृश्य-बिम्ब भी उनके शाब्दिक संवादों का ही नाटकीय प्रदर्शन होता है। उदहारण के लिए इस नाटक में एक ही अभिनेता द्वारा पाँच-पाँच भूमिकाएँ निभाने की रंग-युक्ति वास्तव में एक रंग-संवाद ही है जिसके जरिए नाटककार 'बिल्कुल एक से हैं आप लोग! अलग-अलग मुखौटे, पर चेहरा, चेहरा सबका एक ही।' जैसे शाब्दिक संवाद को दृश्य-संवाद के रूप में अनुवाद करता है। इसी प्रकार,'आधे-अधूरे' नाटक में सावित्री के प्रथम प्रवेश के साथ ही मोहन राकेश ने स्त्री के व्यक्तित्व, संघर्ष और अंतद्वंद्व की झलक उसकी थकी-हारी इस भंगिमा द्वारा साफ तौर पर दिखा देती है कि 'स्त्री कई कुछ संभाले बाहर से आती है। कई कुछ में कुछ घर का है, कुछ दफ्तर का, कुछ अपना।' चेहरे पर दिन-भर के काम की थकान है और इतनी चीज़ों के साथ चलकर आने की उलझन। परिवार, बाहरी (नौकरी) और व्यक्तिगत जीवन के असामंजस्यपूर्ण कार्यों में तालमेल न बैठा पाना वास्तव में सावित्री की त्रासदी का मूल कारण है, जिसका उल्लेख जुनेजा नाटक के अंत में यह कह कर करता है कि 'तुम्हारे लिए जीने का मतलब रहा है कितना कुछ एक साथ होकर, कितना कुछ एक-साथ पाकर और कितना कुछ एकसाथ ओढ़कर जीना।' प्रथम संकेत के अंतर्गत स्त्री की यह स्थिति विवशताजनक प्रतीत होकर उसके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करती है, जबकि जुनेजा के इस अंतिम विश्लेषण में यह अत्यधिक महत्वाकांक्षिणी और घोर स्वार्थी स्त्री बताई जाती है तथा दर्शक के मन में अरुचिकर उत्पन्न करता है। अर्थात देखा जाए वास्तव में सावित्री का चरित्र इन दोनों सीमांतों को एकसाथ अपने में संजोये हुए है।

इसी प्रकार संवाद में व्याप्त बिम्ब विधान के कारण ही दर्शकों को लापरवाह किन्नी की पढ़ाई के कारण घर पर पड़ते आर्थिक दबाव, तस्वीरों के साथ जिंदगी काटते बेरोज़गार और नाकारा अशोक के बोझ और निठल्ले और फालतू से महेंद्रनाथ का आरंभिक परिचय दे देता है। इसी प्रकार जगमोहन के प्रवेश के पूर्व सावित्री जब बाहर जाने के लिए तैयार होते समय 'गले की माला को उंगली में लपेटते हुए झटका लगने से माला टूट जाती है। परेशान होकर वह माला को उतार देती है और जाकर कबर्ड से दूसरी माला निकाल लेती है।' सावित्री की मन:स्थिति और परिस्थिति को ध्यान में रखकर देखें तो 'माला' यहाँ उसकी वर्तमान स्थिति को प्रदर्शित करती है। माला के दाने या मोती घर के अलग-अलग सदस्य हैं जिन्हें अपनी व्यवस्था के धागे से स्त्री ने एक-साथ बांध कर रखा है। लेकिन अशोक के सीधे प्रहार से आहत सावित्री सब की परवाह छोड़कर अब से केवल अपनी जिंदगी देखने का निर्णय व यह घर छोड़कर जगमोहन के साथ अपनी नई दुनिया बनाने का संकल्प करती है। माला के माध्यम से रचनाकार ने यहाँ पुरानी माला के टूटने और नई माला निकाल कर पहनने के संकेत द्वारा नाटकीय अभिव्यक्ति दी है। माला के झटके से तोड़कर सावित्री जीवन के हिस्से को छोड़कर एक नये ढंग से ज़िंदेगी जीने का प्रयत्न कर रही है। यहीं सावित्री द्वारा ढूँढ़ने के बावजूद एक चप्पल का दूसरा पैर न मिलने पर सब जूतों-चप्पलों को ठोकर लगाकर पीछे हटा देना भी पारिवारिक सामंजस्य और उपलब्धि की भरसक तलाश की असफलता पर पूरे घर को ठुकरा देने की झुंझालाहट भरी कोशिश का संकेत देता है। इसी प्रकार अनेक स्थानों पर नाटक के पात्रों का दराज़ या कबर्ड को बार-बार खोलना बंद करना तथा महेंद्रनाथ का कुर्सी को झुलाना चरित्रों के मन की उलझन और उनके असमंजस को दर्शाने का कार्य किया है। इसके साथ ही चीज़ का न खुलने वाला डिब्बा भी इस घुटन-भरे अभिशप्त परिवार की निजात रहित परिस्थितियों का प्रतीक बन गया है। जिसे भरी हुई नोक वाले किसी धार रहित टिन-कटर रूपी समाधान या समझौते से नहीं खोला जा सकता। इस स्थिति से निपटने के लिए किसी नोक वाले तेज़ औज़ार की जरूरत है। इसी प्रकार मोहन राकेश ने इस नाटक में 'धूल', 'हवा', 'फ़ाइल', 'बड़-स्टैम्प', 'पर्स' जैसे अनेक सामान्य शब्दों और मामूली सी चीज़ों को भी अतिरिक्त एवं नया अर्थ देकर रचनात्मक रूप में प्रयोग किया है।



महत्वपूर्ण बिंदु

'आधे-अधूरे' नाटक 19 जनवरी और 26 जनवरी 1969 में साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के तीन अंकों में प्रकाशित हुआ। इसके साथ ही नाट्य संस्था 'दिशांतर' द्वारा ओम शिवपुरी द्वारा 2 मार्च, 1969 को रंगमंच पर मंचन किया गया। इसके पश्चात 'अंतराल' द्वारा इस नाटक को पुस्तक का रूप दिया।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न- 4: अशोक के जीवन में कौन-सी समस्याएँ दिखाई देती हैं?

प्रश्न- 5: किन्नी का व्यक्तित्व किन विशेषताओं को प्रकट करता है?

प्रश्न- 6: 'आधे-अधूरे' नाटक में संवाद और दृश्य बिम्ब की क्या भूमिका है?



7.7 सारांश

सारांश स्वरूप मोहन राकेश के 'आधे अधूरे' नाटक के सभी पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को आपने समझा है। यह एक प्रसिद्ध नाटक है जो आधुनिक जीवन के मध्यवर्गीय समाज में व्याप्त तनाव और मानव सम्बन्धों में विच्छेदन को दर्शाता है। 'आधे-अधूरे' नाटक के पात्रों में स्त्री पात्र

सावित्री एक स्वतंत्रता और आत्म-सम्मान की आकांक्षी महिला है। वह पारंपरिक समाज की सीमाओं को चुनौती देती है और अपने जीवन को अपने तरीके से जीने की कोशिश करती है। उसकी संघर्षशीलता उसे अन्य पात्रों से अलग बनाती है। महेंद्रनाथ एक ऐसा व्यक्ति है। जिसका व्यक्तित्व कमजोर और लाचार दिखाई देता है। वह अपनी असफलताओं के लिए दूसरों को दोष देता है और परिवार में अपनी भूमिका को सही से निभा पाने में असमर्थ है। महेन्द्रनाथ की सोच पारंपरिकता की ओर झुकी हुई है। बड़ी बेटी बिन्नी की सोच आधुनिकता और परंपरा के बीच फंसी हुई है। वह अपने परिवार के संघर्षों और समाज की उम्मीदों के बीच एक संतुलन खोजने का प्रयास करती है। बिन्नी का व्यक्तित्व विद्रोही और चुनौतीपूर्ण है। अशोक जीवन से असंतुष्ट और निराश दिखाई देता है। वह बेरोजगार है और अपने जीवन में स्थायित्व और उद्देश्य की खोज में है। किन्नी सावित्री और महेन्द्रनाथ की सबसे छोटी बेटी है। किन्नी अपने भाई-बहनों की तुलना में अधिक मासूम और किशोरावस्था

के प्रतीक के रूप में दिखती है। वह अभी अपने व्यक्तित्व को पूरी तरह से विकसित नहीं कर पाई है, लेकिन परिवार की जटिलताओं को समझने की प्रक्रिया में है।

7.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- 'आधे-अधूरे' नाटक के पात्र महेन्द्रनाथ का व्यक्तित्व कमजोर और लाचार दर्शाया गया है। वह अपनी विफलताओं के लिए दूसरों को दोष देते हैं और परिवार में अपनी भूमिका को सही से निभा पाने में असमर्थ हैं। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर:- 'आधे अधूरे' नाटक का मुख्य विषय पारिवारिक संबंधों में टूटन और असंतोष है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते हैं।

प्रश्न 3 का उत्तर:- बिन्नी का व्यक्तित्व आधुनिकता और परंपरा के बीच संघर्षशील है। वह नए मूल्यों और जीवनशैली की ओर आकृष्ट होती है, किंतु पारिवारिक संस्कार और सामाजिक परंपराएँ उसे उलझन में डालती हैं। अधिक विस्तार से जानने के लिए कृपया ऊपर इकाई को पढ़ें ।

प्रश्न 4 का उत्तर:- अशोक जीवन से असंतुष्ट है। वह बेरोज़गार है और अपने जीवन का कोई ठोस उद्देश्य नहीं ढूँढ़ पाता। उसकी यह असंतुष्टि उसके परिवारिक और सामाजिक संबंधों में भी अस्थिरता उत्पन्न करती है।ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते हैं।

प्रश्न 5 का उत्तर:- किन्नी किशोरावस्था और मासूमियत का प्रतीक है। वह परिवार की जटिलताओं और तनावपूर्ण वातावरण को समझने का प्रयास कर रही है। उसके भीतर जिज्ञासा और संवेदनशीलता दोनों ही विद्यमान हैं।

प्रश्न 6 का उत्तर:- इस नाटक के संवाद और दृश्य बिम्ब पात्रों की मानसिक स्थिति और भावनात्मक तनाव को गहराई से प्रकट करते हैं। संवादों में यथार्थवाद और तीव्रता है, जबकि दृश्य बिम्ब पात्रों के भीतर चल रहे संघर्षों को उजागर करते हैं। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते हैं।

7.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. आहूजा, राम. (2015). सामाजिक समस्याएँ. नई दिल्ली: राष्ट्रीय प्रकाशन।
2. मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ. (2016). सामाजिक मानवशास्त्र की रूपरेखा. नई दिल्ली: पब्लिकेशन हाउस।
3. चतुर्वेदी, अलका.(2014). हिन्दी नाटक-साहित्य में संवाद-शिल्प का विकास. इलाहाबाद: साहित्य भवन।

4. शर्मा, प्रेम. (2018). मध्यवर्गीय जीवन और नाट्य कला. दिल्ली: आधुनिक साहित्य प्रकाशन।
5. राकेश, मोहन. (2001). आधे-अधूरे. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
6. गुप्ता, सुरेश.(2017). नाटक में स्त्री-पुरुष संबंध: एक अध्ययन. लखनऊ: मानविकी पब्लिकेशन।
7. वैद, ज्योत्स्ना. (2019). मौजूदा भारतीय समाज और नाट्य-साहित्य. मुंबई: साहित्य संसार।
8. त्रिपाठी, राकेश. (2016). हिंदी नाटक में संवाद और प्रतीकवाद. भोपाल: ज्ञानदीप प्रकाशन।
9. अल्काज़ी, इब्राहिम. (2000). समकालीन नाट्य-समीक्षा. दिल्ली: नाट्य परिषद।
10. मिश्रा, दीपक. (2015). नाटकीय संरचना और पात्र विश्लेषण. पटना: प्रकाशन समिति।

7.10 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. 'आधे अधूरे' नाटक में सावित्री का चरित्र किस रूप में प्रस्तुत किया गया है?
2. महेन्द्रनाथ को कमजोर चरित्र क्यों कहा गया है?
3. नाटक में जगमोहन की भूमिका का क्या महत्व है?
4. 'आधे अधूरे' के नाम का अर्थ और उसके प्रतीकात्मक पहलू क्या है?
5. बिन्नी के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?
6. अशोक का जीवन नाटक में किस प्रकार प्रभावित होता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. सावित्री और महेंद्रनाथ के रिश्ते में संघर्ष के कारण क्या हैं?
2. सावित्री के जीवन में जगमोहन की उपस्थिति का क्या महत्व है, और यह स्त्री-पुरुष संबंधों को कैसे प्रभावित करता है?
3. 'आधे अधूरे' के संवाद किस प्रकार पात्रों की मानसिक स्थिति और भावनात्मक तनाव को प्रकट करते हैं?
4. संवाद और दृश्य बिम्ब के माध्यम से पात्रों के व्यक्तित्व का किस प्रकार चित्रण होता है?
5. नाटक की प्रतीकात्मक भाषा और साधारण वस्तुओं का उपयोग कैसे अर्थपूर्ण है?
6. किन्नी और बिन्नी के व्यवहार में पारिवारिक तनाव की झलक कैसे दिखाई देती है?

******

इकाई 8 : एक और द्रोणाचार्य (भाग-I)

कथावस्तु की समीक्षा और वर्तमान संदर्भ में इसकी प्रासंगिकता

8.1 उद्देश्य
8.2 प्रस्तावना
8.3 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक का कथानक संक्षिप्त में
8.4 नाटक के पात्रों का परिचय
8.5 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की रंगमचीय विशेषता
8.6 सारांश
8.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
8.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
8.9 अभ्यास प्रश्न

8.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई के अध्ययन से आप 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के माध्यम से आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त नैतिक और सामाजिक दुविधाओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- आप शिक्षक और समाज के परस्पर संबंधों को पौराणिक और समकालीन दृष्टिकोण से समझने में सक्षम होंगे।
- इस नाटक के माध्यम से आप साहित्यिक कथ्य, नैतिकता, चरित्र विकास और संवाद की व्याख्या करना सीख सकेंगे।
- आप इस नाटक के माध्यम से पौराणिक प्रसंगों और आधुनिक परिस्थितियों के अंत:संबंध को समझ पाएँगे।
- आप शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और नैतिक पतन के गहरे कारणों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- नाटक के अध्ययन से आप शिक्षक के सामाजिक दायित्व और व्यक्तिगत आदर्शों के संघर्ष को पहचान पाएँगे।
- यह नाटक आपको समकालीन हिंदी नाटक की सामाजिक चेतना और प्रयोगशीलता को समझने का अवसर देगा।

8.2 प्रस्तावना

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक शंकर शेष द्वारा लिखा गया है, यह सन् 1977 ई. में प्रकाशित हुआ है। यह नाटक दो भागों में विभक्त है-पूर्वार्ध (चार दृश्य)

और उत्तरार्ध (सात दृश्य)। इस इकाई में आप इस नाटक को विस्तार से जान पाओगे। इसके नाटक में वर्तमान शिक्षक की तुलना द्रोणाचार्य से की गई है। इस नाटक के अंतर्गत वर्तमान कथा और पौराणिक कथा दोनों को चित्रित किया गया है। इसमें भ्रष्टाचारी शिक्षण व्यवस्था का चित्रण गुरु और शिष्य के रिश्तों में टकराव को दर्शाया है। इसमें पौराणिक और आधुनिक कथा का मेल है। इस नाटक में द्रोणाचार्य के रूप में वर्तमान विसंगति का चित्रण किया गया है। शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त अनाचार देखा गया है। इसमें अध्यापक के अस्तित्व की वर्तमान युगीन व्यवस्था और पिड़िति शिक्षक की विडंबना को दर्शाया गया है।

शंकर शेष (1933-1981) हिन्दी सठोत्तरी पीढ़ी के प्रसिद्ध नाटककार रहे है। उनके द्वारा महत्वपूर्ण नाटकों में रक्तबीज, अरे! मायावी सरोवर, कोमल गांधार, खजुराहों का शिल्पी, घरौंदा, नयी सभ्यता: नये नमूने, धर्म कुरुक्षेत्र, तिल का ताड़, कालजयी आदि नाटक लिखे है। इसके साथ ही एकांकी में एक प्याली कॉफी, पुलिया, अजायबघर और त्रिभुज का चौथा कौण की रचना की है। अनूदित नाटक में दूर के द्वीप (1959), एक और गाँव (1972), चल मेरे कद्दू ठुम्मक-ठुम्मक (1973), पंचतंत्र और गार्बो (1981)। उपन्यास में तेंदू के पत्ते (1956) चेतना (1971) खजुराहों की अलका (1972), धर्मक्षेत्र-कुरुक्षेत्र (1980)

8.3 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक का कथानक संक्षिप्त में-

'एक और द्रोणाचार्य' का कथानक सामाजिक और नैतिक मूल्यों के टकराव पर आधारित है। यह नाटक शिक्षा प्रणाली, नैतिकता और व्यक्तिगत आदर्शों की गहराई को व्यक्त करता है। कहानी के केंद्र में द्रोणाचार्य जैसे एक आदर्शवादी शिक्षक की कहानी है, जो अपने समय के सामाजिक और नैतिक प्रश्नों से जूझता है।

मुख्य पात्र शिक्षा को एक पवित्र कार्य मानते हैं और छात्रों में समानता और उच्च आदर्शों की भावना विकसित करना चाहते हैं। लेकिन समय और परिस्थितियाँ उसे अपनी नैतिकता और व्यक्तिगत सिद्धांतों से समझौता करने पर मजबूर कर देती हैं। शिक्षा व्यवस्था की खामियों और सामाजिक असमानताओं का वर्णन करते हुए यह पुस्तक इस बात पर प्रकाश डालती है कि किस तरह समाज में व्याप्त राजनीति, अन्याय और आर्थिक दबाव एक शिक्षक को भी प्रभावित कर सकते हैं।

अरविन्द एक शिक्षक है, अरविन्द ईमानदार व स्वाभिमानी व्यक्ति है, वह कॉलेज के मैनेजर के पुत्र को छात्र 'अनुराधा' से दुष्कर्म में पकड़ लेते हैं। इस के साथ कॉलेज के अध्यक्ष का पुत्र भी नकल करते हुए पकड़ा जाता है कॉलेज

का अध्यक्ष उसे धमकाता है और लालच देता है। इस पर अरविन्द टूट जाता है। वह अपनी रिपोर्ट वापस ले लेता है। प्रो. अरविन्द तनाव ग्रस्त और चिड़चिड़ा हो जाता है।

सत्ता के दबाव में आकर उनके आदर्शात्मक सिद्धान्त व सोच धरी की धरी रह जाती है और वे व्यवस्था की कठपुतली बनकर रह जाते हैं। विमलेन्दु ठीक ऐसा ही पात्र है, जिसने शिक्षक के रूप में सत्ता व व्यवस्था के विरोध में अपनी जान गँवाई। वह उसे झकझोरता है और अरविन्द से कहता है कि आओ तुम भी समझौता करो। यदि समाज तुम्हें भौंकने वाला कुत्ता बनाना चाहता है, तो तुम बनो, क्योंकि तुम व्यवस्था के विपरीत नहीं चल सकते। यदि चलोगे तो तुम्हें भी मेरी ही भाँति मार दिया जाएगा। नाटक में बहुत-से ऐसे प्रश्न हैं जिनमें एक शिक्षक स्वयं ही उलझ कर रह जाता है। ठीक वैसे ही जब युद्धभूमि में द्रोण ने युधिष्ठिर से पूछा था कि कौन मारा गया-अश्वत्थामा नाम का हाथी या पुत्र!

विमलेन्दु के अन्तिम वाक्य से नाटक समाप्त होता है कि 'तू द्रोणाचार्य है।' व्यवस्था और कोड़ों से पिटा हुआ द्रोणाचार्य, इतिहास की धार में लकड़ी के ठूंठ की भाँति बहता हुआ, वर्तमान के कगार से लगा हुआ, सड़ा गला द्रोणाचार्य। व्यवस्था के लाइट हाउस से अपनी दिशा माँगने वाला टूटे जहाज-सा द्रोणाचार्य।

नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' का उद्देश्य केवल पौराणिक गाथा को दोहराना नहीं रहा है, अपितु उसके माध्यम से किसी सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर मानवीय सत्य को खोजना है। मानव के अन्तर्मन के गहन अँधेरे में पैठकर उस बिन्दु को



महत्वपूर्ण बिंदुः-

पूर्वार्ध के पहले दोनों दृश्य वर्तमान कथा से जुड़े है जबकी तीसरा और चौथा दृश्य पूर्वदीप्त पद्धति से महाभारत के गुरु द्रोणाचार्य संबंधित कथा को प्रक्षेपित करते है। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक समानान्तर स्थितियों का सुसंबद्ध नाटक है।

छूकर एक ऐसी हलचल मचा देना है, जिससे व्यक्ति उन पौराणिक घटनाओं को नए सन्दर्भों में देखने, समझने और स्वीकार करने की कोशिश करे। यह दोहरे कथा-प्रसंगों को लेकर चलने वाला आधुनिक चेतना का प्रभावशाली प्रयोगशील नाटक है। इस नाटक में मूलत: दो समस्याओं को उठाया गया है-एक शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त अनाचार और दूसरी वेतन भोगी मध्यम वर्ग में जीवन जीने

वाले अध्यापक के अस्तित्व की समस्या है।

इस नाटक में महाभारत कालीन गुरु द्रोणाचार्य के जीवन के प्रसंगों की संवेदनशील झाँकियाँ प्रस्तुत की गई है। अश्वत्थामा का कृपी से दूध पीने की याचना करना, द्रोणाचार्य का कौरव-पाण्डव कुमारों का आचार्य बनना, एकलव्य से गुरु दक्षिणा के रूप में अंगूठा माँगना, द्रोपदी का चीरहरण करना और युधिष्ठिर का 'नरों वा कुंजरों का अर्द्धसत्य इन सभी प्रसंगों के आधार पर प्रोफ़ेसर अरविंद के जीवन की त्रासदी को अभिव्यक्त किया गया है।

अरविंद एक मध्यवर्गीय, आदर्श और सिद्धान्तों पर चलनेवाला व्यक्ति है। वह एक प्राईवेट कॉलेज का अध्यापक है। उसपर अपनी कैंसरग्रस्त माँ और विधवा बहन की जिंदगी निर्भर है। लड़का मेडिकल कॉलेज में भरती होने वाला है। अरविंद के कॉलेज का प्रेसिडेंट एक व्यापारी है, उसने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए शिक्षण संस्थाएँ खोली है। वह कॉलेज के प्रिंसपल को प्रलोभन और धमकियाँ देकर ग्रान्ट के रुपये लेकर अपने लेन-देन के व्यवसाय में लगा देता है और हजारों रुपये कमाकर कॉलेज को लौटाता है।

प्रेसिडेंट का लड़का राजकुमार कॉलेज में पढ़ता है जिसे परीक्षा में नक़ल करते हुए अरविंद पकड़ लेता है। इसकी रिपोर्ट वह यूनिवर्सिटी को भेजकर आदर्श शिक्षा प्रणाली का पालन करता है। अरविंद की पत्नी लीला और मित्र यदू प्रत्याघातों से विचलित हो, उसे कभी भी न्याय और सत्य के दुर्लंघ्य रास्ते पर चलने से रोकते है। उनका हौसला तोड़ते हुए यदु कहता है,''राजकुमार का विरोध करोगे तो हत्या। चंदू का विरोध करोगे तो सामाजिक हत्या। हत्या से बच नहीं सकते तुम।'' राजकुमार और उसके साथी बड़े ही क्रूर है,''अगर ये लोग विमलेंदु की हत्या कर सकते हैं तो तुम्हारी क्यों नहीं।'' न्यायप्रिय, सत्यवक्ता, सच्चरित्र व्यक्ति होने के बावजूद अरविंद कोई भी साहसी निर्णय नहीं कर पाता है। और विरोध की तकलीफ-देह भाषा की जगह समझौते की सुविधाप्रद भाषा बोलने लगता है और सत्ता के कभी भी नहीं टूटने वाले चक्रव्यूह में फँसकर मात्र ''बड़े-बड़े निरर्थक शब्द थूकनेवाला नपुंसक बुद्धिवादी'' बनकर रह जाता है। अपने प्रिय छात्र चंदूका धैर्य बंधाकर वह प्रेसिडेंट के दबावों के आगे झुक जाता है। इतना ही नहीं चंदू को छात्रों को भड़काने के अभियोग में कॉलेज से निकाल दिया जाता है।

प्रेसिडेंट अपने वादे के अनुसार अरविंद को प्रिंसपल बना देता है। एक दिन राजकुमार कॉलेज की छात्रा अनुराधा की एकांत का लाभ उठाकर उसे बालात्कार करने की कोशिश करता है। संयोग से उस दिन अरविंद वहाँ पहुँचता है और अनुराधा को बचा लेता है। अनुराधा उसके कहने पर राजकुमार के विरुद्ध रिपोर्ट कर देती है किन्तु इस बार भी प्रेसिडेंट बीच-बचाव का रास्ता ढूंढकर केस को

रफा-दफा कर देता है। अनुराधा इस मामले में दृढ़ता से आगे बढ़ती है पर राजकुमार के गुंडे उसे मारकर रास्ते पर फेंक देते हैं। लोग उसे आत्महत्या समझते हैं।

यह कहानी एक मोड़ ले लेती है। प्रेसिडेंट बीमार पड़ जाता है। ब्लडप्रेशर की तकलीफ से निस्तार पाने के लिए वह डॉक्टर की सलाह से सुबह-शाम घूमने जाने के लिए तैयार हो जाता है। अब प्रेसिडेंट रोज अरविंद के साथ टहलने जाने लगता है और वह एक शाम गिरकर मर जाता है। अरविंद पर प्रेसिडेंट को धकेल कर मार देने का अभियोग चलाया जाता है। चंदू चश्मदीद गवाह के रूप में अरविंद के खिलाफ गवाही देता है। यह नाटक चंदू के अर्ध सत्य के साथ ही समाप्त हो जाता है। इस नाटक के संदर्भ में डॉ. जयदेव तनेजा के अनुसार ''नाटककार ने अरविन्द, लीला, प्रेसिडेंट, अनुराधा और चंदू के समानान्तर द्रोणाचार्य, कृपी, दुर्योधन, द्रोपदी और अश्वात्थमा के प्रासंगिक और सटीक दृश्य प्रस्तुत करके समकालीन नाटकों में इतिहास प्रयोग का एक नया पहलू प्रकट किया है।'' डॉ. सुनीता मंजन बैल के अनुसार ''इस नाटक का उद्देश्य केवल पौराणिक गाथा को दोहराना नहीं रहा है किन्तु उसके माध्यम से किसी सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर मानवीय सत्य को खोजना है। मानव के अंतस में गहन अंधेरे में बैठकर उस बिंदु को छूकर एक ऐसी हलचल मचा देना है जिससे व्यक्ति उन पौराणिक घटनाओं को नये संदर्भों में देखने, समझने और स्वीकार करने की कोशिश करें।'' गोविंद चातक ने इस नाटक के संदर्भ में लिखा है ''एक और द्रोणाचार्य में मिथक और आधुनिक प्रसंगों का बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव मिथक में आधुनिक युग का समावेश पात्रों का मिथक से वर्तमान में प्रवेश आदि का सुंदर प्रयोग हुआ है।'' इसके अतिरिक्त डॉ. सुनीलकुमार लवटे जी लिखते है ''एक और द्रोणाचार्य कथ्यए वंशिल्प की नवीन ताकोले कर उपस्थित होनेवाला ऐसा प्रगतिशील नाटक है, जिसमें मंचन की संभावनाएं निहित है। निर्देशक के लिए अनेक सुप्त संकेतों से युक्त यह नाटक स्वातंत्र्योत्तर नाटक के इतिहास में शिल्प और शैली वैचित्र्य के कारण एक अलग व्यक्तित्व धारण करता है।''

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में वर्णित पौराणिक कथा में द्रोणाचार्य और एकलव्य की पौराणिक कथा को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत किया है, जहाँ एक शिक्षक और उसके आदर्शों के संघर्ष को दर्शाया गया है। नाटक के उत्तरार्ध में मुख्य विषय शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और एक शिक्षक के अस्तित्व की समस्या को उजागर करता है। इसमें दिखाया गया है कि कैसे एक आदर्शवादी शिक्षक अरविंद अपने ऊपर के अधिकारियों, सत्ता और सामाजिक दबावों के आगे झुकने को मजबूर हो जाता है। नाटक के अंत में, अरविंद को यह एहसास होता है कि वह भी उसी व्यवस्था का हिस्सा बन चुका है, जिससे वह लड़ने की कोशिश कर रहा था। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में पौराणिक कथा का संदर्भ महाभारत

से लिया गया है, विशेषत: गुरु द्रोणाचार्य और उनके शिष्य अर्जुन की कथा। इस नाटक में, द्रोणाचार्य की भूमिका एक आधुनिक शिक्षक के रूप में प्रस्तुत की गई है, जो शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और नैतिक संघर्षों से जूझता है। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के अंतर्गत अश्वत्थामा की कथा महाभारत के संदर्भ में प्रस्तुत की गई है। अश्वत्थामा, जो द्रोणाचार्य और कृपी का पुत्र है, अपने पिता की मृत्यु के पश्चात क्रोध और प्रतिशोध से भर जाता है।

इस नाटक के अंतर्गत, अश्वत्थामा का चरित्र आधुनिक संदर्भ में भी प्रतीकात्मक रूप से उभरता है। वह एक ऐसे व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, जो अन्याय और सत्ता के दबाव के कारण आक्रोशित हो जाता है। नाटक में यह दिखाया गया है कि कैसे अश्वत्थामा की कथा शिक्षा व्यवस्था और सामाजिक अन्याय के प्रसंग से जुड़ती है।

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में कई महत्वपूर्ण दृश्य को दर्शाया गया है:-

- द्रोणाचार्य और एकलव्य का संवाद- इसके माध्यम से नाटक में यह दृश्य शिक्षा और गुरु-शिष्य परंपरा के नैतिक द्वंद्व को दर्शाता है।
- अरविंद का संघर्ष-'एक और द्रोणाचार्य' नाटक का मुख्य पात्र अरविंद, आदर्शों और भ्रष्ट व्यवस्था के बीच संघर्ष करता है।
- शिक्षा प्रणाली पर कटाक्ष- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के माध्यम से दिखाया गया है कि कैसे शिक्षा व्यवस्था में नैतिकता और मूल्यों का ह्रास हो रहा है।
- अश्वत्थामा का प्रतीकात्मक चित्रण- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में वर्णित यह दृश्य महाभारत के संदर्भ में आधुनिक समाज की विसंगतियों को दर्शाता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक कितने अंक में विभाजित है? उसकी कथा को संक्षिप्त में लिखे।

प्रश्न-: 2. नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' का मुख्य विषय क्या है?

8.4 नाटक के पात्रों का परिचय

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में आधुनिक और पौराणिक पात्र दो भागों में दर्शाएँ गये है। आधुनिक पात्र में अरविंद जो महाविद्यालय में प्रोफेसर हैं। वह आधुनिक युग के द्रोणाचार्य है। यदु अरविंद के मित्र है, जो जूनियर ऑफिसर है। प्रिंसिपल, प्रेसिडेंट (कॉलेज के मालिक, राजकुमार के पिता हैं),

विमलेंदु जो पुराना शिक्षक है और नाटक का मृत पात्र है, परंतु विमलेंदु प्रेत के रूप में अरविंद से संवाद करता है। राजकुमार कॉलेज छात्र और प्रेसिडेंट का बेटा है। चंदु समझदार और सच्चरित छात्र है और अरविंद का प्रिय छात्र है। इसके अतिरिक्त जज, वकील आदि हैं। स्त्री पात्रों में लीला जो अरविंद की पत्नी है। अनुराधा चंदु की प्रियसी और अरविंद के कॉलेज की छात्रा है। पौराणिक पात्रों में पुरुष पात्र द्रोणाचार्य गुरु, अश्वत्थामा द्रोणाचार्य का पुत्र है। इसके अतिरिक्त भीष्म, अर्जुन, एकलव्य, युधिष्ठिर और सैनिक आदि है। स्त्री पात्र में कृपी द्रोणाचार्य की पत्नी है।

अरविंद अपने विद्रोही स्वरूप का प्रदर्शन करता है, जब वह दु:खी होकर लीला से कहता है कि ''अब किस-किससे डरूँ, लीला? कॉलेज को दुकान की तरह चलाने वाले उस प्रेसिडेंट से? अंगूठा-छाप कमेटी-मेंबरों से? चुगली खाने वाले अपने सहयोगियों से? उस ली? लिजे बेहूदे प्रिंसिपल से? विद्यार्थियों से? क्या पूरी उम्र डरते ही रहना होगा?'' इस प्रकार अरविंद वर्तमान की शिक्षा व्यवस्था को पाठक के सम्मुख रखता है। व्यवस्था के आगे घुटने टेकने के लिए विमलेंदु प्रेत बनकर अरविंद से कहता है कि ''साले मिडिल क्लास के आदमी! अपनी हर समस्या को ग्लोरीड़ाई करोगे। मेरी बीवी साल भर से नौकरी की तलाश में दर-दर भटक रही है। सब आश्वासन देते हैं, नौकरी कोई नहीं देता। सब बकवास है।'' इसके साथ ही पौराणिक कथा के माध्यम से तत्कालीन शिक्षण व्यवस्था को दर्शाने हेतु द्रोणाचार्य का संवाद अर्जुन से दर्शाया गया है। द्रोणाचार्य अर्जुन से कहते हैं कि ''एकलव्य का अंगूठा बने रहने का अर्थ समझते हो? धनुर्विद्या पर उसका अधिकार हो जाएगा। धीरे-धीरे उसकी जाति का अधिकार हो जाएगा। शक्तिशाली होने के बाद ये क्षत्रियों से स्पर्धा करेंगे और परिणाम होगा-वर्णाश्रम धर्म पर संकट। उसका अंगूठा छीनकर मैं इस संभावनाओं को हमेशा के लिए समाप्त कर दूंगा समझे?'' इस प्रकार इस नाटक में शिक्षा व्यवस्था पर कटाक्ष किया है।

8.5 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की रंगमचीय विशेषता

'एक और द्रोणाचार्य' एक प्रभावशाली नाटक है जो नाट्यशास्त्र की कई विशिष्ट रंगमंचीय विशेषताओं को समाहित किये हुए है। इसकी प्रमुख रंगमंचीय विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं:-

➢ यथार्थवादी प्रस्तुतीकरण-'एक और द्रोणाचार्य' की सबसे प्रमुख रंगमंचीय विशेषता इसका यथार्थवादी प्रस्तुतीकरण है। नाटककार शंकर शेष ने कथानक को किसी काल्पनिक या अलौकिक वातावरण में न रखकर बिल्कुल सामाजिक और पारिवारिक यथार्थ से जोड़ा है। मंच पर प्रस्तुत दृश्य सामान्य मध्यमवर्गीय

परिवेश के प्रतीक हैं, जिनमें शिक्षक का संघर्ष, परिवार की आर्थिक तंगी और समाज के मूल्यविरोधी दबाव जीवंत हो उठते हैं। दर्शक जब इन दृश्यों को देखते हैं, तो उन्हें लगता है मानो यही घटनाएँ उनके आसपास घट रही हों। यथार्थवादी प्रस्तुतीकरण का सबसे सशक्त पक्ष यह है कि यह दर्शक को कहानी में आत्मसात कर देता है। साथ ही साथ ही इस नाटक की भाषा, संवाद और पात्रों की गतिविधियाँ सब कुछ जीवन की सच्चाई के निकट प्रतीत होती हैं। कहीं भी कृत्रिमता या अतिरेक का भाव नहीं मिलता। उदाहरण के तौर पर, विमलेंदु और लीला के बीच होने वाला संवाद किसी भी सामान्य पति-पत्नी की बातचीत जैसा स्वाभाविक है। शिक्षा संस्थान की खामियों पर उठाए गए प्रश्न भी समाज में प्रचलित यथार्थ का ही दर्पण हैं। मंच सज्जा भी इसी यथार्थवादी दृष्टिकोण को समर्थन देती है। साधारण गृहस्थ जीवन की झलक, विद्यालय का वातावरण, और सामाजिक परिस्थितियों का सीधा चित्रण दर्शक को अपने जीवन से जोड़ता है। यही कारण है कि दर्शक केवल दर्शक भर नहीं रहते, बल्कि नाटक के सहयात्री बन जाते हैं। इस तरह यथार्थवादी प्रस्तुतीकरण नाटक को प्रभावशाली और प्रासंगिक बनाता है।

➢ संवादशक्ति-'एक और द्रोणाचार्य' में संवाद शक्ति इसकी सबसे बड़ी ताकत है। नाटक के संवाद केवल वार्तालाप तक सीमित नहीं रहते, बल्कि पात्रों की मानसिक स्थिति, सामाजिक विडंबनाओं और नैतिक द्वंद्व को गहराई से प्रकट करते हैं। सभी संवाद भावनाओं का ऐसा माध्यम बन जाता है, जो दर्शक के भीतर हलचल पैदा करता है। विमलेंदु का संवाद, जिसमें वह आदर्श और यथार्थ के बीच फँसने की पीड़ा व्यक्त करता है, दर्शकों को सोचने पर मजबूर कर देता है। संवादों में भावनात्मक गहराई के साथ-साथ वैचारिक तीव्रता भी देखने को मिलती है। नाटककार ने पात्रों के संवादों को इस प्रकार गढ़ा है कि वे किसी भी प्रकार की बनावटी भाषा का प्रयोग नहीं करते। भाषा सहज, संप्रेषणीय और सामाजिक यथार्थ से जुड़ी हुई है। इसी कारण संवाद न केवल पात्रों की मन:स्थिति को स्पष्ट करते हैं, बल्कि दर्शकों को अपने साथ जोड़ने में भी सफल रहते हैं। संवादों की एक और विशेषता यह है कि वे केवल शब्दों का आदान-प्रदान नहीं हैं, बल्कि मंचीय गतिशीलता और वातावरण को भी गढ़ते हैं। जब विमलेंदु शिक्षा व्यवस्था के भ्रष्टाचार की ओर इशारा करता है, तो यह संवाद समाज में व्याप्त अन्याय के विरुद्ध आवाज़ बन जाता है। वहीं, लीला और विमलेंदु के बीच के निजी संवाद मध्यवर्गीय जीवन की खामोश पीड़ाओं को उजागर करते हैं।

➢ प्रकाश और ध्वनि का प्रभाव-नाटक के मंचन में प्रकाश और ध्वनि

का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है। 'एक और द्रोणाचार्य' में मंचीय तकनीक का प्रयोग केवल दृश्य सज्जा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह नाटक की संवेदनात्मक और भावनात्मक गहराई को बढ़ाने में सहायक है। प्रकाश व्यवस्था का कुशल प्रयोग पात्रों की मानसिक स्थिति को प्रकट करने के लिए किया गया है। उदाहरण के तौर पर, जब विमलेंदु अकेला बैठा अपनी पीड़ा व्यक्त करता है, तब हल्की, धुंधली रोशनी उसकी निराशा को और गहरा कर देती है।ध्वनि का प्रयोग भी भावनाओं की तीव्रता को बढ़ाने में सहायक होता है। कहीं पर मौन का प्रभाव दर्शक को भीतर तक झकझोर देता है, तो कहीं पर हल्की संगीतात्मक ध्वनियाँ वातावरण को गंभीर और मार्मिक बना देती हैं। मंच पर कदमों की आहट, दरवाजे की खटखटाहट या वातावरणीय शोर जैसे साधारण ध्वनि प्रभाव भी दृश्य को अधिक यथार्थवादी बनाते हैं। प्रकाश और ध्वनि का यह संयोजन दर्शकों को नाटक के भीतर खींच लेता है। मंच केवल दृश्य घटनाओं का स्थान न रहकर भावनात्मक अनुभव का माध्यम बन जाता है। यह तकनीकी पक्ष केवल सजावट नहीं, बल्कि कथा के संदेश को और गहराई से संप्रेषित करने का साधन है। इस प्रकार, प्रकाश और ध्वनि का प्रभाव नाटक की रंगमंचीय सफलता में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

➢ चरित्र चित्रण–'एक और द्रोणाचार्य' का चरित्र चित्रण इसकी रंगमंचीय शक्ति का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है। नाटककार ने प्रत्येक पात्र को केवल घटनाओं का वाहक नहीं बनाया, बल्कि उन्हें गहन मनोवैज्ञानिक गहराई प्रदान की है। विमलेंदु जैसे पात्र केवल शिक्षक भर नहीं हैं, बल्कि वे उस समाज का प्रतीक हैं जो आदर्श और यथार्थ के बीच निरंतर संघर्ष करता है। लीला का चरित्र एक ओर मध्यवर्गीय स्त्री की मजबूरियों और पीड़ाओं को उजागर करता है, तो दूसरी ओर परिवार की ज़िम्मेदारियों के प्रति उसकी सजगता को भी दिखाता है। अश्वत्थामा का चरित्र, जो पौराणिकता से लिया गया है, आधुनिक संदर्भ में प्रतिशोध और आक्रोश का प्रतीक बनकर सामने आता है। नाटक में पात्रों के माध्यम से केवल घटनाएँ ही नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाएँ और संघर्ष भी जीवंत हो उठते हैं। चरित्र चित्रण की विशेषता यह है कि सभी पात्र बहुआयामी हैं। उनमें अच्छाई–बुराई, आदर्श–समझौता और स्वप्न–यथार्थ का टकराव स्पष्ट रूप से दिखता है। इस कारण दर्शक पात्रों को केवल मंचीय किरदार न मानकर जीवित व्यक्तित्व के रूप में अनुभव करते हैं। यही कारण है कि दर्शकों पर नाटक का गहरा प्रभाव पड़ता है।

➢ सामाजिक संदेश–'एक और द्रोणाचार्य' केवल मनोरंजन के लिए लिखा गया नाटक नहीं है, बल्कि यह एक गहन सामाजिक संदेश भी देता है।

नाटककार ने शिक्षा व्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार, समाज में आदर्शों की अवहेलना और मध्यमवर्गीय जीवन की विवशताओं को बहुत गहराई से प्रस्तुत किया है। यह नाटक दर्शाता है कि कैसे एक आदर्शवादी शिक्षक भी परिस्थितियों के दबाव में आकर अपने मूल्यों से समझौता करने के लिए विवश हो जाता है। नाटक का सामाजिक संदेश यही है कि व्यवस्था की विसंगतियों और भ्रष्टाचार को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। यह दर्शकों को सोचने पर मजबूर करता है कि शिक्षा जैसी पवित्र धारा भी जब स्वार्थ और भ्रष्टाचार से दूषित हो जाती है, तो समाज के भविष्य पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा। नाटक केवल प्रश्न नहीं उठाता, बल्कि आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है। इस सामाजिक संदेश का महत्व इस कारण भी है कि यह केवल नाटक के मंच तक सीमित नहीं रहता, बल्कि दर्शकों के जीवन तक पहुँच जाता है। दर्शक स्वयं से प्रश्न करते हैं कि वे किस प्रकार इस भ्रष्ट व्यवस्था को बदलने में योगदान कर सकते हैं। अंत 'एक और द्रोणाचार्य' अपने समय का ही नहीं, बल्कि आज के समय का भी जीवंत सामाजिक दस्तावेज है।

➢ मंच पर गतिशीलता–नाटक की सफलता का एक बड़ा कारण इसकी मंच पर गतिशीलता है। 'एक और द्रोणाचार्य' में पात्रों की गतिविधियाँ, उनके आपसी संवाद, मंच पर उनकी स्थितियाँ और उनकी शारीरिक मुद्राएँ नाटक को जीवंत बना देती हैं। यह केवल शब्दों का नाटक नहीं है, बल्कि भाव-भंगिमाओं और क्रियाओं का भी प्रभावशाली समन्वय है। जब विमलेंदु अपने संघर्ष की व्यथा व्यक्त करता है, तो उसका मंच पर घूमना, कभी रुक जाना और कभी हाथों से आक्रोश प्रकट करना दर्शकों पर गहरा असर डालता है। इसी प्रकार, लीला का अपने घर के कामों में व्यस्त रहना और बीच-बीच में संवादों के माध्यम से अपनी पीड़ा प्रकट करना मंच की वास्तविकता को और प्रबल बना देता है। मंच पर गतिशीलता का अर्थ केवल शारीरिक हलचल नहीं है, बल्कि यह पूरे नाटक के प्रवाह को बनाए रखने का साधन है। पात्रों के बीच की परस्पर क्रियाएँ और उनके द्वारा व्यक्त किया गया तनाव नाटक की गति को जीवंत बनाए रखता है। दर्शक कहीं भी ऊबते नहीं, बल्कि पूरे समय पात्रों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़े रहते हैं।



महत्वपूर्ण बिंदुः-

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक दोहरे कथाप्रसंगों को लेकर चलने वाला आधुनिक चेतना का प्रभावशाली प्रयोगशील नाटक है।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न 3 : 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में विमलेंदु का चरित्र क्या दर्शाता है?

पश्न 4 : अरविंद का पत्नी लीला से संवाद शिक्षा व्यवस्था की कौन-सी विसंगति प्रकट करता है?

पश्न 5 : 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक का सामाजिक संदेश क्या है?



8.6 सारांश

सारांश स्वरूप शंकर शेष द्वारा रचित 'एक और द्रोणाचार्य' प्रसिद्ध नाटक की कथा दो कालक्रम पौराणिक और आधुनिक काल को दर्शाती है। नाटक की कथा महाभारत के प्रसिद्ध चरित्र द्रोणाचार्य से प्रेरित है, लेकिन इसे आधुनिक संदर्भ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें मुख्य पात्र एक शिक्षक होता है, जो अपने सिद्धांतों और समाज की वास्तविकता के बीच फंसा हुआ है। द्रोणाचार्य ने अर्जुन को विशेष शिक्षा देकर अन्य शिष्यों के साथ भेदभाव किया था, उसी प्रकार ही इस नाटक में वर्तमान शिक्षा प्रणाली में वर्गभेद और अन्याय को दर्शाया गया है।

शिक्षा क्षेत्र में शिक्षक अपने आदर्शों के प्रति दृढ़ रहता है, लेकिन परिस्थितियाँ उसे ऐसे निर्णय लेने पर मजबूर करती हैं, जो उसके मूल्यों के विरुद्ध जाने पर मजबूर करता है। यह संघर्ष नाटक के पात्र की आंतरिक यातना को दर्शाता है और दर्शकों को सोचने पर मजबूर करता है कि क्या नैतिकता और व्यवहारिकता के बीच संतुलन संभव है? 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के संवाद गहरे और प्रभावशाली हैं, जो दर्शकों को तत्कालीन सामाजिक परिवेश पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करते हैं। इसमें गुरु शिष्य संबंध, सामाजिक भेदभाव, आदर्शवाद और प्रगतिशील विषयवस्तु को प्रमुखता से उकेरा गया है। यह नाटक महाभारत की कथा का पुनर्पाठ ही मात्र नहीं है, बल्कि यह समाज में शिक्षा और नैतिकता के प्रश्नों पर एक महत्वपूर्ण टिप्पणी करता है। शंकर शेष ने इस नाटक के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया है कि किस प्रकार हर युग में 'द्रोणाचार्य' जैसा व्यक्तित्व मौजूद रहता है, जो परिस्थितियों और मूल्यों के संघर्ष में उलझे हुए रहते हैं।

8.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर :- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक 2 अंकों, 11 दृश्य है। इसके रचयिता शंकर शेष है, जो सन् 1977 ई. में लिखा गया है। इसकी कथा दो भागों में रची गयी है। पौराणिक और आधुनिक। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर :- नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' का मुख्य विषय वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में नैतिकता, गुरु-शिष्य संबंधों की जटिलता और सामाजिक विषमताएँ व्याप्त है। यह नाटक आधुनिक शिक्षा प्रणाली में व्याप्त भ्रष्टाचार, पक्षपात, राजनीतिक हस्तक्षेप और शिक्षक के आदर्शों के संघर्ष को उजागर करता है।ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर :- विमलेंदु व्यवस्था विरोधी आदर्शवादी शिक्षक का प्रतीक है, जो संघर्ष करते-करते बलिदान देता है। विस्तृत विवेचन के लिए कृपया उक्त इकाई का अवलोकन करें।

प्रश्न 4 का उत्तर :- यह संवाद शिक्षा व्यवस्था की दुकानदार मानसिकता और भयग्रस्त मध्यवर्गीय जीवन की विडंबना दर्शाता है। अधिक विस्तार से जानने के लिए कृपया ऊपर देखें।

प्रश्न 5 का उत्तर :- यह नाटक बताता है कि भ्रष्ट व्यवस्था में आदर्शवादी भी मजबूर होकर समझौता करने पर विवश हो जाते हैं। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

8.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. शेष, शंकर. (1977). एक और द्रोणाचार्य. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
2. चातक, गोविंद. (1985). आधुनिक हिंदी नाटक: भाषिक और संवादीय संरचना. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
3. नगेंद्र, डॉ. (1980). आधुनिक हिंदी नाटक. आगरा: साहित्य भवन।
4. तनेजा, जयदेव. (1988). हिंदी रंगमंच और समाज. दिल्ली: लोक भारती।
5. शर्मा, नरेश. (1995). हिंदी नाट्य साहित्य का विकास. वाराणसी: विश्ववाणी प्रकाशन।
6. बैल, सुनीता मंजन. (2001). समकालीन हिंदी नाटक और उसका

सामाजिक संदर्भ. भोपाल: मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
7. लवटे, सुनील कुमार. (2005). हिंदी रंगमंच: कथ्य और शिल्प. मुंबई: साहित्य सेवा संस्थान।
8. मिश्र, रामजी. (2008). हिंदी नाटक की परंपरा और प्रयोगशीलता. पटना: छात्र मित्र प्रकाशन।
9. सिंह, महेंद्र. (2012). हिंदी रंगमंच: परंपरा और प्रयोग. जयपुर: राजस्थानी ग्रंथालय।
10. जोशी, अजय. (2018). स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक की प्रवृत्तियाँ. दिल्ली: साहित्य भवन।

8.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के पात्र कौन-कौन है?
2. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक शिक्षण में व्याप्त भ्रष्टाचार का नाटक है? संक्षिप्त में बताये।
3. अरविंद के चरित्र-चित्रण का वर्णन कीजिए
4. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए
5. एक और द्रोणाचार्य' नाटक में विमलेंदु की भूमिका क्या है?
6. नाटक में द्रोणाचार्य और एकलव्य प्रसंग की प्रासंगिकता क्या है?

(ख) निम्नलिखित पश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के कथानक की विशेषताओं का निरूपण कीजिए।
2. कल का द्रोणाचार्य आज का अरविंद है। आप इससे कितना सहमत है?
3. नाटक के तत्वों के आधार पर 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की समीक्षा कीजिए।
4. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षा व्यवस्था और राजनीति के संबंध का विश्लेषण कीजिए।
5. नाटक में गुरु-शिष्य संबंध की प्रासंगिकता को पौराणिक और आधुनिक संदर्भों में स्पष्ट कीजिए।
6. शंकर शेष की नाट्य-शैली के परिप्रेक्ष्य में 'एक और द्रोणाचार्य' का मूल्यांकन कीजिए।

******

इकाई 9 : एक और द्रोणाचार्य (भाग-II)

एक और द्रोणाचार्य नाटक का मूल उद्देश्य और शिक्षक जीवन की करुण स्थितियों का वर्णन

9.1 उद्देश्य
9.2 प्रस्तावना
9.3 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की विषयवस्तु की विशेषता
9.4 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के पात्रों का चरित्र-चित्रण
9.5 शैली और कथानक संबंधी विशेषताएँ
9.6 सारांश
9.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
9.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
9.9 अभ्यास प्रश्न

9.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की कथावस्तु, शिल्प और पात्रों की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- शिक्षकों की सामाजिक, आर्थिक समस्याओं एवं शिक्षा प्रणाली की विफलताओं का विश्लेषण करना सीखेंगे।
- नाटक की सामाजिक प्रासंगिकता के आधार पर शिक्षक-सम्मान और आत्मचिंतन की आवश्यकता को पहचान पाएंगे।
- शिक्षक की भूमिका को आदर्श और यथार्थ के द्वंद्व में समझने की क्षमता विकसित करेंगे।
- शिक्षा और सत्ता के गठ जोड़ के नकारात्मक प्रभावों की पहचान कर सकेंगे।
- सामाजिक और पारिवारिक दबावों का शिक्षक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को समझ पाएंगे।
- नाटक की शैलीगत और कथानक विशेषताओं के आधार पर आलोचनात्मक दृष्टि विकसित करेंगे।



महत्वपूर्ण बिंदु :-

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के रचयिता शंकर शेष (1933-1981) हिन्दी की साठोत्तरी पीढ़ी के सुप्रसिद्ध नाटककार है। शंकर शेष (जन्म मध्यप्रदेश) कवि और कहानीकार भी रहे परंतु नाटककार के रूप में ज्यादा मशहूर हुए है।

9.2 प्रस्तावना

एक शिक्षक समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह केवल ज्ञान का ही वाहक नहीं होता, बल्कि नैतिक मूल्यों और सामाजिक चेतना का प्रेरक भी होता है। इसके बावजूद, समाज में शिक्षक वर्ग को वह सम्मान और सुविधाएँ प्राप्त नहीं होती है, जिनके वह वास्तव में हकदार हैं।

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक समाज में व्याप्त शिक्षक की इसी विडंबना को उजागर किया गया है। यह शिक्षक की जीवन यात्रा को दर्शाता है, जिसमें उसे सामाजिक असंवेदनशीलता, आर्थिक कठिनाइयों और प्रशासनिक उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। आदर्शों और यथार्थ के बीच संघर्ष से जूझता शिक्षक अपने अस्तित्व को बचाने और शिक्षा प्रणाली की विसंगतियों को सहन करने को मजबूर होता है। इस नाटक में शिक्षा प्रणाली की खामियों को उजागर करने के साथ-साथ समाज को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करने में सफल हुआ है। यह केवल एक शिक्षक की कहानी नहीं है, बल्कि संपूर्ण शिक्षकीय समुदाय की वास्तविकता को दर्शाता है। 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक यह प्रश्न उठाता है कि क्या आज का समाज अपने शिक्षकों का वास्तविक रूप से सम्मान कर रहा है?

यह नाटक समाज को सोचने पर मजबूर करता है कि शिक्षक का जीवन केवल शिक्षा देने तक ही सीमित नहीं, बल्कि वह स्वयं भी आर्थिक, सामाजिक और मानसिक संघर्षों से जूझता रहता है। इस संदर्भ में, यह नाटक समाज को जागरूक करने के लिए और शिक्षकों की स्थिति सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण संदेश देता है।

9.3 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की विषयवस्तु की विशेषता

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के अंतर्गत नाटककार शंकर शेष द्वारा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार, पक्षपात, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक दबावों के बोझ से निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति असहाय और बेबस चरित्र को प्रस्तुत किया है। महाभारत कालीन प्रसिद्ध पात्र गुरु द्रोणाचार्य के

जीवन प्रसंग को आधार बनाकर वर्तमान की विसंगति को दर्शाया है। नाटक दो भागों में दर्शाया गया है पूर्वार्ध (चार दृश्य) और उत्तरार्ध (सात दृश्य)।

'एक और द्रोणाचार्य' शिक्षा व्यवस्था को दर्शाते हुए अपने प्रोढ़े? चिंतन को दर्शाने वाली नाट्य कृति है। यह नाटक एक मिथकीय नाटक है, यह नाटक दोहरे कथा प्रसंग को लेकर रचा गया है। एक में पौराणिक कथा और दूसरे में आधुनिक कथा का वर्णन है। 'एक और द्रोणाचार्य' का पौराणिक आख्यान समानांतर रूप आधुनिक सुविधा भोगी एवं स्वार्थी शिक्षक समुदाय पर घटित होकर वर्तमान की सड़ी-गली शिक्षक व्यवस्था का वर्णन किया है। इस नाटक के अंतर्गत महाभारत कालीन गुरु द्रोणाचार्य के जीवन प्रसंग की संवेदनात्मक झांकियों को प्रस्तुत किया है। द्रोणाचार्य और कृपी पुत्र अश्वत्थामा का कृपी से दूध पीने की याचना करना, द्रोणाचार्य का कौरव-पांडव कुमारों का आचार्या बनना, एकलव्य से गुरु दक्षिणा के रूप में अंगूठा मांगना, द्रौपदी के चीरहरण में अश्वत्थामा का मौन रहना और युधिष्ठिर कुंजरों का अर्धसत्य आदि सभी प्रसंगों के आधार पर प्रोफेसर अरविंद के जीवन की त्रासदी को दर्शक के सम्मुख अभिव्यक्त किया गया है।

अरविंद एक मध्यवर्गीय, आदर्श व सिद्धांतों पर चलने वाला व्यक्ति है। वह एक प्राइवेट कॉलेज में प्रोफेसर है। उस पर अपनी कैंसरग्रस्त माँ और विधवा बहन की जिंदगी भी निर्भर है। लड़का मैडिकल कॉलेज में भरती होने वाला है। अरविंद जिस कॉलेज में प्रोफेसर है उस कॉलेज का प्रेसिडेंट एक व्यापारी है। उसने अपने व्यक्तिगत लाभ हेतु शिक्षक संस्थाएं खोली है। वह कॉलेज के प्रिंसिपल को प्रलोभन देता है। साथ ही में धमकियाँ देकर ग्रान्ट के रुपए लेकर अपने लेन-देन के व्यवसाय में लगा लेता है और हजारों रुपये कमाकर कॉलेज को लौटाता है।

नाटककार शंकर शेष 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक की नायिका अरविंद की पत्नी और द्रोणाचार्य की पत्नी कृपी दोनों के समान विचारों का चित्रण किया है। दोनों की समस्याएँ भी एक समान है:- अन्न और वस्त्र की। इस समस्या के समाधान के लिए दोनों अपने-अपने पति को सुखभोगी बनने की प्रेरणा देती है। लीला आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करते हुए उत्तेजित होकर कहती है ''कभी सोचा, इस घर में अकेले कौन जिया है? तुम, केवल तुम! हम लोगों को कभी अपने अस्तित्व की जानकारी ही नहीं हुई। (विराम) तुम तय करते रहे कि हम लोग कैसे जिएँ और हम लोग उसी तरह जीते रहे। लेकिन अब यह नहीं होगा।'' सुख सुविधाओं की चाह से दोनों अपने-अपने पति को गलत रास्ते पर चलने के लिए कहती है। नाटक के संदर्भ में विभिन्न साहित्यिक आलोचकों और विद्वानों ने इस नाटक को महत्वपूर्ण बताया है। नामवर सिंह

ने इस नाटक में शिक्षा और सत्ता के द्वंद्व को महत्वपूर्ण बताया और इसे एक सामाजिक टिप्पणी के रूप में देखा है। डॉ.रामविलास शर्मा ने माना है कि द्रोणाचार्य के चरित्र को एक प्रतीकात्मक छवि के रूप में देखा,जो आदर्शवाद और अवसरवाद के बीच संघर्ष को दर्शाता है। डॉ. नगेन्द्र ने इस नाटक को हिंदी साहित्य में यथार्थवाद की उत्कृष्ट मिसाल के रूप में स्वीकार किया आदि विद्वानों ने इस नाटक संबंधी अनेक विचारों को प्रकट किया है। यह नाटक केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर करने वाला एक साहित्यिक दस्तावेज है।

9.4 नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' का समाज पर प्रभाव

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के पात्र गहराई से जीवन और समाज की वास्तविकताओं को दर्शाते हैं। नाटक के पात्रों का चरित्र-चित्रण के माध्यम से विशेषताओं को दर्शाया गया है। मुख्य पात्र (शिक्षक) के माध्यम से समाज में व्याप्त शिक्षण व्यवस्था की खामियों को बखूबी रूप से प्रस्तुत किया है। शिक्षक अरविंद नाटक का केन्द्रीय किरदार है,जो संघर्षरत शिक्षक की भूमिका निभाता है। वह ज्ञान और नैतिकता में विश्वास रखने वाला पात्र है, लेकिन समाज और प्रशासन की असंवेदनशीलता के कारण आर्थिक, मानसिक और सामाजिक रूप से पीड़ित होता है। आदर्शवाद और यथार्थ के बीच संघर्ष उसे भीतर से तोड़ता है, जिससे उसकी विवशता और पीड़ा दर्शक के सम्मुख स्पष्ट होती है। प्रशासनिक अधिकारी पात्र को शिक्षा व्यवस्था का प्रतिनिधि माना जा सकता है। वह शिक्षक की समस्याओं को अनदेखा करता है और शिक्षा को केवल एक औपचारिक प्रक्रिया मानता है। प्रशासनिक अधिकारी की मानसिकता शिक्षकों को एक निम्न स्तर का कर्मचारी मानती है, जिससे उनकी गरिमा पर प्रश्न उठते हैं। समाज के प्रतिनिधि (विद्यार्थी या अन्य पात्र) यह पात्र दर्शाते हैं कि समाज किस प्रकार शिक्षक को देखता है। कई विद्यार्थी शिक्षक के आदर्शों को समझते हैं, जबकि कुछ समाज के प्रभाव के कारण उनकी पीड़ा को अनदेखा करते हैं। एक शिक्षक को समाज में जो सम्मान मिलना चाहिए, उसकी कमी इन पात्रों के व्यवहार से उजागर होती है। शिक्षक के परिवार की भूमिका की बात की जाये तो शिक्षक के व्यवहार के पीछे परिवार एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि शिक्षक की आर्थिक कठिनाइयाँ उसके परिवार को भी प्रभावित करती हैं। अरविंद के परिवार के सदस्य कभी सहानुभूति दिखाते हैं, तो कभी उस पर आर्थिक सुधार का दबाव भी डालते हैं। इस पात्र के माध्यम से शिक्षक के व्यक्तिगत और पारिवारिक संघर्ष को उभारा जाता है। विरोधी या कटु आलोचक पात्र की चर्चा की जाये तो यह पात्र समाज की उन धाराओं का प्रतीक है, जो शिक्षक को केवल एक सेवा प्रदाता

मानने का समर्थन करता है। वह शिक्षा के मूल्यों से अधिक भौतिक लाभ पर अधिक ध्यान देता है और शिक्षक की समस्याओं को महत्वहीन समझता है।

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षक अरविंद की पीड़ा और संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं हैं, बल्कि पूरे समाज और शिक्षा व्यवस्था के संकट का प्रतीक हैं। इस नाटक के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा को समाज में किस प्रकार देखा और प्रस्तुत किया जा रहा है। शिक्षक के चरित्र के माध्यम से यह दिखाया गया है कि जब समाज और प्रशासन शिक्षकों की समस्याओं को गंभीरता से नहीं लेते, तो इसका परिणाम न केवल शिक्षक के व्यक्तिगत जीवन पर पड़ता है, बल्कि संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था पर भी गहरा प्रभाव छोड़ता है। आज भी समाज में शिक्षक को नैतिकता और ज्ञान का संवाहक माना जाता है, लेकिन व्यवहारिक स्तर पर उन्हें सम्मान, सहयोग और आवश्यक संसाधन नहीं मिल पाते। अत:नाटक हमें उस अंतर्विरोध की ओर ले जाता है, जहाँ समाज शिक्षक से आदर्श की अपेक्षा करता है, परंतु उन्हें जीवनयापन हेतु आवश्यक साधन उपलब्ध कराने में असफल रहता है।

नाटक यह संदेश देता है कि जब शिक्षा व्यवस्था में असमानता और असंवेदनशीलता हावी होती है, तो इसका असर पीढ़ियों पर पड़ता है। विद्यार्थी शिक्षक को देखकर सीखते हैं, लेकिन यदि शिक्षक स्वयं मानसिक और आर्थिक तनाव से गुजर रहा हो, तो उसकी शिक्षा और मार्गदर्शन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। इस दृष्टि से नाटक केवल एक व्यक्ति की व्यथा नहीं, बल्कि व्यापक सामाजिक यथार्थ की गूंज है। साथ ही, इसमें यह भी स्पष्ट किया गया है कि समाज के विभिन्न वर्ग—प्रशासनिक अधिकारी, विद्यार्थी, परिवार और आलोचक—सभी किसी-न-किसी रूप में शिक्षा प्रणाली को प्रभावित करते हैं। शिक्षक के संघर्ष के माध्यम से यह बात सामने आती है कि शिक्षा व्यवस्था को सुधारने के लिए केवल नीतियाँ पर्याप्त नहीं, बल्कि संवेदनशील दृष्टिकोण और शिक्षक के प्रति सम्मान का भाव भी आवश्यक है।

नाटक का समाज पर प्रभाव यह है कि यह हमें आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है। यह दर्शाता है कि यदि समाज शिक्षक की पीड़ा और संघर्षों को अनसुना करता रहा, तो आने वाली पीढ़ियों का भविष्य संकट में पड़ सकता है। शिक्षक के चरित्र को देखकर दर्शक यह सोचने पर मजबूर होते हैं कि शिक्षा केवल रोजगार का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक विकास की आधारशिला है। यदि शिक्षक स्वयं असुरक्षित और उपेक्षित रहेंगे, तो वे किस प्रकार बच्चों और युवाओं को समाज के लिए उपयोगी नागरिक बना पाएंगे। इस प्रकार नाटक हमें शिक्षकों की गरिमा और भूमिका के पुनर्मूल्यांकन की ओर अग्रसर करता है।

इस नाटक की सबसे बड़ी सामाजिक प्रासंगिकता यह है कि यह दर्शकों के भीतर एक गहरी संवेदना उत्पन्न करता है। दर्शक न केवल शिक्षक के साथ सहानुभूति रखते हैं, बल्कि यह महसूस करते हैं कि शिक्षक की समस्याओं का समाधान करना समाज की साझा जिम्मेदारी है। इसमें यह संदेश भी निहित है कि यदि शिक्षा को वास्तव में सार्थक बनाना है, तो शिक्षक की गरिमा, उनकी आर्थिक सुरक्षा और उनके नैतिक अधिकारों की रक्षा करना अनिवार्य है। इस दृष्टि से नाटक केवल साहित्यिक या नाट्य कृति नहीं, बल्कि एक सामाजिक दस्तावेज बन जाता है, जो हमें चेतावनी देता है और भविष्य के लिए मार्गदर्शन भी करता है।

9.5 शैली और कथानक संबंधी विशेषताएँ

नाटक अध्ययन के दौरान शैलीगत और कथानक संबंधी विशेषताओं का अध्ययन करना कई कारणों से आवश्यक है, क्योंकि यह न केवल नाटक की संरचना को समझने में सहायता करता है, बल्कि इसके सामाजिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक पहलुओं की गहराई को उजागर भी करता है। नाटक की प्रभावशीलता को समझने के लिए शैलीगत तत्व जैसे संवाद, प्रतीकात्मकता, यथार्थवाद आदि यह निर्धारित करते हैं कि नाटक किस प्रकार दर्शकों या पाठकों पर प्रभाव डालता है। शैलीगत के साथ-साथ कथानक की विशेषताएँ यह स्पष्ट करती हैं कि कहानी किस दिशा में बढ़ती है और कौन-कौन से मोड़ दर्शकों की भावनाओं को प्रभावित करते हैं। इसलिए शैली और कथानक का अध्ययन करना महत्वपूर्ण हो जाता है। विषय-वस्तु की गहराई को समझने के लिए भी इन तत्वों का अध्ययन करना भी आवश्यक हो जाता है। नाटक की शैली और कथानक यह दर्शाते हैं कि लेखक नाटक के माध्यम से किन मूल्यों और विचारों को प्रस्तुत करना चाहता है। उदाहरण स्वरूप,'एक और द्रोणाचार्य' में शैली के माध्यम से शिक्षा और सत्ता के गठजोड़ की आलोचना को प्रभावशाली रूप से उभारा गया है। पाठकों और दर्शकों के अनुभव को समृद्ध करने हेतु यदि कोई नाटक केवल घटनाओं की प्रस्तुति तक सीमित रहे, तो वह साधारण कथा बन जाता है, परंतु जब उसमें शैलीगत तत्व जोड़े जाते हैं, तो वह एक गहन सांस्कृतिक और दार्शनिक अनुभव प्रदान करता है। यह तत्व साहित्यिक अध्ययन और आलोचना में सहायक होते हैं। साहित्य का अध्ययन करने वाले छात्रों, शोधकर्ताओं और समीक्षकों के लिए शैलीगत और कथानक विशेषताओं की जानकारी अत्यधिक उपयोगी होती है। इससे वह नाटक की संरचना और उसके ऐतिहासिक एवं सामाजिक संदर्भ को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं। लेखक की रचनात्मकता और संदेश की व्याख्या करना आवश्यक माना जाता है। नाटक के शैलीगत तत्व लेखक की रचनात्मकता को

दर्शाते हैं, जबकि कथानक यह स्पष्ट करता है कि लेखक अपनी बात किस तरह पाठकों तक पहुँचाना चाहता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी नाटक में संवाद बहुत तीव्र और प्रतीकात्मक हैं, तो यह दर्शाता है कि लेखक सामाजिक विडंबनाओं को उभारना चाहता है। इसके साथ समाज और समय का दर्पण का भी प्रदर्शन करता है। दोनों तत्व शैली और कथानक के माध्यम से नाटक एक निश्चित कालखंड, समाज और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को नाटक के माध्यम से प्रतिबिंबित करता है। इससे हम आप यह समझ सकते हैं कि उस समय की परिस्थितियाँ किस प्रकार की थीं और उनका समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है। शैली और कथानक का अध्ययन नाटक को केवल मनोरंजन की दृष्टि से देखने के अलावा एक बौद्धिक और दार्शनिक अनुभवके रूप में समझने में सहायता करता है। इससे न केवल नाटक के मूल विचारों की गहराई स्पष्ट होती है, बल्कि उसके सामाजिक और साहित्यिक महत्व को भी उजागर किया जा सकता है।

''**एक और द्रोणाचार्य**'' नाटक हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण रचना है, जिसकी शैलीगत और कथानक संबंधी विशेषताओं को समझने में नाटक से संबंधी सभी तत्वों को समझने में सहायता होगी। यह नाटक महाभारत के प्रसिद्ध पात्र द्रोणाचार्य के संदर्भ में एक आधुनिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जिसमें समाज, राजनीति और नैतिकता से जुड़े जटिल प्रश्न उठाए गए हैं। नाटक की शैलीगत विशेषताओं को देखा जाये तो निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिन्दु उभर कर आते हैं:-

- **प्रतीकात्मकता**-इसके अंतर्गत पात्रों और घटनाओं के माध्यम से गहरे अर्थ प्रकट किए जाते हैं। इस नाटक में पात्रों और घटनाओं के माध्यम से व्यापक सामाजिक और नैतिक मुद्दों को प्रतीकात्मक रूप में व्यक्त किया गया है। उदाहरणरूप में देखा जाए तो द्रोणाचार्य का चरित्र उस व्यवस्था का प्रतीक है जिसमें ज्ञान और आदर्शवाद को सत्ता द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इसी तरह, अर्जुन का पात्र नई पीढ़ी के महत्वाकांक्षी लोगों का प्रतिनिधित्व करता है।
- **भावनात्मक और नाटकीय तत्वों की सघनता**-नाटक में पात्र योजना अर्थात चरित्रों के आंतरिक संघर्ष और बाहरी परिस्थितियों का सजीव चित्रण किया गया है। नाटक में चरित्रों के माध्यम से भावनाओं का उतार-चढ़ाव स्पष्ट रूप से दिखता है, जिससे दर्शक मानसिक रूप से प्रभावित होते हैं। उदाहरण देखा जाए तोजब द्रोणाचार्य अपने आदर्शों को ताक पर रख सत्ता से समझौता करते हैं, तो उनका मानसिक द्वंद बेहद प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। यह दृश्य दर्शकों के भीतर एक नैतिक संकट उत्पन्न करता है।
- **सामाजिक और राजनीतिक आलोचना**- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षा, सत्ता और नैतिकता के गठजोड़ पर गहन आलोचना की गई

है। उदाहरण के रूप में देखा जाए जब नाटक में शिक्षा को एक व्यापार की तरह पेश किया जाता है, जहाँ ज्ञान की जगह शक्ति और राजनीति हावी हो जाती है, तो यह समाज की उस विडंबना को दर्शाता है जहाँ मूल्यों की अवहेलना हो रही है।

➢ **मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक गहराई का प्रदर्शन**– शंकर शेष ने अपने नाटक में पात्रों के मानसिक द्वंद और दार्शनिक विचारों को गहराई से उभारा गया है। उदाहरण स्वरूप में द्रोणाचार्य के संघर्ष को देख सकते हैं ''क्या मैं सही कर रहा हूँ?'' यह प्रश्न न केवल उनके लिए बल्कि दर्शकों के लिए भी आत्ममंथन का कारण बनता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न–: 1. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षा प्रणाली की विफलता को किस प्रकार दर्शाया गया है?

प्रश्न–: 2. नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' में आर्थिक स्थिति को किस प्रकार दर्शाया गया है?

प्रश्न–: 3. अरविंद का चरित्र किस समस्या का प्रतीक है?

नाटक में कथानक संबंधी विशेषताएँ-

➢ **नैतिकता एवं मूल्यबोध**–नाटक गुरु–शिष्य संबंधों और आदर्शवाद व यथार्थवाद की टकराहट को दिखाता है। नाटक गुरु–शिष्य संबंधों और आदर्शवाद बनाम यथार्थवाद की टकराहट को दर्शाता है। उदाहरण देखें द्रोणाचार्य, जो एक आदर्श शिक्षक होने का दावा करते हैं, सत्ता के दबाव में अपने मूल्यों को बदलने के लिए मजबूर हो जाते हैं। उनके इस द्वंद को नाटक में अत्यंत संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया गया है।

➢ **समाज की आलोचना**–इसमें सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियों पर तीखा प्रहार किया गया है। नाटक समाज की उन विडंबनाओं को उजागर करता है, जहाँ शिक्षा और सिद्धांतों को सत्ता के हितों के अनुरूप ढालने का प्रयास किया जाता है। इस संदर्भ में नाटक में एक क्षण आता है जब एक पात्र कहता है–''गुरु अब ज्ञान नहीं देते, वे सत्ता के आदेशों को पढ़ाते हैं।'' इस संवाद के माध्यम से समाज में शिक्षा की गिरती स्वतंत्रता को दर्शाया गया है।

➢ **राजनीतिक संदर्भ**–कथानक शिक्षा और सत्ता के बीच गहराते संबंधों को उजागर करता है। कथानक में शिक्षा और सत्ता के बीच गहरे संबंधों को उकेरा गया है। उदाहरण स्वरूप देखा जाए जब द्रोणाचार्य अपने शिष्य को सत्ता के अनुरूप कार्य करने का निर्देश देते हैं, तब यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा अब एक स्वतंत्र विचारधारा नहीं रही, परंतु सत्ता की आवश्यकताओं के अनुरूप ढल

गई है।

➢ **मनोवैज्ञानिक गहराई**– कथानक के माध्यम सेपात्रों के द्वंद और उनकी मानसिक स्थिति का सूक्ष्म चित्रण मिलता है। शंकर शेष ने नाटक में पात्रों के मानसिक संघर्ष को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। द्रोणाचार्य का यह आत्मसंघर्ष–''क्या मैं सही कर रहा हूँ?'' उन्हें भीतर तक कचोटता है।

➢ **शिक्षा और सत्ता का गठजोड़**– नाटक में यह दर्शाया है कि किस प्रकार शिक्षा व्यवस्था सत्ता के नियंत्रण में आ जाती है। उदाहरण स्वरूप जब द्रोणाचार्य उच्च पदों पर पहुँचने के लिए अपनी नैतिकता को तिलांजलि देते हैं, तो यह एक ऐसी व्यवस्था को दर्शाता है जिसमें ज्ञान, ईमानदारी और स्वतंत्रता से अधिक सत्ता का महत्व होता है।

➢ **संवादों की तीव्रता**– शंकर शेष ने 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक के संवाद अत्यंत सशक्त और प्रभावशालीरूप से प्रस्तुत किए हैं। एक पात्र जब कहता है ''गुरु अगर शिक्षा को व्यापार बना लें, तो शिष्य क्या खरीदेंगे—ज्ञान या अवसर।''



महत्वपूर्ण बिंदुः–

नाटककार के रूप में डॉ. शंकर शेष को राष्ट्रीय मंच पर लाने का श्रेय 'खजुराहों का शिल्पी' ने किया है। शंकर शेष ने अपने नाट्य साहित्य में महाभारतकालीन स्त्री–पुरुष पात्रों को लेते हुए आधुनिक रूप में प्रदर्शित किया है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न 4: नाटककार ने द्रोणाचार्य के जीवन प्रसंगों का प्रयोग क्यों किया?

प्रश्न 5: 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक समाज को क्या संदेश देता है?

प्रश्न 6: नाटक की सामाजिक प्रासंगिकता क्या है?



9.6 सारांश

सारांश स्वरूप इस इकाई में शंकर शेष के नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' की कथावस्तु से आप परिचित हुए है। एक विचारोत्तेजक नाटक है, जो शिक्षक जीवन की कठोर वास्तविकताओं को उजागर करता है। नाटक का केंद्रीय पात्र एक आदर्शवादी शिक्षक है, जो समाज, आर्थिक तंगी, प्रशासनिक उपेक्षा और

नैतिक संघर्षों से जूझता है। नाटक में दिखाया गया है कि शिक्षा केवल ज्ञान का स्रोत नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक दबावों से प्रभावित एक जटिल व्यवस्था है। शिक्षक अपने मूल्यों को बनाए रखने का प्रयास करता है, लेकिन अंततः समाज की वास्तविकताओं से समझौता करने के लिए मजबूर होता है।

इस इकाई के माध्यम से आप समाज पर पड़े प्रभाव को समझ सकते हैं, साथ ही शैलीगत और कथानक विशेषताओं को विस्तार से समझ पाये हैं। यह नाटक न केवल शिक्षकों की व्यथा, बल्कि समाज और व्यवस्था के असंवेदनशील दृष्टिकोण को भी सामने लाता है।

9.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तरः- 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षा प्रणाली की विफलता को शिक्षकों की कठिन परिस्थितियों और संघर्षों का चित्रण करके प्रस्तुत किया है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तरः- शंकर शेष ने 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षक की आर्थिक स्थिति को आर्थिक तंगी और तनाव में दर्शाया है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तरः- अरविंद का चरित्र संघर्षरत शिक्षक का प्रतीक है, जो आर्थिक कठिनाइयों, पारिवारिक दबाव और प्रशासनिक उपेक्षा से जूझ रहा है। विस्तार से जानने के लिए इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तरः- द्रोणाचार्य के जीवन प्रसंगों का प्रयोग आधुनिक शिक्षा व्यवस्था की विसंगतियों और सत्ता के दबावों को प्रतीकात्मक रूप में दिखाने के लिए किया गया है। अधिक जानकारी के लिए उपर्युक्त इकाई का अवलोकन करें।

प्रश्न 5 का उत्तरः- यह नाटक समाज को बताता है कि शिक्षक केवल ज्ञानदाता नहीं, बल्कि सामाजिक सम्मान और सहानुभूति का पात्र है, जिसे समाज ने उपेक्षित कर दिया है। विस्तृत अध्ययन हेतु ऊपर दी गई इकाई का संदर्भ ग्रहण करें।

प्रश्न 6 का उत्तरः- नाटक वर्तमान शिक्षा प्रणाली की खामियों, शिक्षकों की स्थिति और सामाजिक विडंबनाओं को उजागर कर आज भी प्रासंगिक बना हुआ है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

9.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. माथुर, सुरेन्द्र. (2010). आधुनिक हिन्दी साहित्य: विश्लेषण और

प्रकर्ष. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
2. उपाध्याय, दिनेश नारायण. (2008). हमारी नाट्य परंपरा. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
3. नगेन्द्र, डॉ. (2005). आधुनिक हिंदी नाटक. आगरा: भारतीय विद्या संस्थान।
4. सिंह, नामवर. (2012). हिंदी नाटक और समाज. वाराणसी: ज्ञानमंडल लिमिटेड।
5. शर्मा, रामविलास. (2007). साहित्य और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
6. शुक्ल, रामचंद्र. (2009). हिंदी साहित्य का इतिहास. प्रयागराज: भारतीय विद्या भवन।
7. मिश्र, सुधीर. (2014). आधुनिक हिंदी रंगमंच: स्वरूप और सरोकार. भोपाल: मधुर प्रकाशन।
8. त्रिपाठी, राघवेंद्र. (2016). शंकर शेष के नाटक: एक आलोचनात्मक अध्ययन. दिल्ली: साहित्य अकादमी।
9. वर्मा, गोविंद प्रसाद. (2018). हिंदी नाटक की परंपरा और प्रयोग. जयपुर: आर्य पब्लिशिंग।
10. जोशी, रघुवीर. (2020). आधुनिक शिक्षा और साहित्यिक विमर्श. लखनऊ: हिंदी साहित्य प्रकाशन।

9.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. द्रोणाचार्य के शिक्षण कौशल विशेषताओं पर दृष्टि डालिए?
2. नाटक में शैलीगत विशेषताओं का क्या महत्व है?
3. लीला और कृपी स्त्री पात्रों का चरित्र-चित्रण व्यक्त कीजिए
4. शंकर शेष किस प्रकार के साहित्य के लिए प्रसिद्ध है? कौन सा नाटक शिक्षक जीवन की कठिनाईयों को दर्शाता है?
5. नाटक में प्रशासनिक अधिकारी की भूमिका किस प्रकार की है?
6. समाज के प्रतिनिधि पात्रों का व्यवहार शिक्षक के प्रति क्या दर्शाता है?
7. नाटककार ने पौराणिक और आधुनिक कथानक को कैसे जोड़ा है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. एक और द्रोणाचार्य' नाटक के शैलीगत और अथानक संबंधी विशेषताओं को लिखिए।

2. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है?
3. नाटक 'एक और द्रोणाचार्य' की विषयवस्तु की समीक्षा कीजिए ।
4. नाटक में अरविंद के पारिवारिक संघर्षों का विश्लेषण कीजिए।
5. द्रोणाचार्य और प्रोफेसर अरविंद के बीच समानताओं व भिन्नताओं पर चर्चा कीजिए।
6. 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक में शिक्षा और सत्ता के गठजोड़ की आलोचना कीजिए।

******

इकाई- 10 : आषाढ़ का एक दिन (भाग-1)

कथावस्तु और इसकी समीक्षा

10.1 उद्देश्य
10.2 प्रस्तावना
10.3 'आषाढ़ का एक दिन' का कथानक
10.4 मुख्य पात्रों का चरित्र-चित्रण
10.5 सारांश
10.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
10.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें
10.8 अभ्यास प्रश्न

10.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई के अंतर्गत आप मोहन राकेश के साहित्यिक योगदान और 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की कथावस्तु एवं उसकी समीक्षा को समझ सकेंगे।
- इस इकाई से आपका कालिदास के निजी, सामाजिक तथा भावनात्मक जीवन के माध्यम से कला और जीवन के अंतद्वंद को विश्लेषित करने में सक्षम होंगे।
- नाटक के अध्ययन से आप आधुनिक हिंदी नाट्य परंपरा, पात्रों के मानसिक संघर्ष और कलाकार की सामाजिक भूमिका को समझने का दृष्टिकोण विकसित कर सकेंगे।
- नाटक के माध्यम से कला और जीवन के अंत:संबंधों का तुलनात्मक और विवेचनात्मक विश्लेषण कर पाएंगे।
- कालिदास और मल्लिका के चरित्रों के माध्यम से रचनात्मकता, सामाजिक अपेक्षा तथा व्यक्तिगत संतसि के कारकों का मूल्यांकन कर सकते है।
- नाट्यशैली (प्रतीकात्मकता, यथार्थवाद, संवादशिल्प) के सैद्धान्तिक आयामों को पहचानकर आलोचनात्मक दृष्टि विकसित करेंगे।
- नाटक के ऐतिहासिक संदर्भ तथा आधुनिक प्रासंगिकता के आधार पर साहित्यिक और रंगमंचीय संभावनाओं का आकलन कर सकेंगे।

10.2 प्रस्तावना

''आषाढ़ का एक दिन'' हिंदी नाट्य साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मोहन राकेश द्वारा रचित यह नाटक कालिदास के जीवन के आधार पर लिखा गया है, जिसमें कला और जीवन के संघर्ष को मार्मिक रूप से प्रस्तुत किया गया है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक प्रेम, त्याग और सामाजिक अपेक्षाओं के द्वंद को दर्शाता है, जिससे पाठक या दर्शक गहराई से सोचने पर मजबूर हो जाते हैं। इस नाटक की शैलीगत विशेषता यथार्थवादी है, जिससे इसके पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई और संवादों की प्रभावशीलता स्पष्ट होती है। यह नाटक केवल एक ऐतिहासिक संदर्भ नहीं, साथ ही आधुनिक जीवन के संघर्षों को भी दर्शाता है। साहित्य अध्ययनकर्ताओं और शोधकर्ताओं के लिए यह नाटक विशेष रूप से अध्ययन योग्य है।

10.3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की कथावस्तु

'आषाढ़ का एक दिन' नाटककार मोहन राकेश कृत प्रसिद्ध नाटक है जिसके नायक संस्कृत के महान कवि कालिदास हैं। कथानक तत्व किसी भी नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्व है जिसको आधार बना कर नाटककार अपना मंतव्य पाठकों तक संप्रेषित करता है। इस इकाई के अध्ययन से विद्यार्थियों को आलोच्य नाटक का कथानक और उसके विन्यास को समझने में सहायता प्राप्त होगी। नाटककार अपनी रचना के माध्यम से जो कुछ भी कहना चाहता है वह उसे या तो किसी कथा का आश्रय लेकर कहता है। साथ ही किसी जीवन स्थिति को चुनकर उसके प्रभाव के माध्यम से श्रोता के सम्मुख अभिव्यक्त करता है। यह जीवन-स्थितियाँ वर्तमान जीवन,समाज और इतिहास के किसी प्रसंग से भीसे संबंधित भी हो सकती है। कथा कैसी भी हो वर्तमान की या अतीत की, महत्त्वपूर्ण यह है कि वह उसे प्रस्तुत किस प्रकार करता है और उसका दृष्टिकोण क्या है। मोहन राकेश कृत 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की कथा अतीताश्रित है। नाटक का नायक कालिदास है-वह कालिदास जो भारतीय साहित्य के उच्चतम शिखर माने जाते हैं। कालिदास, कालिदास कैसे बने इस संबंध में इतिहास लगभग मौन है, इस नाटक में इस तथ्य को सामने रखा गया है। नाटककार ने यत्र-तत्र बिखरे सूत्रों को जोड़कर और कुछ अपने अनुमान लगाकर प्रस्तुत नाटक का कथानक बनाया है। आषाढ़ का एक दिन नाटक की कथा 3अंकों में विभाजित की गई हैं। इस नाटक के प्रमुख पात्रों में कालिदास, मल्लिका, अम्बिका, विलोम तथा प्रियंगुमंजरी आदि हैं।

नाटक के प्रथम अंक के आरंभ में छाज से धान फटकती हुई अम्बिका

दिखाई देती है। तभी वर्षा में भीगी हुई मल्लिका का प्रवेश होता है। कालिदास के साथ मल्लिका ने आषाढ़ की पहली बरसात में भीगने का आनंद उठाया है, इसलिए वह अपने इस सौभाग्य पर मुग्ध है। परंतु अम्बिका को मल्लिका का यह आचरण अनुचित लगता है। वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर। अम्बिका कालिदास को नापसंद करती है क्योंकि वह भावनाओं में मग्न रहने वाला एक अव्यावहारिक व्यक्ति है उससे यह आशा करना व्यर्थ है कि वह मल्लिका को किसी प्रकार का सांसारिक सुख दे पायेगा भी या नहीं। सामाजिक स्तर पर अम्बिका उन दोनों से इसलिए क्रुद्ध है क्योंकि प्रेमी युगल का विवाह से पूर्व इस तरह घूमना-फिरना लोकापवाद का कारण हो सकता है। उन दोनों के वाद-विवाद के बीच ही कालिदास भी आते है। कालिदास को किसी राजपुरुष के बाण से आहत हिरण शावक के प्राण-रक्षा की चिंता है। घायल हिरण को खोजते हुए राजपुरुष दंतुल भी वहाँ पहुँच जाते हैं। वहाँ कालिदास और दन्तुल में वाद-विवाद होता है। राजपुरुष दन्तुल अपने राजपुरुष होने के दर्प में चूर है परंतु जब उसे ज्ञात होता है कि जिस व्यक्ति से वह तर्क-वितर्क कर रहा था वह प्रसिद्ध कवि कालिदास हैं तब उसका स्वर और भावभंगिमा तुरंत बदल जाती है। वह उनसे क्षमा माँगने को तैयार है क्योंकि सम्राट चंद्रगुप्त के आदेश पर वह उन्हीं को लेने तो वहाँ आया था। इस सूचना से ही कालिदास को राजकीय सम्मान का अधिकारी समझते हुए मल्लिका प्रसन्न हो जाती है, परंतु अम्बिका पर मानो इन सबका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता है। अम्बिका और मल्लिका एक दूसरे को अपना दृष्टिकोण समझाने का प्रयास करती है, तभी मातुल का वहां आगमन होता है। कालिदास की उदासीनता से वह नाराज है। निक्षेप कालिदास की मन:स्थिति को समझता है परंतु इस अवसर को खोना नहीं चाहता है। इसलिए वह मल्लिका से अनुरोध करता है कि वह कालिदास को समझाये। प्रथम अंक में ही विलोम का भी प्रवेश होता है। वह मल्लिका से प्रेम करता है। वह यह भी जानता है कि मल्लिका कालिदास से प्रेम करती है और उसके जीवन में विलोम का कोई स्थान नहीं है। वस्तुत: ऐसा स्वाभाविक है क्योंकि विलोम का व्यक्तित्व कालिदास के व्यक्तित्व से नितान्त विपरीत है। कालिदास के इस सम्मान से वह दु:खी लगता है जिसकी अभिव्यक्ति उसके व्यंग्यपूर्ण कटाक्षों से होती है। वह कालिदास से ईर्ष्या-भाव रखता है। कालिदास को वह अपने प्रतिद्वंदी की भाँति समझता है और उसे लगता है कि इस प्रतिद्वंदिता में कालिदास का स्थान ऊपर हो गया है। वह यह जानता है कि कालिदास के चले जाने से मल्लिका दु:खी भी हो जायेगी। विलोम को आशंका है कि उज्जयिनी का नागरिक वातावरण, राज्य सत्ता की सुख-सुविधाएँ, आमोद-प्रमोद में कालिदास जैसा व्यक्तित्व कहीं खो न जाये, उसकी रचनाशीलता को कोई क्षति न पहुँचे,

विलोम के मन में जो शंका है वही शंका कालिदास के मन में भी है। उज्जयिनी जाने और न जाने की दुविधा का कारण यही शंका है। लेकिन मल्लिका के मन में इस प्रकार की कोई शंका नहीं। मल्लिका को कालिदास की प्रतिभा पर विश्वास है। वह अपने स्वार्थ हेतु यहाँ रोक कर वह उसे स्थानीय कवि नहीं बने रहने देना चाहती। वह चाहती हैं कि उज्जयिनी जाकर कालिदास के अनुभवों में विस्तार हो, राजकीय सुख-सुविधाओं के बीच अपने अभावों को भूल कर साहित्य-रचना में वह लीन हो जाए, उसकी कीर्ति दूर-दूर तक फैले भले ही इसके लिए उसे कालिदास का वियोग क्यों न सहन करना पड़े इसी अभिलाषा से वह कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए मना ही लेती है।

दूसरे अंक में कालिदास के उज्जयनी जाने से कुछ वर्षों बाद का वर्णन है। घर की साज-सज्जा में आये परिवर्तन और अव्यवस्था से इस अंतर के संकेत मिल जाते हैं। अम्बिका अस्वस्थ है और मल्लिका को आर्थिक अभावों को पूर्ण करने के लिए काम करना पड़ रहा है। मल्लिका और निक्षेप के वार्तालाप से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह आज भी कालिदास से उसी प्रकार जुड़ी है जैसे पहले थी। राजधानी से आने जाने वाले व्यवसायियों के माध्यम से मल्लिका कालिदास की रचनाओं को पढ़ती रही है। मल्लिका को यह भी संतोष है कि उसके स्नेह और आग्रह के कारण ही कालिदास राजधानी जाने के लिए तैयार हुए थे। निक्षेप से बातचीत से ही इस बात की भी सूचना मल्लिका को दी गयी है कि कालिदास अब पहले वाले कालिदास नहीं रहे गये हैं। वहाँ के वातावरण के अनुरूप अब वह सुरा और सुंदरी में मग्न रहने लगे हैं, गुप्त साम्राज्य की विदुषी राजकुमारी प्रियंगुमंजरी से उन्होंने विवाह कर लिया है, अब काश्मीर का शासन भार भी वह सँभालने वाले हैं और इसी यात्रा के बीच कालिदास अपने इस ग्राम प्रांतर में भी कुछ समय के लिये रुकेंगे, उनका नया नाम अब मातृगुप्त है, 'ऋतु संहार' के बाद वह और भी अनेक काव्यों-नाटकों की रचना कर चुके हैं, आज सारा गाँव उनके स्वागत की तैयारी कर रहा है। उसी समय राजसी वेशभूषा में एक घुड़सवार के दर्शन निक्षेप को होते हैं। उसे यह विश्वास है कि वह राजपुरुष और कोई नहीं बल्कि स्वयं कालिदास ही हैं। यह सूचना मल्लिका को अंदर तक विचलित कर देती है। तभी मल्लिका के घर में रंगिणी-संगिणी का प्रवेश होता है। दोनों नागरिकाएँ कालिदास के परिवेश पर शोध करने में इच्छुक हैं परंतु उनका काम करने का ढंग अत्यंत हास्यास्पद है। वह मल्लिका से उस प्रदेश की वनस्पतियों, पशु-पक्षियों, दैनिक जीवन मे उपयोग में आने वाली वस्तुओं और विशिष्ट अभिव्यक्तियों के विषय में जानना चाहती हैं। लेकिन कुछ भी असाधारण न दिखाई देने से निराश होकर वापस चली जाती है। उनके वहां से जाते ही अनुस्वार और अनुनासिक नामक दो राज-कर्मचारी आते हैं।

कालिदास की पत्नी राजपुत्री प्रियंगुमंजरी के आगमन की तैयारी में वह मल्लिका के घर की व्यवस्था में कुछ ऐसा परिवर्तन करना चाहते हैं जो राजकुमारी के गौरव के अनुरूप हो और सुविधाजनक भी हो। परन्तु वास्तव में वह व्यवस्था परिवर्तन का नाटक भर करते हैं और बिना किसी बदलाव के वहाँ से चले जाते हैं। फिर मातुल के साथ प्रियगुमंजरी का वहां आगमन होता है। वह यह जानती है कि मल्लिका कालिदास की प्रेयसी है और कालिदास के मन में उसके लिए अथाह स्नेह और सम्मान आज भी है। उसे यह ज्ञात है कि कालिदास की समस्त रचनाओं की प्रेरणा स्त्रोत मल्लिका और यह परिवेश ही है। इसके साथ ही स्त्री-सुलभ जिज्ञासा और ईर्ष्या के फलस्वरूप वह इस प्रदेश में आने और मल्लिका को देखने के लोभ को साकार कर पाती है। उसे यह आश्चर्य होता है कि राजधानी से इतनी दूर होने पर भी मल्लिका ने कालिदास की सभी रचनाएँ प्राप्त कर ली और पढ़ भी ली हैं। उज्जयनी में अब कालिदास को मातृगुप्त के नाम से जाना जाता है, अतः मल्लिका का 'कालिदास' से संबोधन उसे आपत्तिजनक लगता है। वह मल्लिका के घर को सजना चाहती है और प्रियंगुमंजरी की इच्छा है कि मल्लिका किसी राजकर्मचारी से विवाह कर ले, उसके साथ उसकी संगिनी बन कर रहे। प्रियंगुमंजरी वहाँ की वनस्पतियों, पत्थरों, कुछ पशु-पक्षियों और कुछ गरीब बच्चों को अपने साथ ले जाना चाहती है जिससे कालिदास को राजसुख में रहते हुए भी कभी अपने परिवेश का वियोग न महसूस हो। स्वाभिमानी मल्लिका घर के परिसंस्कार और विवाह के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है। प्रियगुमंजरी अचंभित सी होकर वहाँ से चली जाती है। इसके पश्चात विलोम का आगमन होता है। इस सारे घटनाचक्र से वह परिचित है, इस आशा से वहाँ आता है कि कालिदास यदि वहाँ आये तो वह कालिदास की वास्तविकता, उसके व्यक्तित्व में आये परिवर्तन को सबके सामने उजागर कर देगा। यद्यपि वह यह जानता है कि कालिदास वहाँ नहीं आयेगा। कालिदास के मल्लिका से बिना मिले चले जाने से अम्बिका और विलोम- दोनों की ही आशंकाएँ सत्य सिद्ध होती हैं।

तीसरे अंक में कुछ और वर्षों पश्चात की घटनाएँ हैं। इस बार अम्बिका दिखाई नहीं देती। वहाँ पालने में लेटा एक शिशु जो मल्लिका की संतान है। अस्त-व्यस्त और जीर्ण-शीर्ण घर की स्थिति मल्लिका के दुःखों की कहानी व्यक्त कर रहा है। इस बार पुनः आषाढ़ का पहला दिन है पहले की भाँति इस बार भी मूसलाधार वर्षा हो रही है। लेकिन इस बार उस वर्षा का आनंद उठाने की स्थिति में मल्लिका नहीं है। उसी समय मातुल भीगता हुआ आता है। जिस वैभव और सत्ता-सुख की लालसा से वह उज्जयिनी गया था, वह लालसा तो पूरी हुई किंतु उस सबसे मातुल का भी मोह भंग हुआ है। इसके

साथ चिकने शिलाखंडों से बने प्रासाद, आगे-पीछे चलते प्रतिहारी, कालिदास का संबंधी होने के नाते अकारण मिलने वाला सम्मान शुरू में तो बहुत आकृष्ट करता है लेकिन धीरे-धीरे इस सबसे वह ऊबने लगता है। मातुल सूचना देता है कि कालिदास ने काश्मीर के शासन-भार को त्याग कर संन्यासग्रहण कर लिया है। मातुल के चले जाने के बाद इसी अंक में कालिदास का प्रवेश होता है। नाटक के प्रथम अंक में जिस तेजस्वी कालिदास के दर्शन होते हैं व दूसरे अंक में जिसकी प्रतिभा, योग्यता और यश की दूर-दूर तक चर्चा है, तीसरे अंक में इसके विपरीत भग्नहृदय-विवश कालिदास दिखाई देते हैं। इस अंक में कालिदास का विस्तृत आत्मवक्तव्य है। वह कहता है कि ''यहाँ से जाने के बाद वह सुख-सुविधाओं आमोद-प्रमोद, साहित्य-सुजन में व्यस्त भले ही रहा हो परंतु कभी भी अपने ग्रामप्रांतर और मल्लिका से अलग नहीं हुआ।'' पुराने अनुभवों को वह बार-बार अपनी कृति में अनेक रूपों से पुनः सृजित करता रहा है। जिन्होंने सदा उसका तिरस्कार और उपहास किया था उनसे प्रतिशोध लेने के लिए ही उसने काश्मीर के शासन का दायित्व वहन किया। अब वह इस कृत्रिम जीवन से पूर्णत:थक चुका है। शासक मातृगुप्त हृदय से संन्यास लेकर वह पुनः कालिदास के हृदय में लौट आया है। अब वह यहीं इस पर्वत प्रदेश में रहना चाहता है, मल्लिका के साथ अपने जीवन को दोबारा प्रारम्भ करना चाहता है। मल्लिका और कालिदास की बातचीत के बीच-बीच में दरवाजे पर दस्तक होती है परंतु मल्लिका दरवाजा नहीं खोलती। इस वक्तव्य के दौरान कालिदास को एक बार भी यह विचार नहीं आता कि उसके उज्जयिनी जाने और वहाँ से वापिस आने की दीर्घ अवधि में मल्लिका को किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा। तभी अंदर से बच्चे के रोने की आवाज और विलोम के प्रवेश से उसे वास्तविक स्थिति का बोध होता है। यह देखकर उसे यह अनुभव होता है कि इच्छा और समय के द्वंद में समय अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ है और समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता है। वह वहाँ से पर्वतों पर चला जाता है और यहीं नाटक समाप्त हो जाता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के लेखक कौन है? नाटक का मुख्य विषय क्या है?

प्रश्न-: 2. नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिंदी नाट्य साहित्य में क्यों महत्वपूर्ण माना जाता है?

प्रश्न-: 3. मातुल का चरित्र नाटक में क्या संकेत देता है?

10.4 मुख्य पात्रों का चरित्र-चित्रण

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक हिंदी में लिखा गया प्रथम आधुनिक नाटक है, जिसमें पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई का चित्रण किया गया है। नाटक के पात्रों का अध्ययन-विश्लेषण विभिन्न आधारों पर किया जाता है- मुख्य पात्र और गौण पात्र। मुख्य पात्र वह हैं जो नाटक के नायक या नायिका होते हैं। संपूर्ण कथानक का केन्द्र बिंदु यही पात्र होते हैं। गौण पात्रों की उपस्थिती कथानक में मुख्य पात्रों की अपेक्षा कम समय के लिए होती हैं। यह मुख्य कथा के विस्तार में सहायता प्रदान करते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' के मुख्य पात्रों में कालिदास और मल्लिका हैं और शेष सभी गौण या सहायक पात्र हैं। पात्रों के वर्गीकरण में प्रतिनिधि पात्र और सामान्य पात्र एक और वर्गिकरण का आधार माना जा सकता है। नाटक में प्रतिनिधि पात्र विशेष वर्ग, वर्ण, समुदाय अथवा किसी विचारधारा विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं जबकि सामान्य पात्र अपनी वैयक्तिक विशेषताओं से संगठित होते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में सभी पात्र किसी न किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। नायक कालिदास आधुनिक रचनाकारों का प्रतिनिधि है, जिन्हें अपनी प्रतिभा के विकास के लिए, अपनी पहचान बनाने के लिए राज्याश्रय लेना पड़ता है। कलाकार और राजनीति के चरित्रगत अंतर के कारण या तो कालिदास को समझौतों का या अपनी दुनिया में पुन:लौट आने का मार्ग चुनना पड़ता है। परंतु तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। वे न तो घर के रहते हैं न घाट के।

पात्रों के वर्गीकरण का एक अन्य आधार भी हो सकता है उनके चरित्र की स्थिरता अथवा गतिशीलता। जो पात्र अपनी कथनी और करनी में आरंभ से लेकर अंत तक एक ही प्रकार दिखाई देता है वह स्थिर पात्र कहलाता है। लेकिन जिनकी जीवन दृष्टि, आचरण में परिवर्तन होता रहता है वह गतिशील पात्र कहलाते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' में सभी पात्र स्थिर पात्रों की श्रेणी में आते हैं गतिशील पात्र में मात्र मातुल है। पात्र मातुल आरंभ से ही अत्यंत अवसरवादी, स्वार्थी और चाटुकार रूप में दिखाई देता है। अपनी इस मनोवृत्ति के कारण वह कालिदास को उज्जयिनी जाने के लिए बाध्य करता है। स्वयं भी कालिदास के साथ राजधानी चला जाता है। अपने स्थान को छोड़ने के सपने देखते हुए दिन-रात पशुओं की देखभाल करने वाले मातुल को आज उनकी सुरक्षा की कोई चिन्ता नहीं। वह प्रियंगुमंजरी के ग्राम में आने पर उसकी चाटुकारिता करता है। लेकिन अंतिम अंक में उसके परिवर्तित रूप के दर्शन होते हैं। मातुल को अब इस कृत्रिम जीवन से घृणा होने लगी है। कोई खास योग्यता न होते हुए भी कालिदास का संबंधी होने के कारणमात्र से उसे भी

जो सम्मान मिलता है, वह अब उसे बोझिल लगने लगा है। गाँव का सहज परिवेश ही अब उसे आकृष्ट करता है, इसलिए राजप्रसाद के फिसलन भरे चिकने फर्श पर से फिसल कर टाँग तुड़ाने के पश्चात वह वापिस लौट आया है। नायक कालिदास आरंभ से अंत तक भावुक, कल्पनाशील, उदात्त चरित्र के रूप में दिखाई देता है, जो मल्लिका से प्रेम करता है। हालाकि दूसरे अंक में मातृगुप्त के रूप में उसके गाँव में आने और मल्लिका से न मिलने की स्थिति में ऐसा प्रतीत होता है कि वह भी समय के साथ-साथ बदल गया है, उसने भी सत्ताधारी वर्ग के गुण-अवगुण, जीवन-पद्धति को अपना लिया है। तृतीय अंक में कालिदास के लंबे वक्तव्य से उसकी स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

कालिदास- कालिदास नाटक का केंद्रीय पात्र है, जो एक प्रतिभाशाली कवि और साहित्यकार के रूप में उभरते हैं। नाटक का कथानक कालिदास के इर्द-गर्द घूमता है, सभी पात्रों की चर्चा का केंद्र बिंदु भी यही पात्र है और संपूर्ण नाटक में उसकी उपस्थिति भी प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से देखी गयी है। कवि कालिदास और कश्मीर के शासक मातृगुप्त दोनों एक ही व्यक्ति थे जिसे जयशंकर प्रसाद ने 'चंद्रगुप्त' नाटक में चित्रित किया है। इस संदर्भ में डॉ. गिरीश रस्तोगी का यह कथन है कि ''साहित्य इतिहास के समय से नहीं बँधता न ही समय में इतिहास का वस्तिार करता है। युग से युग को अलग नहीं करता, कई-कई युगों को एक साथ जोड़ देता है। इस तरह इतिहास के 'आज और कल', 'कल और आज' नहीं रह जाते समय की असीमता में कुछ ऐसे जुड़े हुए क्षण बन जाते हैं जो जीवन को दिशा-संकेत देने की दृष्टि से अविभाज्य हैं। इस तरह साहित्य में इतिहास अपनी यथा तथ्य घटनाओं में व्यक्त नहीं होता, घटनाओं को जोड़ने वाली ऐसी कल्पनाओं में व्यक्त होता है जो अपने ही एक नये और अलग रूप में इतिहास का निर्माण करती है। इसलिए जो 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक और उसके नायक कालिदास को ऐतिहासिक नाटक और ऐतिहासिक व्यक्तित्व समझ कर ही देखेंगे वह उनकी एक नितान्त भ्रामक दृष्टि होगी और उनका नाटक की आत्मा तक, मौलिकता तक पहुँचना ही मुश्किल होगा।''

नाटक में अत्यंत कोमल भावुक प्रकृति के कालिदास के दर्शन होते हैं, जो राजपुरुष के बाण से घायल मृगशावक के प्राण बचाने के लिए तत्पर है। कालिदास घायल मृगशावक को आराम देने के लिए बिछौना पर सुलाना चाहता है, उसे गर्म-गर्म दूध पिलाना चाहता है और राजपुरुष दंतुल से वाद-विवाद करता है। यह जानते हए भी कि राजकर्मचारियों के अधिकार का क्षेत्र बहुत विस्तृत होता है- वह कहता है ''हम जिएँगे हरिणशावक! जिएँगे न? एक बाण से आहत होकर हम प्राण नहीं देंगे। हमारा शरीर कोमल है तो क्या हुआ? हम पीड़ा सह सकते हैं। एक बाण प्राण ले सकता है, तो उँगलियों का कोमल स्पर्श

प्राण दे भी सकता है। हमें नये प्राण मिल जाएँगे। हम कोमल आस्तरण पर विश्राम करेंगे। हमारे अंगों पर घृत का लेप होगा। कल फिर वनस्थली में धूमेंगे। कोमल दूर्वा खाएँगे।'' कालिदास संवेदनशील और भावुक व्यक्तित्व वाला नायक है। वह प्रकृति और कला का उपासक है। प्रेम में सच्चा परंतु महत्वाकांक्षी है। मोहन राकेश ने कालिदास के माध्यम से एक सृजन-प्रतिभासंपन्न साहित्यकार, एक आधुनिक मानव की मानसिकता, उसकी विवशता, द्वंद और पीड़ा को उभारा है।

मल्लिका-मल्लिका कालिदास की भांति आदर्शवादी,संवेदनशील और भावुक है। साथ ही वह आधुनिक नारी का भी प्रतिनिधित्व करती है, जो स्वतंत्र दृष्टि से सोचती है और जो सही समझती है, वही करती भी है। मल्लिका नाटक की नायिका है। नाटक में होने वाली प्रत्येक घटना का प्रभाव मल्लिका पर पड़ता है। कालिदास से प्रेम होने के कारण अम्बिका के क्रोध और लोकापवाद का सामना उसे करना पड़ता है, विलोम और मातुल के व्यंग्य बाणों को भी वही झेलती है। कालिदास के उज्जयिनी जाने, दूसरे अंक में वापिस न मिलने और तीसरे अंक में कालिदास के आकर फिर से चले जाने की घटनाओं का भी सीधा प्रभाव उसी पर पड़ता है। यहाँ तक कि प्रियगुमंजरी के अपमानजनक और हास्यास्पद प्रस्तावों को भी वह अत्यंत धैर्यपूर्वक सहन कर जाती है। मल्लिका कालिदास से प्रेम करती है और कालिदास उसे। उसके लिए भावना महत्वपूर्ण है, भौतिक सुख-सुविधाएँ नहीं। वह कहती है ''मैंने भावना में एक भावना का वरण किया है। मेरे लिए वह संबंध और सब संबंधों से बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है....'' मल्लिका का यह नि:स्वार्थ प्रेम ही उसे वह शक्ति देता है, जो अपने प्रेम को बाँधती नहीं। मल्लिका में समर्पण, आत्मविश्वास और दृढ़ता का भाव है। इसलिए कालिदास से प्रेम में उसे कोई अपराध बोध नहीं है। मल्लिका के माध्यम से मोहन राकेश ने आधुनिक युग की स्वतंत्र नारी को प्रस्तुत किया है, जो स्नेहशील, आत्मभिमानी और दृढ़ है। जो सोचने-समझने और स्वयं निर्णय लेने में सक्षम है। बल्कि कालिदास का चरित्र उसके सामने दुर्बल नज़र आने लगता है। डॉ. गिरीश रस्तोगी ने लिखा है ''जहाँ तक मल्लिका का संबंध है, उससे संबंधित सारे स्थल निर्विवाद हैं....। मतलब मल्लिका अपने सारे निर्णयों, उलझनों और भावों में बहुत स्पष्ट है। लगता है मल्लिका राकेश की आकांक्षा है केवल कल्पना नहीं, एक ऐसा नारी रूप जो रचनाकार के लिए प्रेरक हो, उसकी रचनात्मक शक्ति का विस्तार करने में सहायक हो, कही बाधक न बनता हो।''

अम्बिका-अम्बिका भी व्यावहारिक जीवन पद्धति की पक्षधर चरित्र है जो जानती है कि कोरी आदर्शवादिता और भावुकता क्षणिक आनंद भले ही दे दे, जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यावहारिक जीवन दृष्टि

ही अपनानी होगी। अम्बिका गाँव की एक वृद्धा स्त्री और मल्लिका की माँ है। परंतु इन दोनों का स्वभाव और मान्यताएँ परस्पर विपरीत हैं। वह मल्लिका की भाँति मात्र भावनाओं में विश्वास नहीं रखती। उसके लिये लोकाचार, भौतिक आवश्यकताएँ और सांसारिक सुख भी महत्वपूर्ण हैं इसीलिए वह अन्य सामान्य माँओ की भाँति मल्लिका का विवाह कर देना चाहती है जिससे वह लोकापवाद से बच सके और लौकिक दृष्टि से सामान्य जीवन बिता सके। यथार्थ से आँखे मूंदकर मात्र भावनाओं के सहारे जीवन नहीं जिया जा सकता। वह मल्लिका और कालिदास के संबंध को इसीलिए नापसंद करती है। कालिदास के उज्जयिनी जाने के भी पक्ष में भी वह नहीं है ''तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म प्रवंचना है।..... भावना में भावना का वरण किया है।..... मैं पूछती हूँ भावना में भावना का वरण क्या होता है? उससे जीवन की आवश्यकताएँ किस तरह पूरी होती हैं?'' मल्लिका की जीवन दृष्टि से असहमत होते हुए भी उसका ममत्व छिप नहीं पाता। हालाँकि उसकी प्रकट अभिव्यक्ति कहीं नहीं दिखाई देती। परंतु उसकी खीझ, गुस्सा, चिंता और अस्वस्थता सब उसी के लक्षण हैं। यह वात्सल्य मल्लिका- कालिदास-संबंधी प्रवाद को लेकर भी झलकता है, मल्लिका को छोड़कर कालिदास के राजधानी जाने को लेकर भी और प्रियंगुमंजरी के अशोभनीय प्रस्तावों पर भी। इसके मन में यह कल्पना नहीं है क्योंकि यह भावना के स्तर पर जीती है।'' अम्बिका आत्माभिमानिनी भी है। अन्य सामान्य माँओं की भाँति वह भी मल्लिका का घर बसा देखना चाहती है किन्तु अपमान का मूल्य देकर नहीं। अम्बिका को मानव-स्वभाव का भी अच्छा ज्ञान है। वह कालिदास के आत्मलीनता के स्वभाव को पहचान लेती है। अतं हम देखते हैं कि अम्बिका का चरित्र यद्यपि सहायक चरित्र के रूप में नियोजित हुआ है परंतु अपनी ममता और खरेपन के कारण वह पाठकों को प्रभावित किये बिना नहीं रहती।

प्रियंगुमंजरी- प्रियंगुमंजरी नाटक में सहायक पात्र है। वह उज्जयिनी के यशस्वी सम्राट की पुत्री और कालिदास की पत्नी है। उसकी विद्वत्ता चर्चित है ''उन्हें जीवन में असाधारण का ही साथ चाहिए था। ....सुना है राजहिता बहुत विदुषी हैं।'' मल्लिका उसे 'असाधारण' कह कर भले ही संतोष कर ले परंतु अपने आचरण से वह साधारण स्त्री ही प्रतीत होती है। उसने महान कवि कालिदास से विवाह अवश्य किया लेकिन उसके प्रेम की स्वामिनी वह नहीं बन पाई है। उसे भली-भाँति यह ज्ञात हो गया है कि कालिदास के हृदय में मल्लिका और अपने ग्रामीण परिवेश का जो स्थान है उसे वह कभी प्राप्त नहीं कर सकती है। उसके मन में स्त्री-सुलभ जिज्ञासा और ईर्ष्या भी है। मल्लिका और उस ग्राम प्रांत की ऐसी कौन सी विशेषता है जिसके सम्मुख राज्याधिकार

और वैभव-विलास भी व्यर्थ हैं। अपनी इस जिज्ञासा की शांति के लिए ही कुछ समय के लिये उस गाँव में आती है और विशेष रूप से मल्लिका से मिलती है। प्रियंगुमंजरी सत्ता की प्रतिनिधि पात्र है जो कृत्रिम जीवन जीती है। जिसे अपने दर्प के सम्मुख दूसरों की इच्छाओं-भावनाओं के सम्मान की कोई चिंता नहीं। नाटककार ने प्रियंगुमंजरी और मल्लिका दोनों पात्रों को आमने-सामने रखकर दोनों के चरित्रों के मूलभूत अंतर को स्पष्ट किया है।

विलोम-नाटक में विलोम कालिदास जैसे भावुक और आदर्शवादी रचनाकार के एकदम विपरीत व्यावहारिक दृष्टिकोण रखता है। नाटक में विलोम एक ऐसा पात्र है जो हास्य और व्यंग्य का समावेश करता है। वह कालिदास का मित्र और सहयोगी, जो उसकी आकांक्षाओं और संघर्षों को समझने वाला है। 'आषाढ़ का एक दिन' का नायक कालिदास है और विलोम प्रतिनायक है। उसका सीधा संबंध कालिदास और मल्लिका पात्र से है। कालिदास की भाँति वह भी मल्लिका से प्रेम करता है परंतु वह यह भी भली-भाँति जानता है कि मल्लिका के जीवन और हृदय में उसका कोई स्थान नहीं है। मल्लिका उसके प्रवेश को अनधिकार प्रवेश ही मानती है। साथ ही कालिदास भी उससे मिलकर कभी सहज नहीं हो पाता है। मल्लिका कहती है कि ''आर्यविलोम, मैं इस प्रकार की अनर्गलता क्षम्य नहीं समझती।'' औरकालिदास इस संदर्भ में कहता है ''तुम दूसरों के घर में हीन हीं, उनके जीवन में भी अनधिकार प्रवेश कर जाते हो।''

अन्य पात्रों में दंतुल उन राजपुरुषों की मनोवृत्ति को व्यक्त करता है जो राज्याधिकारों की आड़ में किसी के भी दुःख-सुख, मान-अपमान की चिंता नहीं करते। मातुल अवसरवादी, चापलूस लोगों का प्रतिनिधि है जो अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये सुख-सुविधाओं की प्राप्ति के लिए अपने घर-द्वार, अपने परिवेश को भी त्याग सकते हैं। उनके लिये कला, प्रतिभा आदि का मूल्य इतना ही है कि उसके माध्यम से सम्मान और सुख अर्जित किया जा सके। अनुस्वार-अनुनासिक उन राज-कर्मचारियों की मनोवृत्ति को दर्शाते हैं जो व्यवस्था को बदलने का दंभ करते हैं परंतु वास्तव में वे करना कुछ भी नहीं चाहते। रंगिनी-संगिनी आधुनिक काल की शोध वृत्ति पर प्रकाश डालती हैं जो समस्याओं की जड़ में न जाकर उनका सतही विश्लेषण करके ही संतुष्ट हो जाती हैं। इस पूरे नाटक मे केवल निक्षेप का चरित्र ही सामान्य चरित्र के रूप में उभरा है जो न अतिव्यावहारिक है, न अति आदर्शवादी। वही एकमात्र ऐसा चरित्र है जो कालिदास के उचित-अनुचित आचरण की परीक्षा संतुलित दृष्टि से करता है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न 4: रचना-प्रक्रिया और इतिहास के संबंध को मोहन राकेश ने नाटक में कैसे प्रस्तुत किया है?

प्रश्न 5: नाटक में प्रतीकात्मकता के कौन से तत्व महत्त्वपूर्ण हैं?

प्रश्न 6: 'आषाढ़ का एक दिन' की आज की प्रासंगिकता क्या है?



10.5 सारांश

सारांश स्वरूप इस इकाई के अध्ययन में 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक प्रथम अंक में कालिदास और मल्लिका के परस्पर प्रेम को दर्शाया हैं, मल्लिका कालिदास की अद्वितीय काव्य-प्रतिभा से सम्मोहित है। कालिदास राजकवि का सम्मान स्वीकार करने का निमंत्रण स्वीकार कर लेता है। दूसरे अंक में कालिदास की उपस्थिति नहीं है, लेकिन उसकी छाया उस पूरे अंक पर दिखाई देती है। मल्लिका को सूचना मिलती है कि 'ऋतुसंहार' के बाद और बहुत सी रचनाएँ की हैं और उनके बहुत से नाटकों का मंचन भी हुआ है, और उसने राजपुत्री प्रियंगुमंजरी से विवाह कर अब काश्मीर का राज्यभार संभाल लिया है। अब उसका नया नाम मातृगुप्त हो गया है। रंगिनी-संगिनी, अनुस्वार-अनुनासिक तथा प्रियंगुमंजरी की उपस्थिति का संबंध कालिदास से है। मल्लिका की कोमलता, भावप्रवणता, एकनिष्ठ प्रेम, संयम और इच्छा शक्ति के दर्शन हुए है। तृतीय अंक में कालिदास पुनः लौटता है। कालिदास तथा मल्लिका अनेक वर्षों बाद एक दूसरे के आमने-सामने आते हैं। इस अंक में मल्लिका के आत्मकथन से उसके संघर्षों और पीड़ा का ज्ञान होता है। कालिदास के वक्तव्य से उसकी मानसिकता, विवशता और मल्लिका के साथ एक नये जीवन के आरंभ की चाह को स्पष्ट करता है। हालांकि कालिदास और मल्लिका का पुनर्मिलन नहीं हो पाता। इस तरह नायक या नायिका 'फलागम' से वंचित रह जाते हैं। अम्बिका और विलोम अपने आचरण व दृष्टिकोण से प्रभावशाली पात्र हैं। अम्बिका एक प्रकार से मल्लिका और विलोम कालिदास की प्रतिकृति है। अतं मातुल, निक्षेप, रंगिनी-संगिनी, अनुस्वार-अनुनासिक, प्रियंगुमंजरी की उपस्थिति अपेक्षाकृत कम समय है लेकिन पाठकों तक संप्रेषित करने में सक्षम है। यह नाटक केवल ऐतिहासिक कथा नहीं बल्कि मानवीय संवेदनाओं और जीवन की वास्तविकताओं को दर्शाने वाली उत्कृष्ट कृति है।

10.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के रचनकर मोहन राकेश है। यह नाटक सन् 1958 ई. में लिखा गया है। प्रेम, त्याग, महत्वाकांक्षा और कला बनाम जीवन की वास्तविकता का चित्रण करना मुख्य विषय है। अधिक जानने के लिए ऊपर पड़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर:- नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' यह हिंदी में लिखा गया पहला आधुनिक नाटक है, जिसमें पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई को दर्शाया गया है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर:- मातुल अवसरवादी स्वभाव का प्रतीक है, जो कला को लाभ का माध्यम मानता है। यह पात्र समाज की भौतिक प्रवृत्तियों की आलोचना करता है। अधिक जानकारी के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- राकेश ने इतिहास को कल्पनात्मक रूप में पुन:जीवित कर समकालीन संदर्भों से जोड़ा है। उन्होंने अतीत और वर्तमान के बीच संवाद स्थापित किया है। विस्तृत विवेचन हेतु ऊपर देखें।

पश्न 5 का उत्तर:- वर्षा, ग्राम-परिवेश और वेशभूषा जैसे प्रतीक पात्रों की भावनात्मक स्थिति को प्रकट करते हैं। ये प्रतीक नाटक की संवेदनशीलता को सशक्त बनाते हैं। अधिक विवरण के लिए ऊपर संदर्भित अनुभाग पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर:- यह नाटक कलाकार की सामाजिक जिम्मेदारी और रचनात्मक स्वतंत्रता का प्रतीक है। इसकी विषयवस्तु आज भी समाज और सृजन के द्वंद्व को उजागर करती है। विस्तारपूर्वक अध्ययन हेतु ऊपर देखें।

10.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. राकेश, मोहन. (1958). आषाढ़ का एक दिन. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
2. सामाधिया, अनिल कुमार. (2002). मोहन राकेश के साहित्य में समसामयिक चेतना (अनुसंधान प्रबन्ध).झाँसी:बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
3. कथुरिया, सुंदरलाल. (1990). समकालीन हिन्दी नाटक. नई दिल्ली: साहित्य भारती प्रकाशन।
4. रस्तोगी, गिरीश. (1985). आधुनिक हिन्दी नाटक: व्यक्तित्व और विचार. इलाहाबाद: लोकमान्य प्रकाशन।
5. शर्मा, रामविलास. (1998). साहित्य और समाज. प्रयागराज: राजकमल प्रकाशन।

6. उपाध्याय, दिनेश नारायण. (2006). हमारी नाट्य परंपरा. इलाहाबाद: लोकभारती।
7. त्रिपाठी, राकेश. (2011). मोहन राकेश की नाट्य कृतियाँ: एक अध्ययन. भोपाल: मधुर प्रकाशन।
8. झा, प्रेमशंकर. (2015). कालिदास: जीवन और साहित्य. पटना: ज्ञानदीप प्रकाशन।
9. वर्मा, गोविंद प्रसाद. (2018). हिंदी नाटक की परंपरा और प्रयोग. जयपुर: आर्य पब्लिशिंग।

10.8 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के पात्रों पर दृष्टि डालें।
2. 'आषाढ़ का एक दिन' नामकरण पर विचार कीजिए।
3. कालिदास ने उज्जयनी जाने से पूर्व कौन से ग्रंथ की रचना की।
4. कालिदास और मल्लिका को आज के संदर्भ में आप किस प्रकार देखते हैं?
5. कालिदास और मातृगुप्त की व्यक्तित्व यात्रा में मुख्य बदलाब किस प्रकार प्रकट होता है?
6. नाटक में ग्राम-परिवेश का क्या नाटकीय महत्व है?
7. मल्लिका के निर्णयों में स्वतंत्रता और संयम का संतुलन कैसे दिखाई देता है?
8. निक्षेप का चरित्र नाटक की दृष्टि से किस प्रकार कार्य करता है?
9. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक का शीर्षक कथानक से किस प्रकार जुड़ता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के कथानक पर विस्तार से विचार कीजिए।
2. नाटक के उद्देश्य को प्रतिपादित करते हुए वर्तमान समय में 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की प्रासंगिकता को स्पष्ट कीजिए
3. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए ।
4. कालिदास के उज्जयिनी जाने और वापसी के प्रभाव का गहन विश्लेषण कीजिए।

5. मल्लिका के चरित्र के माध्यम से मोहन राकेश ने किस प्रकार नारीवादी संवेदनाओं को उभारा है?
6. नाटक में समय और प्रतीकवाद के प्रयोग का साहित्यिक प्रभाव पर चर्चा कीजिए।
7. मातुल, विलोम और अम्बिका जैसे सहायक पात्रों के माध्यम से सामाजिक दृष्टिकोण का विवेचन कीजिए।
8. 'आषाढ़ का एक दिन' को आधुनिक नाट्य परंपरा में स्थान देने वाले तत्वों का अनुशीलन कीजिए।
9. रचना-शैली (संवाद, लय, भाषा) के आधार पर इस नाटक की आलोचनात्मक समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।

******

इकाई 11 : नाटकीय कला की दृष्टि से आषाढ़ का एक दिन की समीक्षा

11.1 उद्देश्य
11.2 प्रस्तावना
11.3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीय विशेषताएं
11.4 नाटक की शिल्पगत विशेषताओं का परिचय
11.5 सारांश
11.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
11.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें
11.8 अभ्यास प्रश्न

11.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'आषाढ़ का एक दिन' की रंगमंचीय विशेषताओं और संवाद शिल्प को समझ सकेंगे।
- प्रमुख पात्रों के मानसिक द्वंद और चरित्र की गहराई का विश्लेषण करने में सक्षम होंगे।
- नाटक में प्रेम, कर्तव्य और यथार्थ के संतुलन को पहचान पाएंगे।
- नाटक के माध्यम से सामाजिक और पारिवारिक मूल्यों की समझ विकसित करना।
- पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई और उनके संघर्षों का विश्लेषण करना।
- रंगमंचीय प्रस्तुति में संवाद और अभिनय की भूमिका को पहचानना।
- आधुनिक जीवन की परिस्थितियों और उनके प्रभाव को नाटकीय दृष्टि से समझना।

11.2 प्रस्तावना

हिंदी नाट्य साहित्य में मोहन राकेश कृत 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक यथार्थवादी कृति के रूप में अद्वितीय स्थान रखता है। सन् 1958 ई. में प्रकाशित यह नाटक हिंदी रंगमंच की परंपरा को नया मोड़ देते हुए शिल्प, संवाद योजना और भावनात्मक गहनता का उचित उदाहरण प्रस्तुत करता है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक का केंद्रबिंदु कालिदास और मल्लिका की प्रेम और त्याग की कहानी है, साथ ही रचनात्मकता के द्वंद को दर्शाती है। एक तरफ कालिदास

की साहित्यिक प्रतिभा उसे समाज में प्रतिष्ठा दिलाती है, वहीं दूसरी ओर उसका व्यक्तिगत जीवन प्रेम और कर्तव्य के टकराव में द्वंद में उलझ जाता है। इस नाटक में मोहन राकेश ने पारंपरिक नाट्य शैली से इतर चरित्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को महत्व दिया है, जो इसे आधुनिक हिंदी नाटक की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में दर्शाता है।

रंगमंच की दृष्टि से 'आषाढ़ का एक दिन' संवादों की गहनता, दृश्य-रचना की सजीवता और भावनात्मक प्रवाह की स्पष्टता के लिए प्रसिद्ध है। इसकी भाषा सहज, सजीव और प्रभावशाली है, जो पात्रों की मानसिकता और परिस्थितियों को वास्तविकता के साथ प्रस्तुत करती है। इस नाटक में विलोम जैसे पात्र प्रतिनायक की भूमिका में हैं, जो जीवन के कठोर यथार्थ को सामने रखता है और कालिदास के अर्तद्वंद को और अधिक स्पष्ट करता है।

समकालीन समय में यह नाटक अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि इसमें व्यक्त कला और जीवन के संघर्ष वर्तमान में भी कई रचनात्मक व्यक्तियों के भीतर देखे जा सकते हैं। यह नाटक रंगमंचीय सफलता तक सीमित नहीं रहा, बल्कि हिंदी साहित्य की एक कालजयी रचना के रूप में स्थापित भी हुआ। नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' की साहित्यिक एवं रंगमंचीय विशेषताओं को समझने का प्रयास किया गया है, जिससे पाठक इसकी गहराई को अधिक व्यापक दृष्टि से परख सकें।

11.3 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीय विशेषताएँ

हिन्दी साहित्य के महान लेखक मोहन राकेश ने हिन्दी रंगमंच को एक आंदोलन के रूपमें ढाला है। वह नाटक और रंगमंच के अस्थिर तत्वों को सुसंगठित कर देते हैं। नाटक विधा एक प्रस्तुति-धर्मी कला है। मोहन राकेश का मानना है कि नाटक और रंगमंच एक गंभीर कला का माध्यम है, जिन्हें निष्ठा के साथ अपनाने की आवश्यकता है। उन्होंने नाटक में रंगमंचीयता को आवश्यक माना है। मोहन राकेश का नाटक 'आषाढ का एक दिन' आधुनिक हिंदी रंगमंच आंदोलन का प्रस्थान बिन्दु माना जाता है।

किसी भी नाटक का नाटकीय विधान उसकी द्वदांत्मकता से सृजित होता है। 'आषाढ़ का एक दिन' की द्वदांत्मकता कथानक, चरित्र एवं प्राकृतिक परिवेश को ध्यान में रख कर हुई है। जेठ माह की तपती हुयी धरती पर आषाढ़ के पहले ही दिन धारासार वर्षा से तृप्त हो जाती है। नाटक में बाह्य क्रिया व्यापार का द्वदं उतना नहीं जितना कि भीतरी क्रिया व्यापार का द्वदं है। नाटक में पहले अंक में अम्बिका और मल्लिका के बीच का संघर्ष कर्तव्य और भावना, यथार्थ और आदर्श के बीच का द्वदं है। नाटक के नायक कालिदास और विलोम के

बीच सर्जनाशक्ति और जीवनाशक्ति, कालिदस और मातुल के बीच जनसत्ता और राजसत्ता के बीच का संघर्ष दर्शाया है। दूसरे अंक में मल्लिका और प्रियंगुमंजरी के बीच का वैसम्य सत्ता दर्प और जन स्वाभिमान के बीच के द्वद को मुखर बनाता है। मल्लिका और प्रियंगुमंजरी में स्वत्व के अपहरण से हुयी क्षतिपूर्ति का भावदिखाया गया है। तीसरे अंक में कालिदास, मल्लिका और विलोम सब अंदर से टूटे हुए हैं। नाटक का नायक कालिदास सत्ता और साहित्य, प्रणय और परिणय, राजमोह और सर्जनात्मकता के द्वंदात्मक स्थिति में उलझा हुआ है। जब कालिदास राजमोह छोड़ कर मल्लिका के पास वापस आता है और मल्लिका के गोद में बच्चे को देखता है, तब तक मल्लिका से भी उसका मोह भंग हो जाता है। अत: बाद की परिस्थितियाँ प्रतिकूल हो जाती है। मल्लिका अपने ग्राम प्रांत और प्रदेश को छोड़ कर किसी अनिश्चितता की ओर कालिदास का बड़ जाना उसके द्वदं और तनाव को सूचित करता है। यह देखा गया है कि विलोम के लिए मल्लिका के मन विहीन तन की प्राप्ति उतनी हीं अधुरी है जितना मल्लिका की तन विहीन मन के रूप में कालिदास के लिए। नायिका मल्लिका भी तन और मन के स्तर पर बटी हुयी है। इस नाटक के सारे चरित्र अंतर्द्वंद ग्रस्त हैं और उनके इस अंतर्द्वंद से नाटक का पूरा वस्तुविधान द्वदांत्मक प्रतीत हुआ है।

पहले अंक में मल्लिका आषाढ़ की पहली बारिश में भींग कर सुख की अनुभूति करती है। परंतु अन्तिम अंक के अन्त में वह अपनी बाहों में अपने बच्चे को लिए कालिदास को पुकारती आगे बड़ती है,परंतु बारिस में बच्चे को भींगते देख वापस घर आ जाती है। मल्लिका भावना और कर्तव्य को लेकर गहरे तनाव में रहती है। दो अलग-अलग वर्षों में वर्षा को लेकर दो अलग-अलग प्रभावों का निरूपण मल्लिका के व्यक्तित्व की परिवर्तनशीलता को दर्शाता है। इससे जो संकेत व्यंजनाएँ फूटती है वह बहुत मर्मस्पर्शी है। नाटक में मेघ के अनेक प्रतीकार्थ दर्शाये गए हैं। पानी से जुड़ कर जो मेघ जीवनदायी लगतेहैं, वही अंधकार और बिजली से जुड़ कर दु:खदायी। मेघ गर्जन, बिजली एवं वर्षा के दृष्यश्रव्य बिम्ब नाटक में अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

इस प्रकार नाटक का शिल्प भाव सुगठित है। नाटक में चरित्रों के घात-प्रतिघात के साथ-साथ चरित्रों की समानान्तरता और व्यक्तित्व के विभाजन में उजागर होती हुई चलती है। इस नाटक में नाटककार ने कई नाट्य व्यक्तियों का सहारा भी लिया। दूसरे अंक की कथा में कालिदास अनुपस्थित रहकर भी अपनी परोक्ष उपस्थिति का एहसास कराता रहता है। नाटक में अनुपस्थित को उपस्थित बनाने वाली तकनीक बहुत प्रभावोत्पादक है। नाटककार ने बिंब योजनाओं के द्वारा भी इस शिल्प को अधिक व्यंजक और काव्यात्मक बनाया

है। घायल हरिण शावक राजपुरूषों की क्रूरता से रौंदी हुयी सुकुमारता को बिंबित करता है। यह कालिदास की व्यथा के बिंब को उभारता है। घोड़ों की टांपें राजपुरूषों की क्रूरता को चित्रित करती है। गर्जन तर्जन करते मेघ, तन-मन को भिंगोने वाले मेघ, यहाँ-वहाँ आवारा घुमते हुए मेघ, मन की चंचलता को बिंबित करते हैं। नाटक में मल्लिका कहती है, ''देखो माँ, चारो ओर कितने गहरे मेघ घिरे हैं! कल ये मेघ उज्जयिनी की ओर उड़ जाएँगे...।'' यहाँ उज्जैनी की ओर उड़ जाने वाला मेघ कालिदास को चित्रित करता है। नाटक की शिल्प संरचना और रंग शिल्प चरित्रों की द्वदांत्मकता को अत्यधिक उजागर करती है। सहायक पात्र रंगिनी, संगिनी, अनुस्वार, अनुनासिक, राज्यधिकारी कालिदास के चरित्र में आए बदलाव का संकेत देने के लिए आते हैं।

नाटक का दृश्य विधान अभिनेयता के अनुकूल है। नाटक की दृश्य योजना में मल्लिका और अम्बिका की आर्थिक-सामाजिक स्थिति, सुरूचि एवं संस्कार दर्शाते हैं। सम्पूर्ण नाटक एक ही दृश्य की पृष्ठ भूमि में घटित होता है। कालक्रम के साथ दृश्य में परिवर्तन मल्लिका की शारीरिक-मांसिक स्थिति में परिर्वतन को बताता है। डॉ. जगदीश शर्मा कहते है ''एक ही स्थान पर समय की गति के साथ बदलता हुआ परिवेश समाज के हाथों उत्पीड़ित मानव नियति की कथा कहता है। पहले अंक में अम्बिका द्वारा सूप में ध्यान फटकना उसकी कर्म निष्ठा एवं भावात्मक उद्वेलन को तो द्योतित करता हीं है वह खाद्य मल्लिका के जीवन एवं पारिवारिक प्रतिष्ठा में से अखाद्य कालिदास को बाहर निकालने के प्रयास का भी द्योतक है। तीसरे अंक में एक ही दीपक का जलना मल्लिका के एकाकीपन, उसकी उर्धवमुखी भाव निष्ठा एवं अम्बिका के न रहने का संकेतक है। घोड़ों की टाप को सुनकर अम्बिका, मल्लिका और निक्षेप के मन पर अलग-अलग प्रतिक्रियाओं का उभरना भी बहुत व्यंजक है। इस सांकेतिक व्यंजनाओं से नाटक में भावानुकूल अभिनेयात्मकता सृजित होती है।'' नाटक में सुनियोजित प्रकाश व्यवस्था से भी अभिनय में सहायता मिलती है। विलोम रंगमंच पर अग्निकाष्ठ के साथ उपस्थित होता है। मोहन राकेश अग्निकाष्ठ जैसे इस मंच उपकरण का उपयोग स्पॉट लाइट के स्थान पर करते है। एक दृश्य में विलोम जब कालिदास पर व्यंग करता है तो अग्निकाष्ठ को कालिदास के मुख के निकट लाता है। विलोम और कालिदास के बीच में मल्लिका आ जाती है तो तब अग्निकाष्ठ का प्रकाश मल्लिका के चेहरे पर पड़ने लगता है। इसके बाद विलोम जब कालिदास से बात करता है तो वह अग्निकाष्ठ का प्रकाश कालिदास की ओर कर देता है। अंधकार की पृष्ठभूमि में अग्निकाष्ठ से प्रकाशित चेहरे पर हीं दर्शक का ध्यान केन्द्रित होता है। इस प्रकाश व्यवस्था से कालिदास और विलोम के बीच मल्लिका का विभाजन ही सांकेतिक होता है। यह प्रकाश

व्यवस्था नाटक को अत्यधिक अभिनेय बनाने में सहायक है।

नाटक के सफल रंगमंच का श्रेय नाटक के संवादो को भी दिया जाता है। छोटे और संकेतिक व्यंजनाओं से भरे चुभते हुए संवाद नाटक में व्यापक असर छोड़ता है। संवाद योजना से ही नाटक के चरित्रों की चारित्रिक बिडम्बनाएँ भी प्रत्यक्ष होती है। नाटक में मल्लिका निक्षेप से राज कर्मचारियों के सबन्ध में कहती है कि, ''जानते हैं, माँ इस सम्बन्ध में क्या कहती हैं? कहती है कि जब भी ये आकृतियाँ दिखाई देती है, कोई न कोई अनिष्ट होता है। कभी युद्ध कभी महामारी!.... परन्तु पिछली बार तो ऐसा नहीं हुआ।'' तीसरे अंक में कालिदास का संवाद ''मैने कहा था मैं अथ से आरम्भ करना चाहता हूँ।'' यह इच्छा का समय के साथ द्वदं था,परन्तु देख रहा हूँ कि समय अधिक शक्तिशाली है। तीसरे अंक में भी मल्लिका के लम्बे एकालाप को कालिदास का संजीव प्रतीक बना कर मोहन राकेश ने बड़ी चतुराई से इस एकालाप को संलाप में परिवर्तित कर दिया है। उन्होंने इस एकालाप को नौ स्थानों पर विभक्त कर इसकी एकरूपता और लम्बाई को तो तोड़ा ही है साथ ही अभिनेत्री के सामने वैविध्य पूर्ण अभिनय की चुनौती भी पेश कर दी है। इसके बाद कालिदास मल्लिका से संबोधित होकर अपने आप से बातचीत करता हुआ लगता है। यहाँ मोहन राकेश ने संलाप को एकालाप में बदल दिया है। इस संलाप को भी सात स्थानों पर विभक्त कर भाव भंगिओं में परिवर्तन के द्वारा कालिदास में आए परिवर्तन को प्रदर्शित किया है।

नाटक की मंच सज्जा रंगमंचीयता के अनुकूल है। 'आषाढ़ का एक दिन नाटक' को किसी भी मंच (रंगद्वारी मंच, मुक्ताकाशी मंच, अग्रमंच) पर खेला जा सकता है। राम गोपाल बजाज इस संदर्भ में कहते हैं कि ''इस नाटक का कथ्य, कथा और पात्र भले ही भारतीय हो परन्तु इसका टेकनीक, गठन, ढाँचा और स्वरूपन-सबकुछ विदेशी है इसलिए मै मानता हूँ कि इसे अग्रमंच में किया जाए तो अधिक असरदार होगा।'' नाटक की भाषागत विशेषता सफल अभिनयमें अहम भूमिका निभाती है। नाटक में भाषा की तत्समता कालिदास कालीन प्राचीन भारतीय परिवेश और तत्कालिन यथार्थ को ध्वनित करने में सक्षम है। मोहन राकेश ने कठिन तत्सम शब्दो को पात्रों कि भाव भंगिमाओं, आंगिक चेष्टाओं एवं संकेतो से व्यक्त करते हुए इनके अर्थ को सामान्य शिक्षित या अशिक्षित दर्शकों के लिए भी सहज संप्रेषणीय बना दिया है। इसमें रंग-गतिविधियों के लिए भी संभावनाएँ है। एक स्थान पर निक्षेप कालिदास के बारे में कहता है ''मुझे विश्वास है कि उन्हें राजकीय सम्मान का मोह नहीं है।'' नाटक में कालिदास सर्जनात्मकता का प्रतीक है, मल्लिका इसी की विस्तारित आस्था का प्रतीक है। यदि ग्रंथ और मेघ कालिदास को प्रदर्शित करते हैं, तो ग्रामप्रांतर

और भूमि मल्लिका के स्त्रीत्व का प्रतीक है। नाटक बिंबों से भी भरा हुआ है। घायल हरिण शावक कालिदास की व्यथा के बिंब को उभारता है। घोड़ों की टापें राजपुरूषों की क्रूरता को और मेघ मन की चंचलता को बिंबित करते हैं।

नाटक तीन अंको में विभक्त है। मोहन राकेश ने अंकों का बंटवारा दृश्यों मे नहीं किया गया है। मोहन राकेश ने नाटक के महत्वपूर्ण पात्रों के प्रवेश के प्रारम्भ में उनके नाम उनकी पहचान और अन्य पात्रों से उसके सम्बंध का संकेत दे दिया है। पहले अंक में ही मल्लिका अपने पहले ही संवाद में अम्बिका को माँ पुकारती है। इससे दर्शक के सम्मुख पहले ही अम्बिका और मल्लिका का संबंध स्पष्ट हो जाता है। मल्लिका और अम्बिका के संवाद के क्रम में कालिदास के उल्लेख के बाद कालिदास का प्रवेश होता है। इससे दर्शक को कालिदास को पहचानने में आसानी हो जाती है। मातुल अपने पहले ही संवाद में अपने चरित्र को बता देता है। दूसरे अंक में निक्षेप द्वारा पहले ही यह परिचय देता है कि कालिदास का प्रियंगुमंजरी से विवाह हो चुका है, और वह कश्मीर का शासक नियुक्त भी किया गया है। एक तरफ तो इस नाटक में कम पात्र है और इन पात्रों के प्रवेश के पहले ही उनके नाम और चरित्र का पता दे देने से दर्शक पात्रों को पहचानने के क्रम में तनाव या बेचैनी का शिकार नहीं होते हैं। अन्य पात्रों में रंगिणी, संगिणी, अनुस्वार, अनुनासिक अपने असंगत संवादों से हास्य उत्पन्न करते हैं। यह हास्य वातावरण मल्लिका की त्रासदी के कारण उत्पन्न हुए तनाव को शिथिल करता है।

नाट्य विडम्बनाएँ भी इसकी सफल अभिनेता का एक महत्वपूर्ण घटक है। जो कालिदास घायल हरिण शावक के प्रति अपनी सहृदयता से दर्शक को प्रभावित करता है, वही जब मल्लिका के बाद के हरिण शावक को देखकर अपने को पृथक कर लेता है, तब वह दर्शक को बहुत निराश करता है।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न–: 1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक किस ऐतिहासिक व्यक्तित्व पर आधारित है?

पश्न–: 2. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में कालिदास और मल्लिका का मुख्य संघर्ष किसके बीच है?

पश्न–: 3. रंगमंचीय प्रस्तुति में संवाद और अभिनय की भूमिका क्या है?

11.4 नाटक की शिल्पगत विशेषताओं का परिचय

नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' का कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर एक नयी चेतना का उन्मेष करता है। प्रत्येक रचना वस्तुत: अपने शिल्प को अपने

भीतर से ही ढालती है। साहित्य की अन्य विधाओं की तुलना में नाटक के शिल्प को दो तत्वों को एक साथ लेकर चलना पड़ता है–आत्माभिव्यक्ति और उस अभिव्यक्ति का दर्शक तक संप्रेषण। पूरे नाटक में पिरोयी हुई रंग दृष्टि, नाटकीय स्थितियों का चयन, भाषा का उतार चढ़ाव, बिंबो और प्रतीकों की सूक्ष्मता 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के शिल्प को विशिष्टता प्रदान करती है। नाटक की भूमिका में ही मोहन राकेश 'भारतीय रंगतत्व' के खोज की चर्चा करते हैं। पाश्चात्य नाटक और रंगमंच की नकल पर हिन्दी नाटक और रंगमंच के विकास का उन्होंने हमेशा विरोध किया है। 'आषाढ़ का एक दिन' का महत्व इसी बात में है कि यह रंगमंच को भारतीय रंगपरंपरा से भी जोड़ता है। मोहन राकेश के पहले यह माना जाता रहा है कि नाटक लिखने के साथ ही नाटककार की भूमिका समाप्त हो जाती है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक से राकेश ने नाटककार को रंगमंच से जोड़ा है। हिन्दी नाटक का यह पहला उदाहरण है, जहां नाटक के साथ–साथ समग्र नाटकीय परिकल्पना स्पष्ट हुई है। यह ज्ञात होता है कि रंगमंच का समूचा जीवन्त वातावरण जैसे नाटककार के मस्तिष्क में मूर्त चित्र की तरह अंकित है और उसी के अनुसार नाटक ढलता चला जाता है। रंगमंच नाटक के मंचन व प्रदर्शन का माध्यम भर नहीं है, बल्कि नाटक का अनिवार्य अंग है। मोहन राकेश नाटक को दृश्य काव्य की श्रेणी में देखते हुए भी मूलत: उसे श्रव्य माध्यम मानते हैं। वह कहते हैं कि शब्दों के संयोजन,ध्वनि और लय से ही नाटक में दृश्यत्व पैदा होना चाहिए, न कि बाह्य और स्थूल उपकरणों से। ध्वनि की लय और शब्दों की संयोजन से भावाभिव्यक्ति का प्रयोग 'आषाढ़ का एक दिन' में मिलता है। नाटक में घोड़े के टापों की आवाज़ व्यवस्था की निष्ठुरता और मल्लिका के मन की आशंका को एक साथ व्यक्त करती है। घोड़े की टापों की आवाज़ मल्लिका ने पहले भी सुनी थी,जब राजपुरुष दंतुल का ग्राम प्रांत में आगमन हुआ था। उस दौरान यह टाप जब सुनी थी तब कालिदास को अपने साथ ले गये थे। अब फिर यह टाप मल्लिका के मन को आशंका से भर देती है। घोड़े के टापों द्वारा मल्लिका,अम्बिका और विलोम की अलग–अलग स्थितियों का प्रस्तुतीकरण नाट्य प्रभाव को प्रबल करता है। वर्षा की बूँदो की आवाज़ पहले दृश्य में मल्लिका के मन के उल्लास को व्यक्त करती है, पुन: यह आषाढ़ तीसरे दृश्य में उसका सारा अवसाद, पीड़ा, प्रतीक्षा वर्षा की बूंदों में घुल मिल के व्यक्त होती है। वर्षा के पहले दृश्य में मल्लिका इन बारिश की बूंदों को अपने हृदय में भर लेना चाहती है, लेकिन तीसरे दृश्य में यही बूंदें मल्लिका को और ज़्यादा अवसादग्रस्त कर रही हैं। पहले दृश्य में मेघगर्जन की ध्वनि एक प्रेम युक्त वातावरण की सृष्टि करती है, तो कालिदास के कश्मीर जाते समय मेघगर्जन, बिजली की कौंध और गहरा

अँधेरा न सिर्फ मल्लिका और कालिदास की बेचैनी को सामने लाते हैं, वहीं एक गहरे अवसादग्रस्त वातावरण की सृष्टि भी करते हैं।

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के संवादों में राकेश ने एक नयी नाट्य भाषा की खोज़ की है। यह भाषा जयशंकर प्रसाद की भाषा से भिन्न है। यह संवाद न तो चलताऊ भाषा में हैं और न ही कृत्रिम संस्कृतनिष्ठ तत्सम भाषा में है। पहली बार लिखित भाषा और नाट्य भाषा का अंतर हिन्दी नाटक में दिखाई देता है। क्लिष्ट भाषा युक्त साहित्यिक और बोलचाल की भाषा का अनूठा समन्वय 'आषाढ़ का एक दिन' में है। पात्र कालिदास और दन्तुल, कालिदास और विलोम जैसे विरोधी व्यक्तित्व वाले चरित्रों का टकराव अनुकूल भाषा संयम और लय नियोजन से ही प्रभावी बन पड़ा है। संवाद योजना से न सिर्फ पात्रों के व्यक्तित्व का पता चलता है, बल्कि उनकी मानसिक अवस्थाओं को भी यह चित्रित करते हैं। पात्रों की व्यक्तिगत विशेषताओं, उलझनों, द्वन्द्वों, मानसिक जटिलताओं, विचारों और सोचने के ढंग का सम्पूर्ण ज्ञान संवादों से मिलता है। मल्लिका के संवादों में भावुकता, तन्मयता और साथ में एक अंतहीन प्रतीक्षा की पीड़ा है। इसी तरह अम्बिका के संवादों में एक माँ की ममता के साथ-साथ जीवन के यथार्थ अनुभव से उपजी व्यावहारिकता भी दिखती है।

संवाद योजना की सफलता इस प्रकार दिखती है। प्रथम दृश्य में जहां कालिदास के संवादों में जो भावुकता दिखती है, आखिरी दृश्यों में वह एक लिजलिजेपन में परिवर्तित हो जाती है। अनुनासिक और अनुस्वार के संवादों में लय संयोजन द्वारा ही भिन्न-भिन्न अर्थ पैदा होते हैं। एज़रा पाउँड के अनुसार 'काव्य जब श्रेष्ठता के स्तर पर पहुँचता है तो नाटकीय हो जाता है और नाटक जब श्रेष्ठता की ऊँचाइयों को छूता है तो काव्यात्मक हो जाता है'। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की भाषा ही काव्यात्मक नहीं है, बल्कि काव्य पूरे नाटक की बनावट के अनिवार्य तत्व के रूप में सामने आता है। मोहन राकेश ने इस नाटक से नाट्य भाषा को शारीरिक क्रिया और पात्रों की मन:स्थिति से जोड़ा। मल्लिका का ग्रंथ को उठाना और रखना, अम्बिका का धान फटकना, विलोम का अग्निकाष्ठ जलाना आदि सभी क्रियाएँ न सिर्फ पात्रों की मनोवृत्ति को दर्शाती है, बल्कि नाटकीय संभावनाओं से भी भरपूर है। मोहन राकेश ने मौन को भी अर्थ के साथ नाटक में सजगता से प्रयोगकिया है।

सम्पूर्णनाटक एक ही दृश्यबंध में रचा गया है। पाश्चात्य विद्वान इब्सन और चेखव के यथार्थवादी रंगशिल्प का हिन्दी में यह नया प्रयोग था। अम्बिका और मल्लिका का प्रकोष्ठ ही घटनाओं का केन्द्रीय स्थल है। सभी पात्रों के साथ-साथ इस प्रकोष्ठ की भी नाटक में महत्वपूर्ण भूमिका है। नाटक में एक दीपक

का जलना भी एक साथ कई अर्थ देता है–अम्बिका की मृत्यु का, मल्लिका के अकेलेपन और उसका आत्मदहन।

इस नाटक ने हिन्दी नाटक के प्रति पूरे दृष्टिकोण को बदलने का कार्य किया हैं। गिरीश रस्तोगी कहते हैं कि ''आषाढ़ का एक दिन ने 'हिन्दी रंगमंच को सक्रियता ही नहीं दी,नाटक को सही माने में रंगमंच से जोड़ा, प्रचलित नाट्य रूढ़ियों को तोड़कर आधुनिक रंगमंच की कल्पना को, विकसित रंगमंच की कल्पना को या प्रयोगशील रंगमंच की कल्पना को साकार किया।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न 4: नाटक में समय और परिस्थिति का चित्रण कैसे किया गया है?

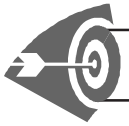
पश्न 5: 'आषाढ़ का एक दिन' में प्रेम का चित्रण किस प्रकार हुआ है?

पश्न 6: नाटक का संदेश आधुनिक जीवन पर क्या प्रभाव डालता है?



11.5 सारांश

इस इकाई से हमने सीखा है कि साहित्य और कला में व्यक्ति की प्रतिबद्धता उसके व्यक्तिगत जीवन को कैसे प्रभावित कर सकती है। नाटक में कालिदास का चरित्र यह दर्शाता है कि कला के प्रति समर्पण उसे महान बनाता है, लेकिन व्यक्तिगत जीवन में वह अकेला रह जाता है। मल्लिका, जो कालिदास के प्रति प्रेम में समर्पित थी, अंततः कालिदास से दूर हो जाती है। यह नाटक हमें जीवन में भावनाओं और कर्तव्यों के बीच संतुलन की आवश्यकता को समझने में सहायता करता है।



11.6 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तरः- मोहन राकेश कृत 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के नायक कालिदास हैं। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तरः- नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में कालिदास का मुख्य संघर्ष प्रेम और कला के बीच है, वहीं मल्लिका का संघर्ष त्याग और प्रेम है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तरः- संवाद और अभिनय पात्रों के भावों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करते हैं, जिससे दर्शक घटनाओं और पात्रों की भावनाओं को गहराई से समझ पाते हैं। यह नाटक की प्रभावशीलता और मंचीय प्रस्तुति को जीवंत बनाता है।

अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- समय और परिस्थिति पात्रों की भावनाओं और घटनाओं के विकास को प्रभावित करते हैं और नाटक की कथावस्तु को यथार्थपूर्ण बनाते हैं। इससे दर्शक पात्रों के संघर्ष और जीवन की परिस्थितियों से सहज रूप से जुड़ पाते हैं। अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 5 का उत्तर:- उत्तर: प्रेम को मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक प्रतिबद्धताओं के संदर्भ में दिखाया गया है, जो नाटक में भावनात्मक गहराई और पात्रों के मनोवैज्ञानिक संघर्ष को उभारता है। इससे कथानक और अधिक रोमांचक और दर्शनीय बनता है। विस्तार से जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर:- यह नाटक जीवन के महत्व, संबंधों की जटिलताओं और समय की सार्थकता पर दर्शक को सोचने के लिए प्रेरित करता है, जिससे वे अपने अनुभव और मूल्य पर पुनर्विचार कर सकते हैं। इसके माध्यम से नाटक सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी संदेश प्रदान करता है। ज्यादा जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।



11.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. प्रेमचंद, मुंशी. (2004). समकालीन भारतीय नाटक: दृष्टि और विश्लेषण. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
2. आनंद, अमृत. (2010). भारतीय नाट्य साहित्य का विकास. दिल्ली: साहित्य अकादमी।
3. नागर, शिव. (2015). मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आधुनिक नाटक. मुंबई: प्रज्ञा प्रकाशन।
4. पांडे, रवि. (2012). रंगमंच और अभिनय कला. कोलकाता: वाणी प्रकाशन।
5. कपूर, अर्चना. (2008). मध्यवर्गीय जीवन और नाटक. दिल्ली: निशान प्रकाशन।
6. जैन, सुनील. (2011). नाटकीय संरचना और संवाद शैली. जयपुर: सूर्या प्रकाशन।
7. चौधरी, राकेश. (2016). समकालीन हिंदी नाटक का विश्लेषण. लखनऊ: हिन्दी साहित्य मंच।
8. भारद्वाज, सीमा. (2009). पात्र विकास और कथावस्तु. दिल्ली: ज्ञानदर्पण प्रकाशन।
9. श्रीवास्तव, अरुण. (2013). रंगमंचीय प्रस्तुति और सामाजिक प्रभाव.

भोपाल: सृजन प्रकाशन।
10. त्रिपाठी, मनीष. (2014). आधुनिक नाटकों में समय और परिस्थिति का चित्रण. पटना: साहित्य भारती।

11.8 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की रंगमंचीय विशेषता क्या है?
2. 'आषाढ़ का एक दिन' में मल्लिका और प्रियंगुमंजरी के बीच वार्तालाप किस प्रकार प्रस्तुत किया गया है?
3. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में कालिदास को किस दरबार में राजकवि के रूप में सम्मानित किया जाता है?
4. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की भाषा की विशेषता क्या है?
5. पात्रों की मानसिक स्थिति कथावस्तु को कैसे प्रभावित करती है?
6. नाटक में प्रेम और कर्तव्य के बीच संतुलन कैसे दर्शाया गया है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में बिंब विधान की चर्चा करे।
2. नाटक की रंगमंचीय विशेषता पर प्रकाश डालते हुये 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की दृश्य-रचना की सजीवता पर प्रकाश डाले।
3. 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक की भाषा शैली की विशेषताओं को लिखिए।
4. संवाद शैली और भाषा नाटक की प्रभावशीलता में किस प्रकार योगदान देती है?
5. नाटक दर्शकों को जीवन और संबंधों पर क्या सोचने के लिए प्रेरित करता है?
6. 'आषाढ़ का एक दिन' को आधुनिक दृष्टि से देखने पर क्या नई समझ प्राप्त होती है?

******

इकाई 12 : नाटक और एकांकी

दोनों में समानता और अंतर

12.1 उद्देश्य
12.2 प्रस्तावना
12.3 एकांकी की परिभाषा और स्वरूप
12.4 एकांकी के तत्व
12.5 हिन्दी एकांकी का इतिहास
12.6 एकांकी और नाटक में अंतर
12.7 सारांश
12.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
12.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें
12.10 अभ्यास पश्न

12.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई से आप नाटक और एकांकी के स्वरूप, तत्वों और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- दोनों विधाओं के अध्ययन से संवाद, कल्पनाशक्ति और भावनात्मक अभिव्यक्ति का अभ्यास होगा।
- साहित्यिक प्रस्तुति के माध्यम से विश्लेषण, सामूहिकता और सांस्कृतिक समझ विकसित होगी।
- नाटक और एकांकी के माध्यम से दर्शक पर प्रभाव डालने की तकनीक और प्रस्तुति कौशल सीख पाएंगे।
- एकांकी और नाटक के अंतर-समानता को समझकर रचनात्मक लेखन में सुधार कर सकते है।
- मंचन और अभिनय के दृष्टिकोण से नाटकीयता के विभिन्न पहलुओं का अनुभव प्राप्त कर सकेंगे।



महत्वपूर्ण बिंदु

जयशंकर प्रसाद के नाटक 'एक घूंट' को हिन्दी की प्रथम एकांकी माना गया है। इस संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र ने कहा हैं कि ''एकांकी की टेकनीक का 'एक घूंट' में पूरा निर्वाह है।''

12.2 प्रस्तावना

नाटक और एकांकी साहित्य की दो प्रमुख विधाएँ हैं, जो न केवल मनोरंजन का माध्यम हैं, बल्कि समाज, संस्कृति और मानवीय भावनाओं को गहराई से प्रस्तुत करती हैं। इन दोनों विधाओं का अध्ययन विद्यार्थियों को भाषा, साहित्य, संवाद कौशल और भावनात्मक समझ को विकसित करने में सहायता प्रदान करता है।

नाटक विधा विस्तृत और बहु-आयामी होती है, जो विभिन्न पात्रों व चरित्रों, घटनाओं और संघर्षों के माध्यम से जीवन की जटिलताओं को दर्शाता है। वहीं दूसरी ओर एकांकी संक्षिप्त होते हुए भी तीव्र और प्रभावशाली होता है, जो किसी एक विषय या परिस्थिति को गहनता से व्यक्त करता है। दोनों विधाओं का अध्ययन रचनात्मकता का विस्तार करता है, सामाजिक मुद्दों पर विचार करने की क्षमता विकसित करता है, और छात्रों को आत्म-विश्लेषण का अवसर प्रदान करता है।

इसके अतिरिक्त, नाटक और एकांकी के अध्ययन से विद्यार्थियों में संवाद कौशल, मंचन की समझ और साहित्यिक अभिव्यक्ति का विकास होता है। ये विधाएँ दर्शक को संवेदनशीलता, आलोचनात्मक दृष्टिकोण, और सामूहिक सहयोग की भावना सिखाने में सहायक होती हैं।

इस प्रकार, नाटक और एकांकी का अध्ययन मात्र साहित्य तक ही सीमित नहीं, बल्कि यह एक व्यापक शैक्षिक और सांस्कृतिक अनुभव प्रदान करता है, जो जीवन के विविध पहलुओं को समझने में सहायक होता है।

12.3 एकांकी की परिभाषा एवं स्वरूप

एक अंक वाले नाटक को एकांकी कहते हैं। अंग्रेजी भाषा के 'वन ऐक्ट प्ले' शब्द के लिए हिन्दी में 'एकांकी नाटक' और 'एकांकी' दोनों ही शब्दों का समान रूप से व्यवहार होता है।

पाश्चात्य जगत में एकांकी 20 वीं शताब्दी में विशेषत: प्रथम युद्ध के बाद अत्यन्त प्रचलित और लोकप्रिय हुआ है। हिंदी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं में उसका व्यापक प्रचलन इस शताब्दी के चौथे दशक में हुआ।

पाश्चात्य के नाट्यसाहित्य में आधुनिक एकांकी का सबसे प्रारंभिक और अविकसित परंतु निकटवर्ती रूप 'इंटरल्यूड' है। 15वीं और 16वीं शताब्दियों में प्रचलित सदाचार और नैतिक शिक्षापूर्ण अंग्रेजी मोरैलिटी नाटकों के मात्र उपदेश से उत्पन्न ऊब को दूर करने के लिए प्रहसन पूर्ण अंश भी जोड़ दिए जाते हैं। ऐसे ही खंड 'इंटरल्यूड' कहे जाते थे। क्रमश: ये मोरैलिटी नाटकों से

स्वतंत्र हो गए और अंत में उनकी परिणति व्यंग्य-विनोद-प्रधान तीन पात्रों के छोटे नाटकों में हुई, साथ ही अत्यंत लोकप्रिय भी हुई।

'कर्टेन रेज़र' या पटोन्नायक के रूप में एकांकी, जिसकी तुलना संस्कृत नाटकों के अर्थोपक्षेपक या प्रेक्षणक से की जा सकती है, पाश्चात्य में आधुनिक एकांकियों का निकटतम पूर्ववर्ती था। रात्रि में रंगशालाओं में आनेवाले उच्च प्रतिष्ठा व प्रभाव व्यक्तित्व वाले दर्शकों के आने से साधारण सामाजिकों को बड़ी असुविधा होती थी। रंगशालाओं के मालिकों ने साधारण दर्शकों को मनोरंजन में व्यस्त रखने के लिए द्विपात्रीय प्रहसनपूर्ण संवाद प्रस्तुत करना आरंभ किया। इस प्रकार के द्विपात्रीय प्रहसनपूर्ण स्वतंत्र संवाद को ही 'कर्टेन रेज़र' कहा जाता था। इस द्विपात्रीय प्रहसनपूर्ण संवाद में कथानक एवं जीवन के यथार्थ और नाटकीय द्वंद का अभाव रहता था। आगे चल कर 'कर्टेन रेज़र' के स्थान पर यथार्थ जीवन को लेकर सुगठित कथानक और नाटकीय द्वंदवाले छोटे-छोटे नाटक प्रस्तुत किए जाने लगे। इनके विकास का अगला विस्तार आधुनिक एकांकी था।

एकांकी विधा इतनी लोकप्रिय हो उठी कि बड़े नाटकों की रक्षा करने के लिए व्यावसायिक रंगशालाओं ने उसे अपने यहाँ से निकालना शुरू कर दिया। परंतु उसमें प्रयोग और विकास की संभावनाओं को देखकर पश्चिम के कई देशों में अव्यावसायिक और प्रयोगात्मक रंगमंचीयता को अपना लिया। लंदन, पेरिस, डब्लिन, शिकागो, बर्लिन, न्यूयार्क आदि ने इस नए ढंग के नाटक और उसके रंगमंच को विस्तार दिया। इसके अतिरिक्त एकांकी नाटक को पाश्चात्य जगत के साहित्यकारों और लेखकों का बल मिला। प्रमुख लेखकों में रूस के चेख़व, गोर्की और एकरीनोव, फ्रांस के जिराउदो, सार्त्र और एनाइल, जर्मनी के टालर और ब्रेख्ट, इटली के पिरैंदेली तथा इंग्लैंड, आयरलैंड और अमरीका के आस्कर वाइल्ड, गाल्सवर्दी, जे.एम.बैरी, लार्ड डनसैनी, सिंज, शिआँ ओर केसी, यूजीन ओ'नील, नोएल कावर्ड, टी.एस.इलियट, क्रिस्टोफ़र फ्राई, ग्रैहम ग्रीन, मिलर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। रंगमंच के आंदोलनों और प्रमुख लेखकों के सम्मिलित एवं अदम्य प्रयोगात्मक साहस और उत्साह के फलस्वरूप आधुनिक एकांकी नई, स्वतंत्र और सुस्पष्ट विधा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। उनके द्वारा रचित कृतियों के आधार पर एकांकी नाटकों की सामान्य विशेषताओं का अध्ययन किया जा सकता है।

मुख्यत: एकांकी में एक अंकवाली होती है। अर्थात एकांकी उस नाटक को कहते हैं, जिसमें सम्पूर्ण कथानक की समाप्ति एक ही अंक में हो जाती है। हिन्दी नाट्य-साहित्य परंपरा में एकांकी का अस्तित्व नहीं था; यह बाद में आया है इसलिए इसे एक स्वतंत्र विधा के रूप में माना जाता है। हालांकि एकांकी

नाटक का ही छोटा रूप है तथापि यह उससे अलग भी है। इसमें एक ही मुख्य घटना या जीवन की एक संवेदना को दृश्यबद्ध किया जाता है। एकांकी नाटक साधारणत: 20 से 30 मिनट में प्रदर्शित किया जा सकता है। नाटक के समान एकांकी के भी छ: तत्व होते हैं। वर्तमान में मनुष्य के पास पहले की तरह अधिक समय नहीं हैं। अपनी व्यस्तता के कारण महाकाव्यों तथा मोटे-मोटे उपन्यासों को पढ़ने और नाटकों को देखने के लिए उसके पास पर्याप्त समय नहीं है। इसलिए कम समय में पढ़ी जाने वाली कहानियों और मंचन की जाने वाली एकांकियों के प्रति मानव जाति का झुकाव स्वाभाविक ही हैं।

12.4 एकांकी के तत्व

1.कथावस्तु- कथावस्तु के माध्यम से एकांकीकार अपने उद्देश्य को व्यक्त करता है। इसे वह प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत करता है। अधिक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए इसे कथा के क्रम मे इस प्रकार योजना करता है कि दर्शक का मन उसमें रम जाए। आरंभ से अंत तक दर्शक उसके साथ बंधा हुआ महसूस करे। उसका मन निरंतर आने वाले घटनाक्रम या दृश्य जानने के लिए उत्सुक बना रहे। सरल शब्दावली मे कहा जाए तो उसका कौतूहल बना रहना आवश्यक है। एकांकी में कथानक या कथावस्तु को तीन भागों मे विभाजित किया जा सकता है-प्रारंभ, विकास और चरमोत्कर्ष।

2. पात्र और चरित चित्रण- एकांकी का दूसरा मुख्य तत्व पात्र और चरित्र चित्रण है। नाटक में नायक तथा उसके सहायकों का चरित्र-चित्रण मूलत: घटनाओं के माध्यम से किया जाता हैं किन्तु एकांकी के पात्रों के चरित्र-चित्रण नाटकीय परिस्थितियों,भीतर बाहर के संघर्षों के सहारे सांकेतिक रहते हैं। एकांकी के चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता, यथार्थता और मनोवैज्ञानिकता का ध्यान रखना आवश्यक होता है। प्रत्येक पात्रके क्रिया-कलाप में कार्य का कारण भाव अवश्य सांकेतिक होना चाहिए।

3. भाषा-शैली- एकांकी का तीसरा प्रमुख तत्व भाषा शैली है। साहित्य की विभिन्न विधाओं की भाषा-शैली भिन्न-भिन्न होती है। एक सी विषयवस्तु के आधार पर कहानी, नाटक भी लिखे जा सकते हैं और एकांकी की भी रचना की जा सकती है। परंतु उसी विषय वस्तु को कवि अपने ढंग से ग्रहण करेगा और नाटककार अपने ढंग से। विषयवस्तु के प्रति लेखक का जिस प्रकार दृष्टिकोण होगा उसकी अभिव्यक्ति के लिए वह वैसा ही माध्यम चुनेगा। यहां माध्यम के भिन्न हो जाने से भाषा शैली भी भिन्न हो जाती है। यह देखा गया है कि कहानी की भाषा शैली वर्णन के लिए अधिक उपयुक्त होती है। मात्र

संवाद में लिखी गई कहानी की भाषा शैली एकांकी की भाषा-शैली नहीं हो सकती क्योंकि उसमें नाटकीय तत्व नहीं रहता है। एकांकी की भाषा शैली के संबंध में एक बात और ध्यान देने योग्य है। भाषा शैली का प्रयोग पात्र की शिक्षा,संस्कृति वातावरण,परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए।

4. देशकाल-वातावरण- एकांकी के नाट्यशिल्प को सफल बनाने के लिए देशकाल वातावरण को आधार लिया जाता है। यह कहा गया है कि एकांकी में देशकाल और कार्य-व्यापार की अन्विति का अर्थ है कि संपूर्ण घटना एक ही स्थान पर घटित हो और उसमें दृश्य परिवर्तन कम से कम हो। सामान्यत: देशकाल की अन्विति से अभिप्राय हैं कि एकांकी की घटना वास्तविक जीवन में जितनी देरी में घटित हुई, उतनी ही देर में उसका अभिनय भी हो सके। यदि दो घटनाओं मे वर्षों का अंतर हो जाएगा तो उन्हें एकांकी का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए। यहां कार्य की अन्विति का अर्थ है, प्रासंगिक कथाओं को उसमें स्थान न दिया जाए और कार्य व्यापार में भी क्रमबद्धता बनी रहें।

5. रंगमंचीयता- नाटक की भांति रंगमंचीयता भी मुख्य तत्वों में से एक है। एकांकी के सफलतापूर्वक अभिनय के लिए उपयुक्त रंगमंच सज्जा के साथ-साथ कुशल अभिनेताओं का होना अनिवार्य है, क्योंकि एकांकी के मूल उद्देश्य की अभिव्यक्ति का मुख्य दायित्व रंगमंच पर होता है। एकांकी को प्रभावशाली बनाने के लिए और प्रकाश योजना का भी उचित उपयोग किया जाता है।

6. उद्देश्य- एकांकी का कोई ना कोई उद्देश्य अवश्य होना चाहिए। उसके मंचन से दर्शकों को कोई न कोई संदेश अवश्य प्राप्त होना चाहिए।

एकांकी के प्रकार में सामाजिक एकांकी, पौराणिक एकांकी,ऐतिहासिक एकांकी, राजनीति से सम्बंधित एकांकी,चरित्र प्रधान एकांकी और अर्थपूर्ण एकांकी हैं।

12.5 हिंदी एकांकी का इतिहास

हिन्दी साहित्य के इतिहासकार एकांकी का प्रारंभ 'भारतेंदुयुग' से मानते हैं। जयशंकर प्रसाद के नाटक 'एक घूँट' (सन् 1921 ई.) से दूसरा चरण, भुवनेश्वर प्रसाद के 'कारवाँ' (सन् 1921 ई.) से तीसरा तथा डॉ. रामकुमार वर्मा के 'रेशमी टाई' (सन् 1941 ई.) संकलन से चौथे चरण की शुरूआत को माना है। अत: हिंदी एकांकी का नवीनतम इतिहास संक्षेप में इस प्रकार है :

(1) भारतेन्दु काल- भारतेन्दु काल में दो प्रकार की एकांकी लिखी गई। प्रथम अनूदित एकांकी तथा द्वितीय मौलिक एकांकी। भारतेन्दु हरिश्चंद्र का बांग्ला के 'भारतमाता' का अनुवाद 'भारत जननी'; राधाचरण गोस्वामी द्वारा

बांग्ला के 'भारतेर यवन' का अनुवाद 'भारतवर्ष में यवन लोग', कांचनाचार्य कृत 'धनन्जय विजय'का छायानुवाद, अयोध्यासिंह उपाध्याय का 'प्रद्युम्नविजय व्यायोग' आदि उल्लेखनीय हैं। दूसरी कोटि में भारतेन्दुकृत 'विषस्यविषमौषधम्', 'प्रेमजोगिनी' (अपूर्ण), गीतिरूपक 'नीलदेवी' तथा 'सतीप्रताप' (अपूर्ण); राधाचरण गोस्वामी कृत 'तनमनधन गोसाई के अरपन', 'अमरसिंह राठौर', एवं 'श्रीदामा'; किशोरी लाल गोस्वामी का 'चौपटचपेट'; राधाकृष्ण दास का 'दु:खिनीबाला'; अंबिकादत्त व्यास रचित 'कलियुग और घी' तथा 'मन की उमंग'; श्रीशरण कृत 'बालविवाह'; बालकृष्ण भट्टकृत 'कलिराज की सभा', 'रेल का विकट खेल' तथा 'बाल विवाह'; प्रतापनारायण मिश्र कृत 'कलिकौतुक'; देवकीनन्दन त्रिपाठी कृत 'जय नरसिंह की'; काशीनाथ खत्री कृत 'सिंधु देश की राजकुमारियाँ', 'गुन्नौर की रानी' एवं 'लजबो का स्वप्न'; लाला श्रीनिवासदास कृत 'प्रह्लाद चरित'; बदरीनारायण चौधरी (प्रेमघन) कृत 'प्रयाग रामागमन'; कृष्णशरण सिंह गोप कृत 'माधुरी' आदि एकांकी आती हैं।

इस समय के दौरान ऐतिहासिक आख्यान तथा समाजसुधार के प्रसंग ही उपर्युक्त एकांकियों के विषय रहे हैं। इन्हें आधुनिक एकांकी का प्रारंभिक रूप कह सकते हैं। कला का विकसित रूप इन रचनाओं में नहीं मिलता। यहाँ शैलियाँ परस्पर कुछ भिन्न हैं पर परंपरा एक ही है। उक्त वर्णित एकांकी अभिनेय की अपेक्षा पाठ्य अधिक है। लेखक का रुझान जीवन की स्थूलता का वर्णन करने की ओर अधिक है। इनमें से कुछ एकांकी रचना प्रहसन के रूप में लिखी गई है, पर उनमें निर्मल हास्य न होकर व्यंग्य की मात्रा ही अधिक है। एकांकी के लिए अपेक्षित प्रमुख गुण कार्य का इन रचनाओं में अभाव है।

(2) एकांकी विधा के दूसरे युग में जयशंकर प्रसाद का 'एक घूँट' लिखा गया जिसपर संस्कृत का भी प्रभाव माना गया है और बांग्ला के माध्यम से आए पाश्चात्य एकांकी शिल्प का भी प्रभाव देखा गया है। फ्रांसीसी नाटककार मोलियर के कुछ प्रहसनों का भी इस दौरान हिंदी में अनुवाद हुआ है। 'एक घूँट' में एकांकी में लगभग सभी आधुनिक लक्षण मिल जाते हैं। 'विवाह समस्या' का विवेचन एवं समाधान भावुकतापूर्ण शैली से किया गया है। परन्तु 'एक घूँट' एक ही रह गया,अन्य रचनाकारों को यह एकांकी लेखन की ओर प्रवृत्त न कर सका।

(3) एकांकी का तीसरा चरण भुवनेश्वर प्रसाद कृत 'कारवाँ' से आरंभ होता है, जिसमें छह एकांकी हैं। सन् 1938 ई. में 'हंस' पत्रिकामें एकांकी अंक प्रकाशित हुआ। इसमें तत्कालीन प्रतिनिधि एकांकी प्रस्तुत की गई। इसी बीच सत्येन्द्र रचित 'कुनाल', पृथ्वीनाथ शर्मा की 'दुविधा', रामकुमार वर्मा की 'पृथ्वीराज की आँखें'; सूर्यशरण पारीक की 'बैलावण या प्रतिज्ञापूर्ति' आदि

प्रकाशित हुए। उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्ददास आदि एकांकीकार भी इसी काल में एकांकी लेखन की ओर प्रवृत्त हुए।

इस युग में प्रख्यात और नए दोनों प्रकार के कथानकों को लेकर एकांकी की रचना की गई। जिनमें विवाहादि, सामाजिक तथा साम्यावादादि, राजनीतिक समस्याएँ प्रमुख रूप से उभर कर सामने आई है। प्राचीन विचारधारा को उचित बताते हुये, इसके साथ नवीन विचारधारा को अपनाने का आग्रह भी स्पष्ट दिखाई पड़ता है। पाश्चात्य विचार और शैली के प्रभाव को लेकर एकांकी ने अपने रूप रंग में पर्याप्त परिवर्तन किया है। इसकी तकनीक में यत्किंचित् स्थिरता भी आई है। सन् 1935 ई. से रेडियो प्रसारणों के अंतर्गत एकांकियों को भी स्थान दिया जाने लगा था, अत: रेडियो एकांकी अथवा ध्वनिनाटक भी अधिक संख्या में लिखे जाने लगे।

(4) चतुर्थ चरण तक पहुँचते-पहुँचते एकांकी का स्वरूप, शिल्प आदि पूरी तरह स्थिर हो जाता है, उनका प्रामाणिक रूपदर्शकों के सामने आता है। डॉ. रामकुमार वर्मा की 'रेशमी टाई' एकांकी से इस युग का सूत्रपात हुआ। इसके अतिरिक्त डॉ. रामकुमार वर्मा की 'ऐक्ट्रेस','रजनी की रात','एक तोले अफीम की कीमत','परीक्षा','नहीं का रहस्य','कहाँ से कहाँ', 'चारुमित्रा', 'दस मिनट' आदि एकांकी प्रसिद्ध हैं। भुवनेश्वर कृत 'शैतान','स्ट्राइक','असर', 'ताँबे के कीड़े'; भगवतीचरण वर्मा की 'संदेह का अंत','दो कलाकार','सबसे बड़ा आदमी'; उपेंद्रनाथ अश्क कृत 'जोंक','समझौता', 'घड़ी', 'छठा बेटा', 'लक्ष्मी का स्वागत', 'विभा', 'तौलिये', 'आदिमार्ग'; उदयशंकर भट्ट के 'दो अतिथि', 'वर निर्वाचन', 'मुंशी अनोखेलाल', 'असली नकली', 'नेता', 'सेठ भालचंद', 'मनुमानव', 'आदिम युग'; सेठ गोविंददास रचित 'विटेमन', 'अधिकार लिप्सा', 'वह मरा क्यों', 'हंगर स्ट्राइक', 'कंगाल नहीं', 'ईद और होली'; पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र कृत 'राम करे सो होय','मियाँ भाई', 'अफजल वध'; वृंदावनलाल वर्मा कृत 'पीले हाथ', 'सगुन', 'जहाँदार शाह', 'कश्मीर का काँटा', 'मानव'; एस.पी. खत्री द्वरा रची गई 'चौराहा','माँ,' 'मछुए की माँ','ठाकुर का घर', 'बंदर की खोपड़ी'; विष्णु प्रभाकर कृत 'माँ का हृदय', 'संस्कार और भावना', 'रक्तचंदन', 'माँ बाप'; जगदीशचंद्र माथुर कृत 'भोर का तारा', 'रीढ़ की हड्डी', 'मकड़ी का जाला', 'कलिंगविजय', 'खंडहर'; लक्ष्मीनारायण मिश्र कृत 'एक दिन'; गणेशप्रसाद द्विवेदी कृत 'सोहाग की बिंदी', 'दूसरा उपाय ही क्या है', 'शर्मा जी', 'सर्वस्व समर्पण' आदि प्रमुख एकांकी इसी काल की देन हैं।

इस युग की एकांकी स्वतंत्र एवं सचेष्ट भाव से लिखी गई है। अत: विषय की अपेक्षा शिल्प उनमें विशेष स्थान रखता है। आधुनिक एकांकी में बौद्धिक उत्सुकता, मानसिक विश्लेषण, अंतर्द्वंद की अभिव्यक्ति, हास्य तथा चुटीले

व्यंग्य, संवादों की कसावट, मार्मिक स्थलों का चयन, यथार्थ प्रस्तुतीकरण के प्रति आग्रह, मनोवैज्ञानिक कार्यव्यवहार, पद्य का लगभग अभाव, सामान्य नायक की स्वीकृति, रंगसंकेत आदि उत्तरोत्तर बढ़ते गए हैं। युग की विभिन्न अभिरुचियों के अनुसार इस समय की एकांकियों के विषय भी अनेक रहे हैं, जिनमें प्रेम, विवाह, घृणा, क्रूरता, हत्या, पौराणिक आख्यान, लोकगाथात्मक एवं लोकविश्रुत वीरों तथा राजाओं के कृत्य, सामाजिक कुरीतियाँ, वर्गसंघर्ष, देशभक्ति, हिंदु-मुसलमान-भ्रातृत्व, सत्याग्रह, यौनाकर्षण आदि प्रमुख विषय रहे हैं। रेडियों पर प्रसारित होने वाले ध्वनि नाटक भी इस बीच अधिक संख्या में लिखे गए हैं।

(5) हिंदी एकांकी पाँचवाँ अथवा अंतिम चरण एकांकी की विभिन्न विधाओं को लेकर आरंभ होता है जिनमें मंच एवं ध्वनि एकांकी के अतिरिक्त 'ओपेन एयर एकांकी', 'चित्र एकांकी' (टेलिविजन पर दिखाए जानेवाले),'गली-नुक्कड़ एकांकी' आदि सम्मिलित किए जा सकते हैं। डॉ. लक्ष्मीनारायण कृत 'बसन्त ऋतु का नाटक','मम्मी ठकुराइन', 'राजरानी'; देवराज दिनेश की 'समस्या सुलझ गई', 'तुलसीदास', 'रिश्वत के अनेक ढंग'; जयनाथ नलिन रचित 'भक्तों की दीनता'; सत्येंद्र शरत कृत 'नवजोती की नई हिरोइन'; विनोद रस्तोगी कृत 'बहू की विदा'; चिरंजीत कृत 'चक्रव्यूह', 'ढोल की पोल' (ध्वनि नाटक), 'पाँच प्रहसन' (संकलन); रेवतीशरण शर्माकृत 'तलाक'; विमला लूथरा कृत 'अपना घर'; ज्ञानदेव अग्निहोत्री कृत 'रोटीवाली गली'; कृष्णकिशोर श्रीवास्तव के 'सत्यकिरण', 'मछली के आँसू', 'आस्तीन के साँप'; इंदुशेखर का 'महल्ले की आबरू'; स्वामीनाथ कृत 'आई.ए.एस.' ; राजेंद्रकुमार शर्मा की रचना 'पर्दा उठने से पहले', 'रेत की दीवार', 'अटैची केस', अरुण रचित 'रेलगाड़ी के डिब्बे', 'भोर की किरणें; श्रीकृष्ण कृत 'माँ जी', 'तरकश के तीर'; मुक्ता शुक्ल कृत'पर्दे और परछाइयाँ', 'भीतरी छाया',कुमार राजेंद्र कृत 'आदमखोर' (ओपेन एयर एकांकी); कंचनकुमार रचित 'सूअर बाड़े का जमादार' (गली एकांकी) आदि इस चरण की प्रमुख एकांकी रचनाएँ हैं।

इस काल में बेमानी (ऐब्सर्ड) एकांकी भी लिखे गए हैं, जिनमें सत्यदेव दुबे कृत 'थोड़ी देर पहले और थोड़ी देर बाद'; धर्मचंद्र जैन कृत 'चेहरों के चेहरे'; मोहन राकेश कृत बीज नाटक 'शायद' आदि उल्लेखनीय हैं। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश, विष्णु प्रभाकर, गंगाधर शुक्ल, कमलेश्वर, उपेन्द्रनाथ अश्क, विनोद रस्तोगी तथा मनहर चौहान ने इधर बहुत सी चित्रएकांकी प्रस्तुत की।

पाँचवें चरण की एकांकियों में पाश्चात्य रचना प्रक्रिया को कठोरता के साथ ग्रहण किया गया है अथवा उसमें रचनाकारों द्वारा प्रतिभा और बुद्धि से नए वस्तुविधान नई अभिव्यंजना द्वारा मौलिक रूप का निर्माण कर लिया गया

है। गीत का इनमें एकांत अभाव है प्रकाश योजना का अधिक उपयोग किया गया है, जिसमें पर्दो की आवश्यकता बहुत कुछ समाप्त हो गई है। इसमें संवाद अत्यंत कसे हुए तथा चुटीले हैं। जीवन के नए ढंग व पहलुओं को, उसकी आशाओं, निराशाओं, छोटी-छोटी समस्याओं तथा समाज की प्रति दिन की सामान्य घटनाओं को लेकर ये एकांकी रचे गए हैं। चित्र एकांकियों ने 'आउट-डोर-हीनता' की परंपरा को पृथक किया है। इसमें अब पहाड़ी नदी की चंचलता, सड़कों पर भागती कारें, समुद्र में चलते यान, आकाश में शत्रुविमानों से जूझते 'नैट' आदि दिखाए जाते हैं। गली-नुक्कड़ एकांकी ने मंच को तोड़ा है तो बेमानी एकांकियों ने दर्शकों को ही मंचपर लाकर खड़ा कर एकांकी को सशक्त कर दिया है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-: 1. एकांकी से क्या तात्पर्य है? इसके प्रकार लिखिए।

प्रश्न-: 2. 'कर्टेन रेजर' से क्या तात्पर्य है?

प्रश्न-: 3. एकांकी में पात्रों की संख्या और उनका चरित्र कैसे प्रस्तुत किया जाता है?

12.6 एकांकी और नाटक में अंतर

नाटक में प्रमुख कथाओं के साथ-साथ सहायक गौण कथाएं भी सम्मिलित होती है जबकि एकांकी में केवल एक ही कथा एवं घटना को कम समय में दर्शाया जाता है। नाटक में अनेक अंक होते हैं परंतु एकांकी में केवल एक ही अंक विद्यमान होता है। नाटक में मुख्यत: कथानक को विस्तारित रूप से दर्शाया जाता है जबकि एकांकी के कथानक में ही घनत्व रहता है। नाटक में पात्रों और सहायक पात्रों द्वारा चरित्र के विकास की गतिविधियों को दर्शाया जाता है जबकि एकांकी में पात्र के क्रियाकलापों एवं चरित्रों का संयोजन किया जाता है। नाटक में अनेक किरदारों एवं पात्रों की मौजूदगी होती है जबकि एकांकी में पात्रों एवं चरित्रों की संख्या कम से कम होती है। नाटक विधा पृष्ठभूमि एवं कथानक का एक विस्तृत रूप है परंतु एकांकी में पृष्ठभूमि एवं कथानक का विस्तार नहीं किया जाता। एकांकी का रूप संकुचित होता है परंतु प्रभाव पूर्ण व्यक्त करता है। नाटक में मुख्य रूप से छोटी-छोटी घटनाओं का भी विवरण किया जाता है परंतु एकांकी में छोटी-छोटी अनेक घटनाओं का वर्णन नहीं किया जाता है। नाटक में कथा के विचारों को विस्तारित किया जाता है जबकि एकांकी में विचार को केवल संकेत मात्र रखा जाता है। एक नाटक में अनेक

किरदारों के जीवन के विविध पहलुओं पर विचार किया जाता है परंतु एकांकी में उस किरदार के केवल एक पक्ष को ही लिया जाता है। नाटक मंचन के समय स्थान एवं समय की सीमा का विस्तार किया जाता है जबकि एकांकी में घटना, स्थान एवं समय का वर्णन नहीं किया जाता।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न 4: नाटक और एकांकी में मुख्य अंतर क्या है?

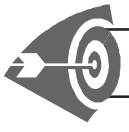
प्रश्न 5: एकांकी का उद्देश्य क्या है?

प्रश्न 6: रंगमंचीय तत्व एकांकी की सफलता में कैसे योगदान देते हैं?



12.7 सारांश

इस अध्याय के अंतर्गत आपने नाटक और एकांकी की समानताओं और अंतर को समझा है। एकांकी का उद्देश्य कम समय में सीमित पात्रों के माध्यम से दर्शकों पर अपनी छाप छोड़ना है। नाटक की भांति इसमें कथानक, पात्र, रंगमंच आदि तत्व होते हैं परंतु एकांकी में यह भिन्न हो जाते हैं। एकांकी ने अन्य विधाओं की भांति ही लंबी यात्रा तय की है। एकांकी जैसा कि नाम से स्पष्ट हो रहा है एक अंक वाला नाटक। नाटक में अनेक अंक और कथा का विस्तार होता है। एकांकी संक्षिप्त नाट्य रूप है, जिसके अंतर्गत केवल एक दृश्य होता है। एकांकी की कथा एक ही परिस्थिति या घटना पर केंद्रित रहती है। एकांकी में पात्रों की संख्या सीमित होती है परंतु एकांकी संवाद दर्शक पर गहरे प्रभाव छोड़ते हैं। एकांकी अधिक तीव्र, प्रभावशाली और संक्षिप्त होता है, जिससे दर्शकों पर सीधा असर पड़ता है। उदाहरण के लिए रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, भुवनेश्वर, जगदीशचंद्र माथुर, भगवती चरण वर्मा, धर्मवीर भारती आदि प्रसिद्ध एकांकीकार हैं। दोनों विधाएँ नाटक और एकांकी अपने तरीके से महत्वपूर्ण हैं–नाटक विस्तार और गहराई प्रदान करता है, जबकि एकांकी तीव्रता और प्रभावशाली प्रस्तुति के लिए जाना जाता है।



12.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:– एकांकीएक संक्षिप्त नाट्य विधा है, जिसमें केवल एक ही दृश्य होता है। इसमें कहानी, पात्रों और घटनाओं को सीमित रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे दर्शकों पर तत्काल प्रभाव पड़ता है। एकांकी के कई प्रकार हैं जिनमें पौराणिक एकांकी, ऐतिहासिक एकांकी, सामाजिक एकांकी,

चरित्र प्रधान एकांकी, अर्थपूर्ण एकांकी और राजनीतिक एकांकी प्रमुख हैं। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर:- रंगशालाओं के मालिकों ने साधारण दर्शकों को मनोरंजन में व्यस्त रखने के लिए द्विपात्रीय प्रहसनपूर्ण संवाद प्रस्तुत करना आरंभ किया। इस प्रकार के द्विपात्रीय प्रहसनपूर्ण स्वतंत्र संवाद को ही 'कर्टेन रेज़र' कहा जाता था। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर:- एकांकी में पात्रों की संख्या सीमित होती है, पर उनका चरित्र गहन और संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है। संवाद और अभिनय दर्शकों को घटनाओं और पात्रों की मनोस्थिति को समझने में मदद करते हैं। इस विषय पर और जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- नाटक और एकांकी के बीच मुख्य अंतर उनके अंक, पात्र और समय में है। नाटक विस्तृत कथानक प्रस्तुत करता है, जबकि एकांकी संकुचित और तीव्र प्रस्तुति देता है। यह दर्शकों को सीमित समय में प्रभावशाली अनुभव प्रदान करता है। अधिक विस्तार जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 5 का उत्तर:- एकांकी का उद्देश्य कम समय में संदेश और भावना को प्रभावपूर्ण रूप से दर्शकों तक पहुँचाना है। इसके माध्यम से लेखक केवल एक घटना या परिस्थिति को केंद्रित करता है। इसके बारे में अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर:- रंगमंचीय तत्व जैसे प्रकाश, सज्जा और अभिनेताओं की कुशलता एकांकी की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये सभी तत्व मिलकर संक्षिप्त नाट्य प्रस्तुति को जीवंत बनाते हैं और अधिक जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।



12.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. रामचरण, महेंद्र. (2015). एकांकी और एकांकीकार. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. सत्येन्द्र, डॉ. (2012). हिंदी एकांकी. साहित्य रत्न भंडार, आगरा।
3. अश्क, उपेन्द्रनाथ. (2010). नये रंग एकांकी. इलाहाबाद।
4. प्रसाद, जयशंकर. (1921). एक घूँट. काशी।
5. वर्मा, रामकुमार. (1941). रेशमी टाई. लखनऊ।
6. रस्तोगी, विनोद. (2008). समकालीन एकांकी अध्ययन. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।

7. भारती, धर्मवीर. (2005). एकांकी और नाटक की विशेषताएँ. साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
8. पाण्डेय, बेचन. (2009). एकांकी लेखन का इतिहास. इलाहाबाद: साहित्य भवन।
9. माथुर, जगदीशचंद्र. (2011). हिंदी एकांकी और रंगमंचीयता. भोपाल: मातृभाषा प्रकाशन।
10. भट्ट, उदयशंकर. (2007). एकांकी के तत्व और अभ्यास. जयपुर: प्रेम प्रकाशन।

12.10 अभ्यास पश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. एकांकी के तत्व लिखिए?
2. नाटक और एकांकी की विशेषताएँ क्या-क्या है?
3. एकांकी और नाटक में मुख्य अंतर क्या है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. एकांकी के इतिहास पर एक आलेख तैयार कीजिए ।
2. एकांकी के तत्वों को विस्तार से व्यक्त कीजिए ।
3. एकांकी और नाटक में अंतर को स्पष्ट कीजिए ।
4. रगमंचीयता एकांकी में कैसे प्रभाव डालती है?
5. हिंदी एकांकी का आधुनिक विकास किन प्रमुख लेखकों से हुआ?
6. एकांकी के विभिन्न प्रकार कौन-कौन से हैं और उनका महत्व क्या है?

******

इकाई 13 : दीपदान

एकांकीकार रामकुमार वर्मा का परिचय, एकांकी का सारांश और समीक्षा

13.1 उद्देश्य
13.2 प्रस्तावना
13.3 एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा का जीवन परिचय और उनकी रचनाएँ
13.4 दीपदान एकांकी का सारांश और समीक्षा
13.5 एकांकी के तत्वों पर दीपदान का विश्लेषण
13.6 सारांश
13.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
13.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
13.9 अभ्यास प्रश्न

13.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई के माध्यम से आप डॉ. रामकुमार वर्मा कृत 'दीपदान' एकांकी की कथावस्तु और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- पन्ना धाय के चरित्र से कर्तव्य, त्याग और राष्ट्रप्रेम की भावना को आत्मसात करने की प्रेरणा मिलेगी।
- साहित्यिक अध्ययन से मानवीय संवेदनाओं, देशभक्ति और नैतिक मूल्यों की समझ विकसित होगी।
- एकांकी के तत्व-कथानक, पात्र, संवाद, भाषा, नाटकीयता और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ-को पहचानना सीखेंगे।
- ऐतिहासिक घटनाओं और साहित्यिक संवेदनाओं के माध्यम से पाठक/दर्शक में देशभक्ति और नैतिक जागरूकता उत्पन्न होगी।
- पाठक/दर्शक को एकांकी की प्रस्तुति और अभिनय कला के महत्व का अनुभव होगा।



महत्वपूर्ण बिंदु:-

डॉ. रामकुमार वर्मा आधुनिक एकांकी के रूप में प्रथम रचनाकार माने जाते हैं। 'बादल की मृत्यु' (1930) एकांकी पश्चिमी नाट्य शैली के रूप रचना की है।

13.2 प्रस्तावना

दीपदान शीर्षक से ही यह ज्ञात होता है कि यह बहुत बड़े त्याग की ओर इंगित करता है। पन्ना धाय का पुत्र चन्दन उसके जीवन में दीपक की तरह रोशनी देने वाला होता है। वह देश प्रेम और अपने कर्तव्य को निभाने हेतु दीपदान करती है। हिंदी साहित्य मेंडॉ. रामकुमार वर्माका नाम एकांकी विधा के प्रमुख में गिना जाता है। इनकी रचनाएँ भावनात्मक गहराई, ऐतिहासिक चेतना और नाटकीयता से भरपूर होती हैं। दीपदान उनकी एक ऐसी कालजयी रचना है, जो न केवल ऐतिहासिक घटनाओं को जीवंत करती है, बल्कि बलिदान, मातृभूमि के प्रति निष्ठा और साहस को भी दर्शाती है। जो दर्शक को भाव-विभोर भी करने में सक्षम है।

यह एकांकी पन्ना धायके त्याग और वीरता की कहानी प्रस्तुत करता है, जो भारतीय इतिहास की अमर बलिदानी स्त्री रही हैं। अपने पुत्र का बलिदान देकर उन्होंने राजवंश की रक्षा की और कर्तव्य का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। यह एकांकी पाठकों को देशभक्ति, कर्तव्य और त्याग की भावना से परिचित करवाती है, साथ ही हमें यह सिखाती है कि 'कर्तव्य ही सर्वोपरि' है।

इस एकांकी को पढ़ कर आप न केवल ऐतिहासिक घटनाओं की प्रामाणिकता को समझ सकेंगे। इस एकांकी में निहित मानवीय संवेदनाओं, मातृत्व, वीरता और आदर्शवाद से प्रेरणा भी ली जा सकती है। दीपदान केवल एक एकांकी नहीं, बल्कि एक जीवंत प्रेरणा है, जो वर्तमान में भी पाठकों को प्रभावित करती है।

13.3 एकांकीकार डॉ. रामकुमार वर्मा का जीवन परिचय और उनकी रचनाएँ

डॉ. रामकुमार वर्मा युगांतकारी एकांकीकार हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा का जन्म मध्य प्रदेश के सागर जिले में 15 सितम्बर, सन् 1905 ई. को हुआ था। डॉ. रामकुमार वर्मा को हिन्दी का सुप्रसिद्ध साहित्यकार, व्यंग्यकार और हास्य कवि के रूप में जाना जाता है। उन्हें आधुनिक हिन्दी साहित्य में 'एकांकी सम्राट' का भी सम्मान प्राप्त हुआ है। रामकुमार वर्मा को हास्य और व्यंग्य दोनों ही विधाओं में रचना करने काअनुभव रहा है। उन्होंने अपने जीवन में नाटककार, कवि, समीक्षक, अध्यापक तथा हिन्दी-साहित्य के इतिहास-लेखक के रूप में अपने सभी किरदारों को पूर्णत: निभाया है। रामकुमार वर्मा के काव्य में 'रहस्यवाद' और 'छायावाद' की झलक द्रष्टव्य है। रामकुमार वर्मा की साहित्यिक

यात्रा में आप देख सकते हैं कि वह आधुनिक हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध कवि, एकांकी नाटक-लेखक और आलोचक रहे है।

रामकुमार वर्मा की रचनाएँ -

डॉ. रामकुमार वर्मा के प्रमुख एकांकी-संग्रह इस प्रकार हैं-'पृथ्वीराज की आँखें' (सन 1938 ई.), 'चारुमित्रा', 'रेशमी टाई' (सन 1941 ई.), 'सप्त-किरण', 'कौमुदी महोत्सव', 'दीपदान', 'रजत-रश्मि', 'रिमझिम', 'विभूति', 'चार ऐतिहासिक एकांकी' (सन् 1950 ई.), 'रूपरंग' (सन् 1951 ई.)।

काव्य: 'वीर हमीर' (सन् 1922 ई.), 'चित्तौड़ की चिंता' (सन् 1929 ई.), 'अंजलि' (सन् 1930 ई.), हिन्दी गीतिकाव्य (सन् 1931 ई.)।

काव्य संग्रह:'जौहर' (सन् 1941 ई.), 'अभिशाप' (सन् 1931 ई.), 'निशीथ' (सन् 1935 ई.), चित्ररेखा (सन् 1936 ई.)।

आलोचना:'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' (सन् 1939 ई.), 'साहित्य समालोचना' (सन् 1929 ई.)।

रामकुमार वर्मा का सम्पादन संग्रह: 'आधुनिक हिन्दी काव्य' (सन् 1939 ई.), कबीर पदावली (सन् 1938 ई.)।

अन्य रचनाएं: 'शिवाजी' (सन् 1943 ई.), 'कौमुदी महोत्सव' आदि।

सम्मान-

डॉ रामकुमार वर्मा को साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में अपना विशेष योगदान देने के लिए भारत सरकार द्वारा वर्ष 1963 में तीसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'पद्म भूषण' से नवाजा गया। इसके अतिरिक्त उन्हें साहित्य सेवा के लिए 'देव पुरस्कार' से भी सम्मानित किया जा चुका है। रामकुमार वर्मा रचित ''चित्ररेखा'' काव्य-संग्रह के लिए उन्हें हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार ''देवपुरस्कार'' मिला। अपने लेखन से प्रसिद्ध हुए डॉ. रामकुमार वर्मा को एकाकी संग्रह ''सप्त किरण'' के लिए अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन पुरस्कार मिला है। इसी दौर में उन्हें मध्य-प्रदेश शासन परिषद की ओर से ''विजयपर्व'' नाटक के लिए प्रथम पुरस्कार मिला है। रूसी सरकार के विशेष आमंत्रण पर मास्को विश्वविद्यालय में वह एक वर्ष तक शिक्षा का कार्य कर चुके हैं। हिन्दी एकांकी के जनक माने जाने वाले डॉ. रामकुमार वर्मा ने ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और साहित्यिक विषयों पर लगभग 150 से अधिक एकांकी लिखी हैं।

साहित्यिक परिचय-

डॉ. रामकुमार वर्मा वर्मा की रचनात्मक प्रतिभा बहुमुखी है। वह हिन्दी साहित्य के छायावादी धारा के सुप्रसिद्ध कवि, नाटककार और समालोचक रहे हैं। वह कवि और समालोचक की अपेक्षा नाटककार, विशेषरूप से एकांकीकार के रूप में अधिक लोकप्रिय और विख्यात हैं। उन्होंने सामाजिक, पौराणिक,

वैज्ञानिक और ऐतिहासिक सभी विषयों पर एकांकी लिखी हैं, परंतु ऐतिहासिक एकांकीकार के रूप में उनकी प्रतिष्ठा अद्वितीय रही है। उनकी एकांकियों में ऐतिहासिक इतिवृत्त प्रधान नहीं बल्कि ऐतिहासिक परिवेश में मानवीय संवेदना का अनावरण हुआ है। काव्य में तथ्य के साथ-साथ कल्पना का समन्वय होने पर भी इतिहास का मूल रूप विकृत नहीं हो पाया है। चरित्र-चित्रण में रामकुमार वर्मा का दृष्टिकोण आदर्शवादी रहा है।

साहित्यिक अवदान-

रामकुमार वर्मा के ध्वनि-रूपक समय-समय पर आकाशवाणी पर सफलतापूर्वक प्रकाशित किए जाते रहे हैं। विश्वविद्यालय समारोहों में अभिनय-व्यवस्था में वर्मा जी ने अपना विशेष योगदान दिया है। रंगमंच की दृष्टि से रामकुमार वर्मा ने 'बादल की मत्यु' एकांकी सन् 1930 ई. में लिखी जिसने अपार सफलता प्राप्त की। यह एकांकी वर्तमान में भी फेंटेंसी-एकांकियों में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। उनकी एकांकियों में मनोभावों का सूक्ष्म चित्रण किया गया है। उनकी लिखी सामाजिक एकांकियों में हास्य एवं व्यंग्य की स्पष्ट झलक मिलती है। उनके द्वारा लिखी ऐतिहासिक एकांकी उनकी आदर्शवादी दृष्टि के लिए सुप्रसिद्ध हैं।

डॉ. रामकुमार वर्मा अनेक वर्षों तक प्रयाग विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग में प्राध्यापक और फिर विभागाध्यक्ष रहे हैं। उन्होंने विदेशों में भी हिन्दी शिक्षण का कार्य बखूबी किया था। विदेश में मास्को में वह हिन्दी के प्रोफेसर रहे हैं। उन्होंने श्रीलंका में भारतीय साहित्य और संस्कृति का प्रसार कार्य भी किया है। भारत सरकार के द्वारा उन्हें पद्मभूषण की उपाधि से भी सम्मानित किया गया है। रामकुमार वर्मा का देहावसान 5 अक्टूबर, सन् 1990 ई. को प्रयाग में हुआ।

13.4 दीपदान एकांकी का सारांश और समीक्षा

'दीपदान' डॉ. रामकुमार वर्मा कृत ऐतिहासिक एकांकी है, जिसमें त्याग, बलिदान, देशभक्ति, कर्तव्यनिष्ठ की आदर्शमय वेगवती धारा प्रवाहित हुई हैं। डॉ. राम कुमार वर्मा द्वारा रचित एकांकी चित्तौड़ की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है। महाराणा संग्राम सिंह की मृत्यु के पश्चात उनके छोटे भाई पृथ्वीसिंह का दासी पुत्र 'बनवीर' चित्तौड़ की गद्दी पर बैठने की इच्छा रखता है। उसके हृदय में संघर्षहीन राज्य करने की इच्छा प्रबल हो जाती है। वह रात में निश्चिंत सोये हुए विक्रमादित्य की हत्या कर देता है, तथा राज्य के उत्तराधिकारी राणा सांगा के छोटे पुत्र कुंवर 'उदयसिंह' की हत्या की योजना बनाता है।

इस योजना को सफल बनाने के लिए बनवीर मयूर पक्ष नामक कुण्ड

में दीपदान के उत्सव का आयोजन असमय ही करता है। वहीं पन्ना धाय उदयसिंह की संरक्षिका है। वह बनवीर के इस षड्यन्त्र को जान जाती है और बालक उदयसिंह की रक्षा के लिए उसे उत्सव में जाने से रोक देती है। इससे बालक उदयसिंह उनसे रूठकर बिना खाये ही जमीन पर सो जाता है। कुछ रात बीत जाने पर जब पन्ना धाय अन्त:पुर की परिचारिका अर्थात दासी)सामली से विक्रमादित्य की मृत्यु का समाचार सुनती है, तब वह अत्यंत दु:खी होती है और उसका सन्देह सुदृढ़ हो जाता है।

पन्ना उदयसिंह के प्राण बचाने की चिन्ता में व्याकुल हो जाती है और इस समारोह का लाभ उठाकर दरबार के जूठे पत्तल फेंकने वाले कीरत नाम के बारी से सहायता लेकर कुँवर उदयसिंह को जूठे पत्तलों में छिपाकर महल से बाहर सकुशल भिजवा देती है और अपने पुत्र 'चन्दन' को बिना कुछ खिलाये-पिलाये कुँवर उदयसिंह के स्थान पर सुला देती है।

कुछ समय पश्चात ही बनवीर हाथ में नंगी तलवार लिये उदयसिंह के कक्ष में प्रवेश करता है। इधर-उधर की बात पूछने के पश्चात वह पन्नाधाय को जागीर देने का लालच देकर पन्ना को अपने षड्यन्त में शामिल करना चाहता है। किन्तु पन्ना उसकी बातों पर ध्यान न देकर अपने कर्तव्य पथ पर दृढ़ रहती है। अंत में पन्ना बनवीर को उलाहना देती है। पन्ना की फटकार सुन वह कुद्ध होकर बालक उदयसिंह को खोजता है और पन्ना धाय साहस के साथ तलवार उठाकर बनवीर पर आक्रमण करती है किन्तु वह वार व्यर्थ हो जाता है। सत्ता के लालच में अंधा बनवीर दौड़कर पलंग पर सोये हुए चन्दन को उदय सिंह समझकर पन्ना की आँखों के सामने तलवार से उसे मौत के घाट उतार देता है। इस प्रकार बनवीर के इस क्रूर काण्ड और पन्नाधाय के अपूर्व त्याग और बलिदान के साथ ही इस एकांकी की कथावस्तु समाप्त हो जाती है।

दीपदान एकांकी की समीक्षा-

'दीपदान' एकांकी राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत है। इसके अंतर्गत अपना कर्तव्य पालन करते हुए सर्वोच्च त्याग की भावना और कर्तव्यनिष्ठा को दर्शाया गया है। 'दीपदान' एकांकी की कथावस्तु पन्ना धाय के त्याग व बलिदान पर केन्द्रित रही है। महाराणा संग्राम सिंह की मृत्यु के पश्चात उनके छोटे भाई का दासी पुत्र बनवीर चित्तौड़ का शासक बनना चाहता है। इस सपने को साकार करने में उसकी राह का सबसे बड़ा काँटा महाराणा सांगा की हाड़ी रानी कर्मवती के बेटे महाराणा विक्रमादित्य और कुँवर उदयसिंह थे। अपने रास्ते की बाधाओं को मिटाने के लिए बनवीर दीपदान महोत्सव का आयोजन करता है, जिससे कि सभी का ध्यान उसकी ओर से हट जाये और वह विक्रमादित्य और उदयसिंह की हत्या कर सके।

कथावस्तु की दृष्टि से पन्ना धाय अपने राष्ट्र के प्रति पूर्ण रूप से ईमानदार रही है। वह महारणा सांगा के छोटे पुत्र उदयसिंह की धाय माँ है। असमय दीपदान के आयोजन से पन्ना बनवीर की योजना को समझ जाती है और सतर्क हो जाती है। उत्सव आयोजन वाले दिन जब पन्ना को यह ज्ञात होता है कि बनवीर ने महाराणा विक्रमादित्य की हत्या कर दी और अब वह उदयसिंह को भी मारने के लिए आएगा, तब पन्ना अपनी सूझ-बूझ और वफादारी का परिचय देते हुए कीरतबारी की पत्तल की टोकरी में कुँवर को छिपाकर सकुशल महल से बाहर भेज देती है। वह कुँवर उदयसिंह के स्थान पर अपने बेटे चन्दन को सुलाकर उसका मुख ढक देती है। बनवीर क्रोध में प्रवेश करता है और कुँवर उदयसिंह के धोखे में पन्ना धाय के पुत्र चन्दन की हत्या कर देता है। यह घटना पन्ना के सम्मुख होती है। पन्ना अपने मुख से उफ तक नहीं कहती। एकांकी 'दीपदान' चरित्र-चित्रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस एकांकी की मुख्य पात्र 'पन्ना' है। वह अपने खून से अधिक अपने नमक को महत्त्व देती है और त्याग करती है। वह कर्तव्यनिष्ठता, साहस, वीरता, बुद्धिमानी एवं त्याग की प्रतिमूर्ति है। 'बनवीर' एकांकी का दूसरा महत्वपूर्ण पात्र है। वास्तव में यह कह सकते है कि वह एकांकी का खलनायक है। वह महाराणा संग्राम सिंह अर्थात राणा सांगा के छोटे भाई का दासी पुत्र है। बनवीर धूर्त, लालची,षड़यंत्रकारी एवं क्रूर हैं। वह सत्ता को पाने के लिए महाराणा विक्रमादित्य की हत्या कर देता है और कुँवर उदयसिंह के धोखे में वह पन्ना धाय के पुत्र चन्दन की भी निर्ममतापूर्वक हत्या कर देता है। सामली अन्त:पुर की परिचारिका है, जो कर्तव्यनिष्ठ है। वह राजमहल में घटित होने वाले षड़यंत्र की सूचना पन्ना को देती है। अन्य पात्रों में कीरत बारी महल की जूठी पत्तल उठाने वाला है। वह भी राष्ट्र भक्ति का परिचय देते हुए चतुराई से कुँवर उदयसिंह को अपनी टोकरी में छिपाकर सकुशल महल से बाहर ले जाता है। दीपदान एकांकी एक सफल एकांकी है।

इस एकांकी का देशकाल 1536 ई. का है। यह ऐतिहासिक घटना को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करती है। इसलिए इसमें मध्ययुगीन राजपूताना वातावरण का अंकन, राजमहल के षड़यंत्र आदि का चित्रण सफलतापूर्वक हुआ है। एकांकी के संवाद सरल, प्रवाहपूर्ण, कथानक को आगे बढ़ाने वाले एवं रोचक हैं। यह एकांकी ऐतिहासिक होते हुए भी इसमें अभिनेयता के समस्त गुण विद्यमान हैं। इस एकांकी की भाषा-शैली संस्कृतनिष्ठ, प्रभावशाली और बोधगम्य है। एकांकी कला के तत्वों के आधार पर यह कह सकते हैं कि 'दीपदान' एकांकी पूर्णत: सफल एकांकी है।

'दीपदान' एकांकी में पन्ना धाय का चरित्र चित्रण-

'दीपदान' एकांकी में पन्ना धाय भारतीय नारीत्व के आदर्श स्वरूप का

प्रतीक है। उनकी मातृभक्ति, वीरता, त्याग और कर्तव्यनिष्ठा पाठकों व दर्शकों को प्रेरणा देती है। पन्ना धाय में ममता, करुणा, त्याग, कर्तव्यनिष्ठ तथा देश प्रेम का भाव कूट-कूट कर भरा हुआ है। पन्ना धाय में कर्तव्यपरायणता का उच्च भाव है। वह अपने कर्तव्य के प्रति सतत जागरूक है। जब क्रूर बनवीर राज्य को पाने की लालसा वशीभूत होकर उदय सिंह की हत्या का षड़यंत्र रचता है, तब उसकी कर्तव्यनिष्ठता जाग उठती है वह उदय सिंह की धाय है। अर्थात उसकी रक्षा करना ही उसका प्रथम कर्तव्य है। वह बड़े से बड़े प्रलोभन से भी लालच में नहीं आती है। अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिए वह अपने पुत्र चन्दन की बलि चढ़ा देती है। पन्ना धाय के चरित्र में निम्नलिखित महत्वपूर्ण विशेषताएँ दृष्टिगत होती हैं-

राजभक्ति- पन्ना धाय में अद्वितीय राजभक्ति विद्यमान है। राजघराने के सभी लोग यह भूल जाते है कि कुँवर उदय सिंह राज्य का वास्तविक उत्तराधिकारी है। परन्तु उसकी राजभक्ति सदैव सजग रहती है वह महाराणा संग्राम का नमक खाकर उसे धोखा नहीं दे सकती है।

साहसी-एकांकी की मुख्य पात्र पन्ना धीर, साहसी तथा निर्भीक राजपूत वीरांगना है। वह कुँवर उदय सिंह को नृत्य प्रेमी न बना कर युद्ध प्रेमी के रूप में देखना चाहती है।

अपूर्व त्याग- पन्ना का अपूर्व परित्याग भारतीय इसिहास का अभूतपूर्व बलिदान है। अपने पुत्र चन्दन का बलिदान अपनी इच्छा से कर वह अपने स्वामी के पुत्र की रक्षा करना चाहती है।

विवेक और दूरदर्शिता- पन्ना में विवेक और दूरदर्शिता विद्यमान है। वह भारतीय इतिहास का अद्वितीय उत्सर्ग है। अपने पुत्र का बलिदान अपनी इच्छा से करने पर वह अपने स्वामी के पुत्र की रक्षा करती है। वास्तव में पन्ना धाय कर्तव्यनिष्ठ, विवेकी, देश प्रेमी, राजभक्ति, समर्पण आदि गुणों से युक्त भारतीय नारी है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-:1. दीपदान एकांकी के रचयिता कौन है? यह किस प्रकार की एकांकी है?

प्रश्न-:2. दीपदान की कथा किस पर आधारित है? इसके मुख्य पात्रों में कौन-कौन हैं?

पश्न-:3. दीपदान एकांकी में मातृत्व और कर्तव्य का समन्वय कैसे दिखाया गया है?

13.5 एकांकी के तत्वों पर दीपदान का विश्लेषण

1. कथानक–इस एकांकी काकथानक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। इस एकांकी में पन्ना धायका त्याग और बलिदान प्रमुख विषय है। एकांकीकार ने इसे प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है, जिससे नाटक में भावनात्मक गहराई बनी रहती है।

2. पात्र–पन्ना धायनाटक की नायिका, जो अपने पुत्र का बलिदान देकर कुंवर उदयसिंह की रक्षा करती है। उनका चरित्रत्याग, निष्ठा और मातृशक्ति का प्रतीक है। कुंवर उदयसिंह चित्तौड़ के सिंहासन के उत्तराधिकारी, जिनकी रक्षा करना पन्ना धाय का कर्तव्य है। चंदनपन्ना धाय का पुत्र, जो कर्तव्य की वेदी पर बलि चड़ जाता है। बनवीर एकांकी का प्रतिनायक, जो सत्ता हथियाने के लिए षड़यंत्र की योजना बनाता है।

3. संवाद योजना–नाटक के संवादसहज–सरल, गंभीरभाव, प्रभावशाली और भावनात्मक हैं। पन्ना धाय के संवादों में कर्तव्यनिष्ठा और मातृत्वस्वरूप स्पष्ट रूपसे झलकता है। संवाद संक्षिप्त लेकिन गहरे अर्थ को व्यक्त करने वाले हैं, जो दर्शकों पर प्रभाव छोड़ते हैं।

4. भाषा–एकांकी की भाषा साहित्यिक और प्रभावशाली है। इस एकांकी में हिंदी भाषा की सौंदर्यपूर्णता और भावात्मकता स्पष्ट देखने को मिलती है। इसमें अलंकारों का सुंदर प्रयोग किया गया है, जिससे संवाद अधिक प्रभावशाली होते हैं।

5. उद्देश्य–इस एकांकी का उद्देश्यत्याग, राष्ट्रप्रेम और कर्तव्य निष्ठाको दर्शक के प्रति उजागर करना है। यह पाठकों और दर्शकों को साहस और निष्ठा की प्रेरणा देता है। लेखक ने इसे केवल मनोरंजन मात्र ही नहीं, बल्कि ऐतिहासिक जागरूकता बढ़ाने हेतु लिखा है।

6. नाटकीयता–संघर्ष में पन्ना का आंतरिक संघर्ष और बनवीर की क्रूरता नाटक को गहनता प्रदान करती है। चरमोत्कर्ष में पन्ना धाय जब अपने पुत्र का बलिदान देती है, वह नाटक का सबसे मार्मिक और प्रभावशाली दृश्य है। इस एकांकी को मंचित करते समय प्रकाश, भाव–भंगिमाएँ और दृश्यों का चयन महत्वपूर्ण होता है।

7. सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भ–यह एकांकी राजस्थान के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भों को प्रस्तुत करती है। इसके अंतर्गत तत्कालीन समाज की नैतिकता, नारी शक्ति और राजनीति संदर्भों को चित्रित किया गया है।

इस प्रकार, 'दीपदान' एकांकी में सभी एकांकी के आवश्यक तत्व विद्यमान हैं, जो इसे एक प्रभावशाली और कालजयी रचना बनाते हैं।



अपनी प्रगति जाँचे

पश्न 4: इस एकांकी का ऐतिहासिक संदर्भ क्या है?

प्रश्न 5: पन्ना धाय की दूरदर्शिता और विवेक का उदाहरण दीजिए।

प्रश्न 6: दीपदान एकांकी का उद्देश्य पाठक/दर्शक तक क्या संदेश पहुँचाना है?

नाट्य साहित्य में डॉ. रामकुमार वर्माका नाम एकांकी विधा के प्रमुख रचनाकारों में गिना जाता है। रामकुमार वर्मा द्वारा एकांकी के साथ-साथ अनेक विशिष्ट कृतियों की रचना की गई है। रामकुमार वर्मा की रचनाएँ भावनात्मक गहराई, ऐतिहासिक चेतना और नाटकीयता से भरपूर होती हैं। 'दीपदान' उनकी एक कालजयी रचना है, जोबलिदान, समर्पण, कर्तव्य और मातृभूमि के प्रति निष्ठा को प्रस्तुत करती है।

इस नाटक का मूल विषय एकांकी की मुख्य पात्र पन्ना धायके त्याग और बलिदान पर आधारित है। जब बनवीर सत्ता हड़ पने के लिए कुंवर उदयसिंह को मारने का षड़यंत्र रचता है, तब पन्ना धाय सकुशल कुँवर उदयसिंह को महल से बाहर भिजवा देती है और अपने पुत्रचंदनका बलिदान देकर राजवंश की रक्षा करती है। एकांकी का कथानक आरंभ से अंत तक दर्शकों को बांधे रखने में सफल सिद्ध होता है। एकांकी की घटना चित्तौड़ दुर्गकी पृष्ठभूमि में घटित होती हैं। इसमें एक प्रमुख संघर्ष दिखाई देता है- राजवंश की रक्षा बनाम व्यक्तिगत बलिदान।

- आरंभ: बनवीर का षड़यंत्र कुंवर उदयसिंह को मारने के लिए।
- विकास: पन्ना धाय की रणनीति और कठिन निर्णय।
- चरमोत्कर्ष: पन्ना के पुत्र चंदन का बलिदान।
- परिणति: कुंवर उदयसिंह की सुरक्षा और राजवंश की रक्षा।



13.6 सारांश

एकांकी में घटनाएँ संगठित और प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत की गई हैं, जिससे पाठक भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है। एकांकी के पात्रों में पन्ना धाय जोमातृत्व, कर्तव्य और राष्ट्रभक्ति का प्रतीक है। बनवीर जोसत्ता के लोभ में क्रूरता की चरम सीमा तक जाने वाला प्रतिनायक है। चंदनवह वीर पुत्र, जो अपने कर्तव्य के लिए बलिदान देता है।कुंवर उदयसिंह चित्तौड़ के सिंहासन का उत्तराधिकारी है। अन्य पात्र में सामली और कीरत बारी हैं। प्रत्येक पात्र अपने

संवादों और क्रियाओं के माध्यम से एकांकी को भावनात्मक एवं नाटकीय ऊँचाइयों तक पहुँचाता है। एकांकी के संवादसंक्षिप्त, सारगर्भित और प्रभावशाली हैं। एकांकी की भाषा शैली स्पष्ट और प्रभावशाली रूप से पाठक को आकर्षित व भावविभोर कर देती है। एकांकीकार ने संक्षिप्त लेकिन अर्थपूर्ण वाक्योंका प्रयोग किया है। एकांकी में अलंकारों और मुहावरों का सुंदर प्रयोग किया गया है। इस एकांकी का उद्देश्य पाठक को यह दर्शाता है कि कर्तव्य और बलिदान ही सच्ची निष्ठा का प्रतीक हैं। व्यक्ति का राष्ट्र और परिवार के प्रति समर्पण आवश्यक है। सत्ता का लोभ समाज में विनाशकारी परिणामला सकता है। इस इकाई का अध्ययन हमेंत्याग, कर्तव्य और राष्ट्रप्रेम की मूल भावना पर ध्यान केन्द्रित करना सिखाता है। 'दीपदान' एक ऐसी एकांकी है, जिस में सत्ता, बलिदान और मातृभूमि के प्रति समर्पणकी भावना को मार्मिक रूप से प्रस्तुत किया गया है। यह एकांकी पाठकों को कर्तव्य और बलिदान का महत्व समझाती है।

13.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तरः- 'दीपदान' एकांकी के रचयिता डॉ. रामकुमार वर्मा है। यह एक ऐतिहासिक एकांकी है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

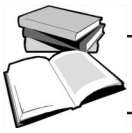
प्रश्न 2 का उत्तरः- दीपदान की कथा पन्ना धायके त्याग और बलिदान पर आधारित है। यह नाटक चित्तौड़ दुर्ग की पृष्ठभूमि में घटित होती है और राजवंश की रक्षाके लिए किए गए बलिदान को उजागर करती है। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तरः- पन्ना धाय अपने पुत्र की हत्या सहन करके कर्तव्य और राष्ट्रप्रेम को प्राथमिकता देती है। यह दृश्य दर्शकों को मातृत्व और कर्तव्य के अद्वितीय समन्वय का अनुभव कराता है। अधिक विस्तार जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तरः- यह चित्तौड़ दुर्ग, 1536 ई. के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसमें तत्कालीन राजवंश, षड़यंत्र और सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश को प्रभावशाली ढंग से दर्शाया गया है। और अधिक जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 5 का उत्तरः- उसने बालक उदयसिंह को सुरक्षित निकालने के लिए अपने पुत्र चन्दन को बलिदान किया। यह दृष्टांत उसकी दूरदर्शिता, विवेक और कर्तव्यनिष्ठा को स्पष्ट करता है। इसके बारे में अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर:- कर्तव्य, त्याग और राष्ट्रप्रेम ही सर्वोच्च मूल्य हैं। यह एकांकी दर्शकों को साहस, निष्ठा और उच्च आदर्शों की प्रेरणा प्रदान करती है। इस विषय पर और जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।



13.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1. वर्मा, रामकुमार. (1938). पृथ्वीराज की आँखें. इलाहाबाद: रामनारायण लाल प्रकाशन।
2. वर्मा, रामकुमार. (1941). जौहर. प्रयाग: हिंदी साहित्य मंडल।
3. वर्मा, रामकुमार. (1939). हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास. दिल्ली: साहित्य सेवा।
4. वर्मा, रामकुमार. (1950). चार ऐतिहासिक एकांकी. भोपाल: ज्ञान प्रकाशन।
5. गौड़, ग. (1955). आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन. आगरा: संस्कृति प्रकाशन।
6. वर्मा, रामकुमार. (1941). दीपदान एकांकी. प्रयाग: हिंदी साहित्य सभा।
7. दीक्षित, त्रिलोकी नारायण. (1960). एकांकी कला. इलाहाबाद: रामनारायण लाल प्रकाशन।
8. वर्मा, रामकुमार. (1951). रूपरंग. भोपाल: ज्ञान प्रकाशन।
9. वर्मा, रामकुमार. (1936). चित्ररेखा. प्रयाग: हिंदी साहित्य परिषद।
10. वर्मा, रामकुमार. (1943). शिवाजी. मुंबई: साहित्य सेवा।



13.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. एकांकी 'दीपदान' के पात्रों का परिचय दीजिए?
2. ''महल में धाय माँ अरावली पहाड़ बनकर बैठ गई है''- कथन के आधार पर संबंधित पात्र का चरित्र-चित्रण करें।
3. 'रक्त तो तलवार की शोमा है'- कथन के आधार पर बनवीर का चरित्र-चित्रण करें।
4. एकांकी के तत्वों के आधार पर 'दीपदान' एकांकी का विश्लेषण कीजिए ।
5. पन्ना धाय के बलिदान का पाठक/दर्शक पर क्या प्रभाव पड़ता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. एकांकी 'दीपदान' के माध्यम से डॉ. रामकुमार वर्मा क्या संदेश दे रहे हैं?
2. रचयिता डॉ. रामकुमार वर्मा के जीवन परिचय का संक्षिप्त वर्णन दीजिए।
3. 'दीपदान' एकांकी की विषय सार्थकता पर दृष्टि डालिए।
4. दीपदान में ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भ कैसे प्रस्तुत हुए हैं?
5. एकांकी में संवाद योजना और भाषा शैली का महत्व स्पष्ट कीजिए।

******

इकाई - 14 सूखी डाली

एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क का परिचय, एकांकी का सारांश और समीक्षा

14.1 उद्देश्य
14.2 प्रस्तावना
14.3 एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क का जीवन परिचय और उनकी रचनाएँ
14.4 सूखी डाली एकांकी का सारांश और समीक्षा
14.5 एकांकी तत्वों के आधार परसूखी डाली का विश्लेषण
14.6 सारांश
14.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
14.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
14.9 अभ्यास पश्न

14.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- इस इकाई के माध्यम से आप उपेंद्रनाथ अश्क कृत 'सूखी डाली' एकांकी की कथावस्तु और सामाजिक पृष्ठभूमि का ज्ञान प्राप्त होगा।
- आप संयुक्त परिवार की जटिलताओं और पारिवारिक संबंधों की मजबूती के महत्व को पहचान सकेंगे।
- एकांकी के माध्यम से पारिवारिक संघर्षों के समाधान में संवाद और समझदारी की भूमिका को समझ पाएंगे।
- नाटक के अध्ययन से सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से परिवार की महत्ता और उसके मूल भाव को समझने का अवसर मिलेगा।
- पाठक/दर्शक में सहनशीलता, अपनापन और पारिवारिक एकता के मूल्य विकसित होंगे।
- इस एकांकी के माध्यम से आधुनिक समय में संयुक्त परिवार प्रणाली की प्रासंगिकता और उसके संरक्षण का महत्व स्पष्ट होगा।



महत्वपूर्ण बिंदु:-
उपेंद्रनाथ अश्क की कहानियों और उपन्यासों की भाषा भी प्रेमचंद की तरह सीधी और सरल है। वह सर्वथा यथार्थ के करीब हैं।

14.2 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के महान रचनाकार उपेंद्रनाथ अश्क ने सामाजिक यथार्थ और पारिवारिक जीवन को गहराई से प्रस्तुत किया है। उनकी नाट्य रचनाओं में संयुक्त परिवार, मानवीय संवेदनाएँ और सामाजिक संघर्ष प्रमुख विषय रहे हैं। सूखी डाली एकांकी पारिवारिक जीवन की उन परिस्थितियों को दर्शाती है, जहाँ परिवार में नया सदस्य आने पर समायोजन की चुनौती उत्पन्न होती है। यह एकांकीए में यह शिक्षा देती हैं कि समझदारी और आपसी तालमेल से परिवार को मजबूत किया जा सकता है। एकांकी का सार यह है कि परिवार से अलग होकर कोई भी व्यक्ति ''सूखी डाली'' की तरह निर्जीव हो जाता है। यह एकांकी हमें रिश्तों में सामंजस्य बनाए रखने की महत्वपूर्ण शिक्षा प्रदान करती है।

14.3 एकांकीकार उपेंद्रनाथ अश्क का जीवन परिचय और उनकी रचनाएँ

हिन्दी साहित्य में महान एकांकीकार उपेन्द्रनाथ अश्क, एक प्रसिद्ध नाटककार, उपन्यासकार एवं एकांकीकार थे। इनका जन्म 14 दिसम्बर, सन् 1910 ईस्वी को पंजाब के जालन्धर शहर में मध्यवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम पण्डित माधोराम था, वह एक स्टेशन मास्टर थे। इनकी माता का नाम बसंती देवी था। उपेन्द्रनाथ अश्क का आरंभिक जीवन गंभीर समस्याओं से घिरा रहा। अश्क ने अस्वस्थ में राजयक्ष्मा जैसे रोग से संघर्ष किया। इन्होंने डी. ए. वी. कॉलेज जालन्धर से बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1936 ई. में ये एलएल. बी. की परीक्षा में विशेष योग्यता लेकर उत्तीर्ण हुए। इसके पश्चात इन्होंने लाहौर में पत्रकारिता भी की।

उपेन्द्रनाथ अश्क ने वर्ष सन 1939–41 ई. तक 'प्रीत लड़ी' के उर्दू–हिन्दी संस्करणों का सम्पादन किया। सन् 1941– 44 ई. तक ऑल इण्डिया रेडियो दिल्ली में नाटककार और हिन्दी सलाहकार के रूप में कार्य किया। सन् 1944 ई. में 'सैनिक समाचार' के हिन्दी संस्करण का सम्पादन कार्य किया। सन् 1944 – 46 ई. के दौरान 'फिल्मिस्तान' में पटकथा और गीत लिखने के साथ–साथ अभिनय भी करते रहेथे। सन् 1947 ई. में वह यक्ष्मा रोग से ग्रस्त होकर पंचगनी सेनेटोरियम में रहे थे। सन् 1948 ई.में रोग से मुक्त होकर इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश में स्थायी निवास बनाया और पूर्ण रूप से लेखन कार्य में जुट गये। सन् 1951 ई. में प्रगतिशील लेखक संघ के स्वागताध्यक्ष भी रहे।

सन् 1965 ई. में केन्द्रीय 'संगीत नाटक अकादमी' ने उपेन्द्रनाथ अश्क को सम्मानित किया गया। सन् 1972 ई. में 'सोवियत लैण्ड नेहरू पुरस्कार' से भी सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त सन् 1974 ई. में उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन में 'साहित्य वारिधि' की उपाधि दी। सन् 1980 ई. में ये आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के मानद प्रोड्यूसर रहे। सन् 1956-83 ई. के बीच रूस, इंग्लैण्ड, जर्मनी, हॉलैण्ड, मॉरिशस और पाकिस्तान की यात्राएँ भी सम्पन्न करी। 19 जनवरी, सन् 1996 ई. को इस महान् साहित्यकार का निधन हो गया था।

उपेन्द्रनाथ अश्क की लेखन शक्ति प्रौढ़ और भावनात्मक पूर्ण है। इनके द्वारा उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, कविता, निबन्ध, संस्मरण आदि सभी क्षेत्रों में प्रचुर साहित्य का निर्माण किया है,परंतु इनकी उपलब्धि नाटक, एकांकी, उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में विशेष महत्त्वपूर्ण है। नाटक के प्रति इनकी रुचि बचपन से ही रही थी। इनके प्रसिद्ध नाटकों में 'बड़े खिलाड़ी', 'अंजो दीदी', 'अलग-अलग रास्ते', 'जय-पराजय', 'आदि मार्ग', 'पैंतरे', 'छठा बेटा', 'स्वर्ग की झलक', 'भँवर', 'अन्धी गली', 'मेरा नाम बिएट्रिस है' आदि हैं।

इनकी प्रमुख एकांकियों में'सूखी डाली', 'पर्दा उठाओ-पर्दा गिराओ', 'चरवाहे', 'तौलिये', 'चिलमन', 'कइसा साब कइसी आया', 'मैमूना', 'मस्केबाजी का स्वर्ग', 'कस्बे का क्रिकेट क्लब का उद्घाटन', 'चुम्बक', 'अधिकार का रक्षक', 'तूफान से पहले', 'लक्ष्मी का स्वागत', 'किसकी बात', 'पापी', 'दो कैप्टन', 'गुंजलक', 'नानक इस संसार में' आदि शामिल हैं।

उपेन्द्रनाथ अश्क के काव्य-संग्रह में 'एक दिन आकाश ने कहा','प्रात: प्रदीप','दीप जलेगा','बरगद की बेटी','उर्मि्मयां','रिजपर (अपूर्ण) आदि रचनाएँ है।

उपेन्द्रनाथ अश्क की कहानियां '70 श्रेष्ठ कहानियां','काले साहब', 'पिंजरा','दूरदर्शी लोग' आदि रचनाएँ है।

उपेन्द्रनाथ अश्क के संस्मरणों में 'मण्टो मेरा दुश्मन' और 'फिल्मी जीवन की झलकियां' आदि।

उपेन्द्रनाथ अश्क की आलोचनात्मक कृतियों में 'अन्वेषण का से सहयात्रा','हिंदी कहानी-एक अंतरंग परिचय','उपेन्द्रनाथ का साहित्यिक परिचय' आदि हैं।

साहित्यिक अवदान- 'अश्क' जी ने मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता से किया है। इन्होंने सामाजिक और व्यक्तिगत दुर्बलताओं पर प्रहार करने वाले व्यंग्य और प्रहसन एकांकी भी लिखे हैं। इनमें चरित्र-चित्रण की मनोवैज्ञानिक

गहराई रहती है। रंगमंच की दृष्टि से अश्क जी के एकांकी बहुत सफल हैं। वे प्राय: जीवन की अति साधारण और परिचित समस्याओं-घटनाओं पर निर्मित होते हैं और बिना कल्पना का सहारा लिये ही मन में उतर जाते हैं। इनके संवाद आडम्बरहीन, चुस्त और सहज होते हैं। उनमें बोलचाल की सहजता, प्रवाह, आंचलिकता और पात्र की अनुकूलता रहती है।

उपेन्द्रनाथ अश्क जी ने हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में कहा था कि ''मैं 1926 से 1946 ई. तक लगभग 20 वर्ष उर्दू में लिखता रहा हूँ। जब सन् 1933-34 ई. में मैंने उर्दू के साथ-साथ हिन्दी में भी लिखना शुरू किया, तो मुझे भाषा का कोई ज्ञान नहीं था। लेकिन सन् 1947 ई. तक तो मैं अपनी रचनाओं के पहले मसौदे उर्दू ही में तैयार करता रहा विशेषकर कहानियों और एकांकियों में।''

14.4 सूखी डाली एकांकी का सारांश और समीक्षा

उपेन्द्रनाथ अश्क के एकांकी सूखी डाली दो पीड़ियों के भावों और विचारों की टकराहट को दर्शाकर पाठकों, दर्शकों को संयुक्त परिवार का महत्व समझाया गया है। बिखरते परिवारों को समेटने की प्रेरणा भी दी गई है। इसके माध्यम से उपेन्द्रनाथ अश्क ने टूटते व एकल परिवार की समस्या को ध्यान में रख कर इस एकांकी की रचना की है। इस एकांकी में इंदु पात्र का चरित्र ऐसी महिला का है जो पति और परिवार के बीच फंसी हुई है। एकांकी में मोहन का चरित्र एक ईर्ष्यालु और नकारात्मक व्यक्ति का है, जो परिवार में कलेश और कलह पैदा करता है। 'सूखी डाली' एकांकी की मार्मिक कहानी है जो हमें परिवार के महत्व और रिश्तों की मजबूती के बारे में सोचने पर मजबूर करती है।

सूखी डाली एकांकी का सारांश

'सूखी डाली' हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध एकांकीकार उपेन्द्रनाथ अश्क द्वारा लिखित एक सामाजिक एकांकी है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि संयुक्त परिवार को बनाए रखने के लिए घर के मुखिया को समझदारी से काम लेना पड़ता है। हालांकि इस एकांकी में एक परिवार की कथा है, किन्तु इस संयुक्त परिवार के माध्यम से उपेन्द्रनाथ अश्क ने देश की अखण्डता का संदेश प्रतीकात्मक शैली में दिया है।

एकांकी में दादा मूलराज का परिवार एक बड़ा परिवार है, पर वह समस्त परिवार को एक इकाई के रूप में उसी प्रकार बांधे हुए हैं, जैसे आँगन में खड़ा यह विशाल 'वट वृक्ष' अपनी लम्बी-लम्बी डालियों और घने पत्तों से छाते की भाँति धरती को सुशोभित किए हुए है। दादा मूलराज 72 वर्ष के बुजुर्ग हैं। सन्

1914 ई. में उनका बड़ा बेटा प्रथम विश्व युद्ध में सरकार की ओर से लड़ते-लड़ते शहीद हुआ था। सरकार की तरफ से दादा मूलराज को एक मुरब्बा जमीन दी गई थी। अपने साहस, परिश्रम एवं दूरदर्शिता से उन्होंने एक मुरब्बे जमीन से दस मुरब्बे जमीन कर ली है। इतना ही नहीं उन्होंने डेयरी फार्म एवं चीनी कारखाना भी खोल लिया है, जिसे उनके बेटे और पोते संभालते हैं। उनके सबसे छोटे पोटे का नाम परेश है। वह अभी-अभी नायब तहसीलदार होकर इसी कस्बे में नियुक्त हुआ है, जिससे उनके परिवार का सम्मान और भी बढ़ा है। परेश का विवाह लाहौर के प्रतिष्ठित कुल की सुशिक्षित ग्रेजुएट कन्या 'बेला' से हुआ है। दादा मूलराज के दो बेटे और तीन बहुएँ हैं। एकांकी में बहुओं को बड़ी भाभी, मँझली भाभी एवं छोटी भाभी कहा जाता है। इस परिवार में तीन पौत्र वधुएँ भी हैं जिन्हें क्रमशः बड़ी बहू, मँझली बहू और छोटी बहू कहा गया है। छोटी बहू का नाम 'बेला' है, वह 'परेश' की पत्नी है। पौत्री इन्दु बेला की ननद है। एकांकी में नाम न देकर छोटी, मंझली, बड़ी का सहारा लिया है। सबसे छोटी बहू 'बेला' पढ़ी लिखी सुशिक्षित बहू है। उसे ब्याह कर इस परिवार में आए अधिक दिन नहीं हुए। यह अच्छा नहीं लगता कि उसकी भाभी हर बात में अपने मायके का बखान करे। बेला ने जब इन्दु को नौकरानी रजवा के बारे में बुरा-भला कहा तो इन्दु ने भी ताना मारा कि नोकर से भी काम लेने की तमीज होनी चाहिए। बेला को उसकी यह बात बहुत बुरी लगी। दूसरी ओर इन्दु ने अपनी माँ से भी अपनी भाभी की बुराई की।

'सूखी डाली' एकांकी के दूसरे दृश्य में कर्मचन्द, दादा मूलराज से कहते हैं कि अब हमारा परिवार एक नहीं रह पाएगा क्योंकि परेश की बहू बेला को साथ रहने में कष्ट है। दादा मूलराज ने बात समझ ली और कहा कि ''यदि हल्की सी खरोंच पर दवाई न लगाई जाए तो वह घाव बन जाती है। फिर वह मरहम से भी ठीक नहीं होता। यदि कोई शिकायत थी तो उसे मिटा देना चाहिए था।'' दादा मूलराज ने घर के सभी सदस्यों को अपने पास बुलाया और कहा कि ''बेला का मन यहाँ नहीं लग रहा तो उसके दोषी हम सब हैं। वह पढ़ी-लिखी है, हमें चाहिए कि उसकी योग्यता का लाभ उठावें। उसे वही आदर-सत्कार मिले जो उसे अपने घर में प्राप्त था। सब लोग उसका कहना मानें। उसका काम तुम लोग बाँट लो, उसे पढ़ने का अवसर दो। उसे अनुभव ही न हो कि वह दूसरे वातावरण में आई है।''

परिवार के सभी सदस्यों ने दादाजी की बात को मानकर बेला को आदर देना प्रारम्भ कर दिया, उसे कोई भी काम नहीं करने देता। यह स्थिति भी बेला के लिए असह्य हो गयी, जिसे वह समझ नहीं पा रही थी। इन्दु ने भी अपनी भाभी बेला को यह बता दिया कि ''ऐसा दादा जी की आज्ञा से हो रहा है।''

बेला ने इन्दु से कहा कि उसे भाभी जी न कहकर केवल भाभी कहा करे और दादा जी से कहा कि ''आप पेड़ से किसी डाली का टूटकर अलग होना पसन्द नहीं करते पर क्या आप यह चाहेंगे कि डाली पेड़ से लगी-लगी सूख जाए। मुझे मान-सम्मान, आदर नहीं चाहिए बस बराबरी का बर्ताव चाहिए। कोई पराएपन का व्यवहार न करे तभी में इस घर में रच-बस पाऊँगी।'' समस्या का हल मिल चुका था। परिवार ने बेला को पूर्णत: एक नए सदस्य के रूप में अपना लिया था और वह भी इस विशाल वट वृक्ष की एक नई डाली बन गयी।

'सूखी डाली' एकांकी की समीक्षा:

एकांकी 'सूखी डाली' में संयुक्त परिवार की विशेषताओं को प्रभावपूर्ण दर्शाया गया है। एकांकीकार उपेन्द्रनाथ अश्क ने यह स्पष्ट किया है कि ''संयुक्त परिवार तभी चल सकता है जब इसके मुखिया के निर्णय विवेकपूर्ण होते हैं।'' इस एकांकी की कथावस्तु रोचक एवं उद्देश्यपूर्ण है। परेश की पत्नी बेला परिवार की सबसे छोटी बहू है। वह संयुक्त परिवार में ठीक प्रकार से सामंजस्य नहीं बैठा पा रही है। परिवार के सभी सदस्यों और उसके मध्य खिंचाव है। बेला का पति परेश दादा मूलरज से इस खिंचाव की बात करता है। वह दादाजी से अपनी परेशानी को भी बताता है। दादा मूलराज परिवार के सभी सदस्यों को बेला का सम्मान करने की बात कहते हैं। दादा जी के समझाने पर सभी सदस्य बेला को अतिरिक्त सम्मान देने लगते हैं। बेला परिवार के लोगों के इस बदले व्यवहार से आश्चर्य चकित हो जाती है। वह अपने को अलग-थलग सा महसूस करती है। वह दादा मूलराज से कहती है कि ''वट वृक्ष की सूखी डाली बनी रहना नहीं चाहती है।'' वह अपने विचारों हेतु दादाजी से क्षमा माँगती है और दादाजी का संयुक्त परिवार टूटने से बच जाता है। एकांकी सार्थक कथानक और उचित संदेश से युक्त है।

इस एकांकी में पात्रों की संख्या अधिक है परंतु प्रमुख पात्र सीमित है। दादा मूलराज, परेश, कर्मचंद, बड़ी भाभी, मंझली भाभी, छोटी भाभी, बड़ी बहू, मंझली बहू, छोटी बहू, इन्दु, रजवा, भाषी, जगदीश, मल्लू इसके पात्र हैं। पात्रों का चरित्र-चित्रण भलीभाँति हुआ है। वट वृक्ष की जड़ों की भांति दादा मूलराज परिवार के मुखिया हैं। वह विवेकशील और समझदार व परिवार को एकजुट रखने वाले हैं। बेला परिवार की सबसे छोटी बहू है। वह प्रारम्भ में परिवार के साथ सामंजस्य नहीं रख पाती है। बाद में उसे अपनी भूल का अहसास होता है। परेश एक समझदार और संकोची व्यक्ति है। वह अत्यंत सभ्य है, कि न तो अपने परिवार से कुछ कहता है और न ही वह बेला से ही कुछ कह पाता है। इन्दु परिवार की छोटी बेटी है। वह अपनी छोटी भाभी से खुश नहीं रहती

और उसकी निंदा करती है। दादा मूलराज के समझाने पर वह समझ जाती है। बेला की सास समझदार महिला हैं। पात्रों का चरित्र-चित्रण एकांकी में सफलतापूर्वक हुआ है, जो प्रत्येक स्थिति को दर्शक के सम्मुख प्रस्तुत करने में सक्षम है।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-:1. एकांकी के पहले दृश्य में इंदु बिफरी हुई क्यों दिखाई देती है?

प्रश्न-:2. कर्मचंद ने दादा जी को छोटी बहु बेला के विषय में क्या बताया?

प्रश्न-:3. 'सूखी डाली' एकांकी में दादा मूलराज का चरित्र कैसे प्रस्तुत किया गया है?

14.5 एकांकी तत्वों के आधार पर सूखी डाली का विश्लेषण

''सूखी डाली'' उपेन्द्रनाथ अश्क द्वारा रचित एक प्रसिद्ध सामाजिक एकांकी है, जो संयुक्त परिवार की जटिलताओं और पारिवारिक संबंधों की गहराई को दर्शाती है। इस एकांकी का विश्लेषण इसके प्रमुख तत्वों के आधार पर किया जा सकता है:

1. विषयवस्तु या कथानक- यह एकांकी तीन दृश्यों में विभक्त परिवार में आई समस्या और उसके समाधान तक यात्रा करती है। उपेन्द्रनाथ अश्क कहते है कि ''मानव प्रगति के इस युग में, जब व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को अराजकता की हद तक महत्व दिया जाता है और तानाशाही को'' सभ्य ''समाज में अत्यंत निंदनीय माना जाता है, दादा मूल राज अपने समस्त कुटुंब को एक यूनिट बनाए, उस पर पूर्णरुओ से अपना प्रभुत्व जमाए, उस महान बरगद की तरह अटल खड़े हैं, जिसकी लंबी-लंबी डलियाँ उनके आँगन में एक बड़े छाते की तरह धरती को आच्छादित किए हुए, वर्षों से तूफानों और आंधीयों का सामना किए जा रही हैं।'' इस प्रकार यह एकांकी संयुक्त परिवार की संरचना, उसमें आने वाली समस्याओं और पारिवारिक संबंधों की मजबूती को दर्शाती है। इसमें यह दर्शाया गया है कि परिवार के मुखिया को समझदारी और धैर्य से काम लेना चाहिए ताकि संयुक्त परिवार एकजुट बना रहे।

2. चरित्र चित्रण- एकांकी में पात्र योजना अत्यंत आवश्यक तत्व है जो पाठ को अर्थात कथा को आगे बड़ाते हैं। एकांकी में नाटक की भांति सीमित पात्र होते हैं परंतु उपेन्द्रनाथ अश्क ने इस एकांकी में ठीक-ठाक पात्र लिए हैं।

इसके बावजूद इसकी संवाद योजना बेजोड़ है। जो इसे महत्वपूर्ण और सफल एकांकी के रूप में स्थापित करने में सफलता प्राप्त करते हैं। दादा मूलराज संयुक्त परिवार के मुखिया है, जो अपने परिवार को एक वट वृक्ष की भांति संगठित रखने का प्रयास करते हैं। बेला आधुनिक विचारों वाली नई बहू व परेश की पत्नी है, जो परिवार में नई व्यवस्था लाने की कोशिश करती है। इंदुपरिवार की छोटी बेटी है, जो पारंपरिक और आधुनिक विचारों के बीच संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती है। परेशएक ईर्ष्यालु और नकारात्मक व्यक्ति, जो परिवार में कलह उत्पन्न करता है।

3. संवाद- एकांकी की संवाद योजना प्रभावपूर्ण है। जो एकांकी के प्रत्येक पात्र के भावों को सफलपूर्वक प्रस्तुत करते हैं। संवाद सहज, प्रभावशाली और पात्रों की मन: स्थिति को व्यक्त करने वाले हैं। यह पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं को उजागर करते हैं और पाठकों को भावनात्मक रूप से आराम से अंत तक जोड़े रखते हैं।

4. प्रतीकात्मकता- इस एकांकी में ''वट वृक्ष'' संयुक्त परिवार का प्रतीक है। जिस प्रकार पेड़ की एक भी डाली टूटकर अलग होने पर सूख जाती है, वैसे ही परिवार से अलग हुआ सदस्य दु:खी रहता है। एकांकी में इस संदेश को फलप्रद रूप से प्रस्तुत किया है।

5. संदेश- ''सूखी डाली'' पाठक और दर्शक को यह संदेश देती है कि परिवार में सामंजस्य बनाए रखने के लिए सभी को एक-दूसरे की भावनाओं को समझना चाहिए। यह एकांकी पारिवारिक मूल्यों और रिश्तों की अहमियत को उजागर करती है। यह एकांकी न केवल पारिवारिक जीवन की वास्तविकताओं को दर्शाती है, बल्कि समाज में संयुक्त परिवार की आवश्यकता और उसकी चुनौतियों पर भी प्रकाश डालती है।

''सूखी डाली'' एकांकी का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा है, क्योंकि यह संयुक्त परिवार की जटिलताओं और पारिवारिक मूल्यों को उजागर करती है। इस एकांकी ने समाज में कई प्रभाव डाले हैं जैसे: 1. संयुक्त परिवार की महत्ता को बढ़ावा,यह एकांकी संयुक्त परिवार की विशेषताओं को दर्शाती है और यह संदेश प्रेषित करती है कि परिवार में सामंजस्य बनाए रखने के लिए सभी को एक-दूसरे की भावनाओं को समझना चाहिए। 2. नवीन और पारंपरिक विचारों का संघर्ष,इस एकांकी में आधुनिक विचारों वाली नई पीढ़ी और पारंपरिक मूल्यों को मानने वाली पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष को दर्शाया गया है। इससे समाज में यह चर्चा आरंभ हुई कि किस प्रकार दोनों विचारधाराओं के बीच संतुलन बनाया जा सकता है। 3. परिवार में संवाद और समझ की आवश्यकता,इस एकांकी ने समाज को यह सिखाया कि परिवार में संवाद और आपसी समझ

अति आवश्यक है। यदि परिवार के सदस्य एक-दूसरे की भावनाओं को समझें और खुले मन से बातचीत करें, तो कई समस्याओं का समाधान संभव है। 4. समाज में पारिवारिक मूल्यों की पुन:स्थापना,''सूखी डाली'' ने समाज में पारिवारिक मूल्यों को पुन: स्थापित करने में सहायता की है। इसने समाज को यह सोचने पर मजबूर किया कि परिवार केवल खून के रिश्तों से नहीं, बल्कि आपसी प्रेम और सहयोग से चलता है। 5. संयुक्त परिवार बनाम एकल परिवार पर चर्चा,इस एकांकी ने समाज में संयुक्त परिवार और एकल परिवार की तुलना को लेकर तर्क-वितर्क को जन्म दिया। कुछ जनसाधारण ने इसे संयुक्त परिवार की श्रेष्ठता के रूप में देखा, जबकि कुछ ने इसे एकल परिवार की स्वतंत्रता की ओर संकेत माना।



अपनी प्रगति जाँचे

प्रश्न-4. बेला ने परिवार में सामंजस्य कैसे स्थापित किया?

प्रश्न-5. इंदु का चरित्र एकांकी में किस प्रकार का प्रतिनिधित्व करता है?

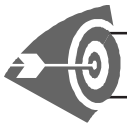
प्रश्न 6. 'सूखी डाली' का पारिवारिक संदेश क्या है?



14.6 सारांश

इस अध्याय के अंतर्गत आपने सूखी डाली एकांकी को विस्तार से पढ़ा। इस एकांकी के माध्यम से आपने संयुक्त परिवार की विशेषताओं को समझा और उसकी विशेषताओं को समझा है। एकल परिवार 'वट वृक्ष' की टूटी हुई डाली की भांति होता है जो अंतत: सूख जाती है। एकांकी का कथानक संवादात्मक रूप से आगे बड़ता है। पाठक इसके अध्ययन से आरंभ से अंत तक बंधा रहता है। कथानक सरल, प्रभावपूर्ण और उद्देश्य को व्यक्त करने वाला है। पात्र योजना संयुक्त परिवार की विशेषताओं को उजागर करने में सक्षम है। एकांकी के संवाद संक्षिप्त, रोचक एवं कथानक को आगे बढ़ाने वाले हैं। सूखी डाली एकांकी में अभिनेयता के तत्व विद्यमान हैं। इस एकांकी का मंचन कुशलतापूर्वक किया जा सकता है। अत: इस एकांकी का मंचन अनेक बार सफलता पूर्वक किया भी गया है। एकांकी का उद्देश्य संयुक्त परिवार के महत्व को रेखांकित करने के साथ-साथ संयुक्त परिवार में आने वाली समस्याओं की ओर संकेत करना भी है। एकांकी का शीर्षक प्रतीकात्मक होने के साथ-साथ पूर्णत: सार्थक भी है। एकांकी में संयुक्त परिवार के परिवेश को जीवंत किया गया है। भाषा की दृष्टि से भी यह एकांकी पूर्णत: सफल एकांकी है। इसमें पात्रों

की मनोदशाओं एवं परिस्थितियों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। अत: यह कहना सार्थक होगा कि एकांकी कला के तत्वों के आधार पर एकांकी पूर्णत: सफल एकांकी है।



14.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर:- एकांकी के पहले दृश्य में इंदु बिफरी हुई इसलिए दिखाई देती है क्योंकि वह अकेली. ही घर में सबसे ज्यादा पढ़ी-लिखी है। दूसरा उसके दादा जी उससे बहुत प्यार करते हैं। वह सबकी लाडली बनी हुई है। अधिक जानने के लिए ऊपर पढ़ें।

प्रश्न 2 का उत्तर:- कर्मचंद ने दादा जी को छोटी बहु बेला के विषय में बताया कि उसके मन में बहुत अभिमान है। वह मायके के घराने को ससुराल से ज्यादा ऊँचा समझती है और इस घर को घृणा की दृष्टि से देखती है। शायद इसलिए उसने मलमल के थान और रजाई के अबरे नहीं रखें। ज्यादा जानने के लिए आप ऊपर देख सकते है।

प्रश्न 3 का उत्तर:- दादा मूलराज विवेकशील, समझदार और परिवार को एकजुट रखने वाले मुखिया के रूप में हैं। इसके बारे में अधिक जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 4 का उत्तर:- बेला ने अपनी शिकायतें व्यक्त कीं और सभी सदस्यों ने उसे बराबरी का सम्मान देकर उसे परिवार में समायोजित किया।और अधिक जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 5 का उत्तर:- इंदु पारंपरिक और आधुनिक विचारों के संघर्ष को दर्शाती है, जो परिवार के भीतर संतुलन बनाने में मदद करती है। अधिक विस्तार जानने के लिए इस इकाई को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर:- परिवार में सामंजस्य, संवाद और परस्पर सम्मान से ही संबंध मजबूत रहते हैं और टूटने से बचाए जा सकते हैं। इस विषय पर और जानकारी के लिए इस इकाई को पढ़ें।



14.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- अश्क, उपेंद्रनाथ. (1960). सूखी डाली. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- नागेन्द्र, डॉ. (1990). आधुनिक हिन्दी साहित्य में आलोचना का विकास. नई दिल्ली: एम. चंद एंड कम्पनी।
- प्रेमलता. (2005). आधुनिक हिन्दी नाटक की भाषा में सर्जनात्मक क्षमता के विकास का अध्ययन. इलाहाबाद: हिन्दी विभाग, इलाहाबाद

विश्वविद्यालय।

- शर्मा, पी. (1988). संयुक्त परिवार और हिन्दी नाटकों का सामाजिक प्रभाव. लखनऊ: सृजन प्रकाशन।
- वर्मा, आर. (2002). हिंदी एकांकी: इतिहास और समीक्षा. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
- मिश्रा, एस. (2010). उपेन्द्रनाथ अश्क का नाट्य साहित्य. पटना: भारत अध्ययन केंद्र।
- गुप्ता, एम. (1995). हिंदी नाटकों में पारिवारिक संघर्ष. कानपुर: ज्ञानदीप प्रकाशन।
- तिवारी, ए. (2008). आधुनिक हिन्दी नाट्यकार और उनके संवाद. भोपाल: साहित्य अकादमी।
- राणा, के. (2012). हिंदी समाज नाटकों में संयुक्त परिवार की भूमिका. जयपुर: सूर्या प्रकाशन।
- झा, आर. (2000). सूखी डाली और सामाजिक संदर्भ. पटना: सृजन साहित्यिक संस्थान।

14.9 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. उपेंद्रनाथ अश्क की प्रमुख एकांकियों के नाम लिखिए।
2. 'सूखी डाली' एकांकी के पात्र कौन-कौन से हैं?
3. इस एकांकी का मुख्य उद्देश्य क्या है?
4. उपेंद्रनाथ अश्क का साहित्यिक परिचय बताइए।
5. दादा मूलराज का चरित्र किस प्रकार परिवार को जोड़े रखता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. ''सूखी डाली'' एकांकी ने समाज पर किस प्रकार प्रभाव डाला है?
2. संयुक्त परिवार और एकल परिवार की तुलना करते हुए बताइए कि आप किस परिवार स्थिति को उचित समझते हैं।
3. 'सूखी डाली' एकांकी की कथावस्तु का विश्लेषण कीजिए।
4. आप इस एकांकी से क्या सामाजिक और मनोवैज्ञानिक शिक्षा प्राप्त करते हैं?
5. इस एकांकी में संवाद और प्रतीकात्मकता का क्या महत्व है?

******

KRISHNA KANTA HANDIQUI STATE OPEN UNIVERSITY
Headquarter : Patgaon, Rani, Guwahati - 781017, Assam, India
City Office: NH 37, Resham Nagar, Khanapara, Guwahati-781022, Assam, India
Tel. : 0361-2235971 / 2234964, Fax : 0361-2235398
Website : www.kkhsou.in

Printed at : R.R. Graphics, Rajgarh Road, Byelane:03, H.no. 15, Guwahati-781003